दिसम्बर 2014 वर्ष 42 अंक 12 ₹40

युवादृष्टि

कथा बोध

दूसरों पर अनुशासन करने वाला पहले स्वयं पर
अनुशासन करे तो व्यवस्था सम्यक् हो सकती है।

आचार्य महाश्रमण

श्रद्धानिष्ठ श्रावक

एच. अनराज जी गादिया

1951 – 2008

(चेन्नई व गादाणा)

आपकी संघीय श्रद्धा-भक्ति, सामाजिक उदारता
एवं कर्मठ-कर्तृत्वशीलता हमारी सतत प्रेरणा

श्रीमती सुशीलाबाई अनराजजी गादिया
श्रीमती रेखा एवं ए. निर्मल गादिया
&
Deccan Group of Companies

मेरे जीवन के ये पृष्ठ,
स्वयं मेरे ही द्वारा सृष्ट।
चबाया, पाया जो भी ग्रास,
बना वह जीवन का इतिहास।।

बना हूँ पग-पग पर मैं ज्ञेय,
रहा हूँ अब तक भी अज्ञेय।
कैसे बन पाऊँ मैं मित्र,
दृश्य है वह तो मेरा चित्र।।

मुकुर तो लेता है प्रतिबिम्ब,
आम कब बन पाया है निम्ब।
मानस होता है जब खिन्न,
स्वयं तब चुनता है पथ भिन्न।।

आचार्य महाप्रज्ञ

अनुक्रम

महाप्रज्ञ का कथा संसार 05

न करने का परिणाम 04

प्रेरणा से बदलें जीवन को 11

संपादकीय 3
संस्कारों की रोशनी 15
स्वतंत्रता के धनी 16
पक्षियों के राजा पदियों की सूझबूझ 18
बचपन 20
आत्म विश्वास है विजय 22
बंधन से मुक्ति 23
अंतिम इच्छा 24
काँच की बरनी और दो कप चाय 25
रिश्तों की नजाकत 26
दूरदृष्टि 27
डायमंड रिंग 28
रिश्तों की पूँजी 30
उचित शुल्क 30
खानखाना की विनम्रता 30
चोट सही जाती है, कही नहीं जाती 31
अपना-अपना स्वभाव/कानून का पालन 31
सच्चा आनंद/अहंकार की गति 32
खिचड़ी का मर्म 32
विवेक से लें निर्णय 33
कुशल कलाकार 33
अच्छी नौकरी 33
फूलों को क्या हो गया? 34
अबला पतंग / एक अमर गाथा 37
तरक्की की चाहत में 38
क्या बात है। 43
अनोखी तरकीब 45
गूदड़ साईं 47
उपयोगिता 47
पूत के पग पालणे में 49
दया का भाव ही क्षेष्ठता का गुण 49
कोई अन्याय नहीं किया 51
जलेबी 53
बच्चों को सरल तरीके से समझायें 59

अब तो जागें

41 चौर्य कर्म को त्यागें

क्रिसमस पर विशेष

44 खुशियाँ बाँटिए, खुशियाँ मिलेंगी

काव्य प्रवाह

55 अब जागो/कहानी एक अजन्मी की

प्रबन्धन सूत्र

57 कहानी एक : कॅरियर मंत्र अनेक

युवादृष्टि नयी सृष्टि का प्रतीक मासिक
वर्ष : 42, अंक : 12, दिसम्बर 2014

संपादकीय

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में निर्धारित नियम अथवा परंपरागत संस्कार-व्यवहार आदि पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलते रहते हैं। समय-समय पर अपेक्षानुसार बदलाव होना भी स्वाभाविक है। यह बदलाव आधुनिकता और विकास के रूप में चलता रहता है। मनुष्य के जीवन पर उसके वातावरण का बहुत प्रभाव पड़ता है। अपने जीवन में होने वाली किसी भी घटना से वह प्रेरणा लेकर अपने जीवन की दिशा बदल सकता है। यह प्रेरणा गुरुजनों के सम्पर्क में आने से, उनके द्वारा प्रदत्त जीवनशैली अपनाने से या फिर कथा-कहानियों के रूप में सत्साहित्य पढ़ने से किसी भी प्रकार से ग्रहण की जा सकती है। अर्थात् जिस प्रकार की संगति होगी उसी प्रकार से व्यक्ति व्यवहार प्रदर्शित करता है।

कुछ वर्षों पहले तक संयुक्त परिवारों में दादा-दादी, नाना-नानी अपने नाती-पोतों को पौराणिक कथाओं अथवा घटनाओं से प्रेरित करते थे। बुजुर्ग जाने-अनजाने में होने वाली घटनाओं को प्रेरणादायी बनाकर बच्चों को सुनाते थे, जिससे मनोरंजन के साथ-साथ बड़े-बुजुर्गों का अनुभव बच्चों के शुभ भविष्य के लिए मार्ग प्रशस्त करता था।

भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति में अनगिनत लोगों ने अपनी सक्रिय सहभागिता दर्शायी थी। जिसमें महात्मा गाँधी, बाल गंगाधर तिलक आदि अनेकों नाम इतिहास के रूप में प्रेरणादायी हैं। सरदार भगत सिंह, चंद्रशेखर आजाद, अशफाक आदि क्रांतिकारियों ने भी अपने प्राणों की आहुति दी। इन महापुरुषों की जीवनी पढ़कर आज की पीढ़ी प्रभावित हुए बिना नहीं रहती। नेताजी सुभाष चन्द्र बोस का वो नारा उस समय बहुत प्रचलित हुआ था, जिसमें उन्होंने देशवासियों से अपील की थी, कि 'तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा।' इनकी प्रेरणा से ही आजाद हिन्द फौज का गठन हुआ था।

भारत का पौराणिक इतिहास ऋषि-मुनियों की जीवनी से प्रेरित करता है। आज भी गुरुजन अपने प्रवचनों में ऐतिहासिक घटनाओं का उल्लेख करते रहते हैं। जिससे आज की पीढ़ी इतिहास की जानकारी के साथ-साथ, अपने वर्तमान व शुभ भविष्य की दिशा निर्धारित कर सकती है।

प्रस्तुत अंक इन्हीं सब प्रेरणादायी प्रवचनों एवं कथाओं का संकलन है। आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि सभी प्रबुद्ध पाठकगण अवश्य लाभान्वित होंगे।

अविनाश नाहर

सम्पादक: अविनाश नाहर ❖ कार्यकारी सम्पादक: सुधीर चौरड़िया ❖ सह-सम्पादक: नवीन बाँठिया ❖ लेजर टाइपसेटिंग: क्लासिक ऑफसेट ❖ कवर: मुदित जैन सुराणा

कार्यालय
210, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली-110002

प्रकाशक
अखिल भारतीय तेरापंथ युवक परिषद्, युवालोक, पो. लाडनूं-341306 (राज.)

'युवादृष्टि' में प्रकाशित सामग्री से संपादक की सहमति होना आवश्यक नहीं है। राजस्थान सरकार द्वारा पुस्तकालयों के लिए स्वीकृत

'युवादृष्टि' में प्रकाशित सामग्री का उपयोग प्रकाशक, सम्पादक, लेखक की अनुमति के बिना अन्य कहीं भी प्रकाशन में न करें।

शुल्क
वार्षिक : 900 रु.
15 वर्षीय : 3500 रु.

न करने का परिणाम

आचार्य तुलसी

चौधरी और साधु

मन को कैसे साधा जाता है? इस सन्दर्भ में पूज्य कालूगणी एक जाट का उदाहरण दिया करते थे। गाँव में जाट रहता था। वह खेती करता और अपने परिवार का पालन-पोषण करता। एक बार उस गाँव में साधु आ गए। गाँव में थोड़ी देर ठहर वे आगे चले। पर रास्ता भूल गए। उन्होंने इधर-उधर देखा। खेत में वह जाट खड़ा था। साधु उसके पास गए और बोले—'चौधरी! क्या कर रहे हो?' जाट ने कहा—'खेत में काम कर रहा हूँ।' साधु बोले—'भाई! हम रास्ता भूल गए। तुम रास्ता बता सकते हो क्या?' जाट ने कहा—''मैं अपना खेत सम्भालूँ या तुमको रास्ता बताऊँ।'' साधु बोले—'भाई! खेत तो सम्भालते ही हो। साधु रास्ता पूछने कब-कब आते हैं?'

साधुओं की बात सुन जाट का मन बदला। वह रास्ता बताने के लिए तैयार हो गया। खेत छोड़कर वह साधुओं के पास आया। उन्हें नंगे पाँव देखकर वह बोला—'रास्ता यहाँ से दूर है। बीच में काँटे बिखरे पड़े हैं। तुम्हारे पाँव में जूते भी नहीं हैं। कैसे चलोगे?' साधुओं ने कहा—'इसीलिए तो हम तुमसे रास्ता पूछ रहे हैं।'' जाट कुछ सोचकर बोला—'ऐसा करो, आगे-आगे मैं चलता हूँ। तुम मेरे पीछे-पीछे आ जाओ।' कभी नाव गाड़े में और कभी गाड़ा नाव में—इस कहावत के अनुसार साधु जाट के पीछे हो गए। चलते-चलते वे सही रास्ते पर पहुँच गए। जाट वहाँ खड़ा हो गया और बोला—'यह रास्ता नाक की डाँडी की तरह सीधा है। कहीं मुड़े बिना सीधे चले जाओ।'

ज्ञान की बात बताओ

जाट रास्ते के एक ओर खड़ा रह गया। साधुओं को वहाँ से आगे जाना था। वे बोले—'भाई! तुमने अपना काम छोड़ हमें रास्ता बताया। तुमको कोई असुविधा तो नहीं हुई?' जाट जूते उतारकर साधुओं के निकट आकर बोला—'पाय लागूँ महाराज! मैंने तुमको रास्ता बताया, तुम मुझे ज्ञान की बात बताओ।' साधु वहाँ खड़े हो गए। वे बोले—'मनुष्य चोला बड़ी मुश्किल से मिलता है। इसे पाकर सत्करणी की जाए तो कल्याण हो जाता है। झूठ नहीं बोलना, चोरी नहीं करना, किसी की जमीन को नहीं छीनना, हत्या नहीं करना आदि अनेक बातें हैं। तुम इन्हें स्वीकार कर अपना जीवन सुधार सकते हो।'

मन का गुलाम नहीं बनना

जाट ने साधुओं की बात सुनकर कहा—'महाराज! मैं बणिया नहीं, जाट हूँ। पढ़ा-लिखा नहीं हूँ। मेरे लिए काला अक्षर भैंस बराबर है। इतनी सारी बातें मुझे याद नहीं रहेंगी। तुम मुझे सीधी-सी एक उपरारि पकड़ा दो। मैंने तुमको सीधा रास्ता बताया है। तुम भी सीधी बात बताओ।' साधु बोले—'भाई! तुम्हें एक बात पकड़ा देंगे, पर वह है बहुत कठिन।' जाट ने कहा—'कठिन-वठिन कुछ भी हो। जिसे पकड़ लूँगा, छोड़ूँगा नहीं।' जाट का उत्साह देख साधु बोले—'चौधरी भाई! एक छोटी-सी बात है, मन का गुलाम नहीं बनना, मन के चलाए नहीं चलना। मन आदमी का गुलाम है। वह आदमी को गुलाम बनाए, यह अच्छी बात नहीं है। घर का मालिक कभी गुलाम बनता है क्या?, जाट ने इस सूत्र को अच्छी तरह पकड़ लिया। कृष्णमूर्ति के निर्विचार ध्यान की बात उसे इतनी सरलता से समझाई गयी कि वह उसके दिल को छू गयी।

मन पर विजय की यात्रा

साधु जाट को कल्याण का एक रास्ता बताकर आगे बढ़ गए। जाट को अपने खेत लौटना था। उसने सोचा—जूते पहनूँ और चलूँ। जूते पहनने की बात मन में आ गई। नहीं पहनूँगा। खेत में जाऊँ—यह बात कौन कहता है? मन। मन कहता है तो नहीं जाना मुझे खेत में। जाट खड़ा रहा। मच्छर काटने लगे। मच्छर उड़ाने की बात मन में आ गयी। नहीं उड़ाए। थोड़ी देर बाद वहाँ धूप आ गयी। धूप सताने लगी। पास ही नीम का वृक्ष था। उसकी छाँव में जाकर खड़े होने की इच्छा हुई। पर उसे इच्छा का गुलाम नहीं बनना था। वह वहाँ से दो कदम भी नहीं हटा।

उधर चौधराइन 'भाता' लेकर खेत आयी। खेत खाली पड़ा था। उसने आवाज दी। कोई नहीं बोला। वह इधर-उधर खोज करती हुई वहाँ पहुँच गई। जाट को पुकारा। वह बोलने के लिए उद्यत हुआ, पर नहीं बोला। बोलने की प्रेरणा मन की थी। चौधराइन उसके निकट आई। वह निश्चल खड़ा था। बार-बार बुलाने पर भी नहीं बोला। उसने कहा—'खेत में पशु चर रहे हैं। तुम यहाँ खड़े-खड़े क्या कर रहे हो? जाट मौन रहा। चौधराइन ने आसपास के लोगों को इकट्ठा किया। उन्होंने भी कोशिश की। पर चौधरी नहीं बोला। सब लोग चिन्तित हो गए। किसी ने कहा—लगता है भाँग ज्यादा चढ़ा ली। किसी ने कुछ कहा, किसी ने कुछ। जाट न बोला और न अपने स्थान से हिला। काफी लोग हताश होकर वहाँ से लौट गए।

मन मिटा : ज्ञान प्रकटा

जाट खड़ा है। न जप, न तप। न महाव्रत, न अणुव्रत। वह केवल खड़ा है। न हिलता है, न बोलता है और न कुछ करता है। मन में जितने विकल्प उठे, उनके साथ वह बहा नहीं है। धीरे-धीरे सब विकल्प शान्त। जाट निर्विचारता की स्थिति में पहुँच गया। उसे आनन्द का अनुभव हुआ। वह और गहराई में गया। शुक्लध्यानान्तरिका में प्रविष्ट हो वह समाधि की स्थिति में पहुँच गया। एक भयंकर विस्फोट हुआ। उसे केवलज्ञान की उपलब्धि हो गयी। यह है न करने का परिणाम। यदि वह मन के चलाए चलता, मन का गुलाम रहता तो इस स्थिति तक नहीं पहुँच पाता। व्यक्ति में जितनी क्षमता हो उतना ही अभ्यास करें। निर्विचारता की स्थिति में पहुँचा जा सकता है, इस आस्था के साथ अभ्यास को बढ़ाया जाए तो सफलता निश्चित है।

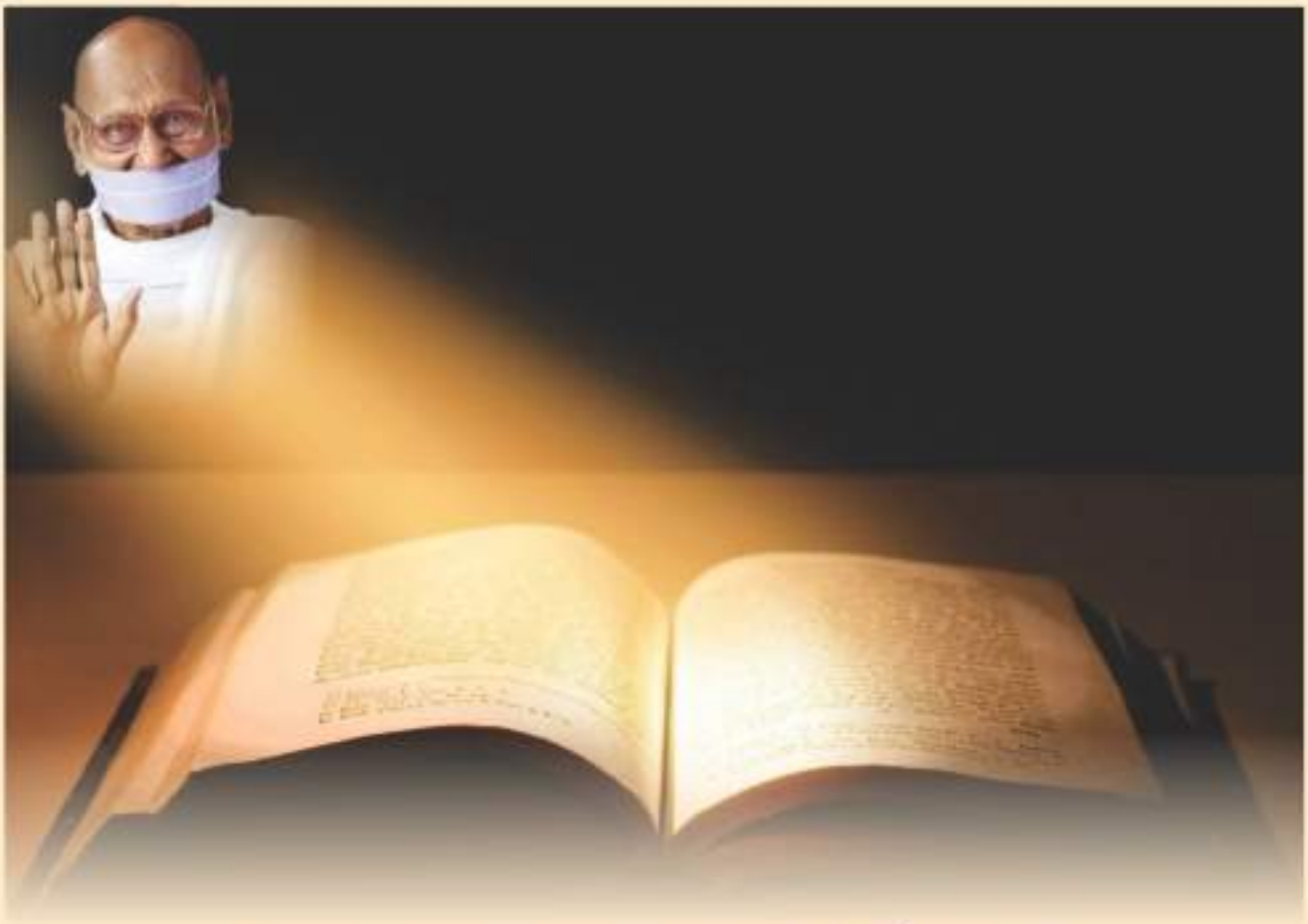

महाप्रज्ञ का कथा संसार

आचार्य महाप्रज्ञ

आचार्य महाप्रज्ञ अपने लेखों तथा प्रवचनों में कथा-प्रसंगों का बहुत प्रयोग करते थे यहाँ कुछ कथाओं का प्रकाशन किया जा रहा है।

जो सहता है, वही रहता है

एक व्यक्ति गुरु के पास आया और बोला, 'गुरुदेव, दुःख से छूटने का कोई उपाय बताओ।' बड़ा प्रश्न था। थोड़े शब्दों में बहुत बड़ा प्रश्न कि दुःखों की दुनिया में जीना और दुःख से छूटने का उपाय करना। बात छोटी नहीं थी, पर बहुत बड़ी थी।

गुरु ने बताया, 'एक काम करो, जो आदमी सबसे सुखी हो, उसका अंगरखा ले आओ, फिर दुःख से छूटने का उपाय मैं तुम्हें बता दूँगा।' वह गया, एक घर में जाकर पूछा, 'भाई, तुम तो सबसे सुखी हो?'

कोई न पूछे, तब तक सब ठीक है। तरंग न उठे, तब तक समुद्र शांत है। तूफान न आए, तब तक जल शांत है। बवंडर न उठे, तब तक सब ठीक है, किन्तु जब तूफान आता है, बवंडर आता है, तब तरंग ही तरंग हो जाती हैं।

मूल स्वभाव का पता ही नहीं चलता। प्रश्न न हो तब तक ही सब ठीक है, पर जब प्रश्न पूछा जाता है, ठीक बेठीक हो जाता है। उसने कहा, 'मेरा पड़ोसी इतना बदमाश है कि आए दिन मुझे सताता रहता है। भला, मैं कैसे सुखी हो सकता हूँ? मैं तो अत्यंत दुःखी हूँ।' वह दूसरे घर गया। दूसरा बोला, 'क्या बात पूछते हो? सुख की तो बात ही न करो। ऐसी कर्कशा पत्नी मिली है कि पूरा दिन सिर खाती रहती है। मेरे जीवन में तो सुख की कोई कल्पना ही नहीं की जा सकती।'

तीसरे के पास गया, चौथे के पास गया। किसी की पत्नी के पास गया तो वह पति को क्रूर बतलाती और पति के पास गया तो वह पत्नी को क्रूर बतलाता। पिता के पास गया तो वह पुत्र को बदमाश बतलाता। सैकड़ों-सैकड़ों घरों में घूमा, परिक्रमा करता चला गया, हजारों घरों के चक्कर लगाता रहा, लेकिन सब खुद को दुःखी बतलाते, कोई सुखी नहीं मिला।

बड़ा आश्चर्य हुआ। गुरु के पास आकर बोला, 'मैं तो घूमते-घूमते थक गया। आपने कहा था कि सबसे सुखी व्यक्ति का अंगरखा ले आना। सबसे सुखी की बात तो दूर, मुझे तो कोई सुखी व्यक्ति मिला ही नहीं।' गुरु ने कहा, 'क्यों दुःखी हैं? क्या दुःख है?' उसने कहा, 'किसी का पड़ौसी खराब, किसी का बेटा खराब,

किसी का बाप खराब, किसी का और कुछ खराब, हर आदमी दूसरे आदमी के कारण दुःख भोग रहा है।'

गुरु ने बताया, 'सुख का गुर है दूसरे की ओर नहीं बल्कि अपनी ओर झाँकना। यही सुख का उपाय है।'

वह बोला, 'इतनी छोटी बात आप पहले ही मुझे बता देते। क्यों मुझसे फालतू के चक्कर लगवाए? क्यों मुझे घुमाया? क्यों परिक्रमा करवाई?

गुरु ने कहा, 'सत्य दुष्पाच्य होता है, वह सीधा नहीं पचता। अगर मैं पहले ही यह बात कह देता तो तू हर्गिज नहीं मानता। जब स्वयं अनुभव कर लिया, सबकी परिक्रमा कर ली, सबके चक्कर लगा लिए, अब यह बात तेरी समझ में आ सकती है कि सब लोग दूसरों को देख रहे हैं और दूसरों को देखने के कारण दुःख का अनुभव कर रहे हैं। अब यह बात समझ में आएगी कि सत्य बहुत परिश्रम के बाद पचता है।'

कहानी बहुत मार्मिक है और इसका फलित भी बहुत मार्मिक है कि दूसरे को देखनेवाला कभी सुख का अनुभव नहीं करता। हर आदमी दुःख का अनुभव करता है। अपने आप नहीं करता, दूसरे के कारण दुःख का अनुभव करता है। शत-प्रतिशत दुःख का कारण है—दूसरा। बीमारी आती है, वह भी तो दूसरा है, अपनी तो है नहीं। बीमारी के कारण दुःख का अनुभव होता है, शत्रुता के कारण दुःख का अनुभव होता है, अप्रियता के कारण दुःख का अनुभव होता है, 'पर' के कारण दुःख का अनुभव होता है।

असंतुलन क्यों?

एक आदमी काशी में बारह वर्ष तक अध्ययन करने के बाद घर की ओर रवाना हुआ। गुरुकुल में शिक्षा पाई थी। पूँजी के नाम पर उसके पास रुपया-पैसा नहीं, मात्र ग्रंथ थे। वह अपने सभी व्याकरण ग्रंथ, संहिताएँ, चूर्णि लेकर रवाना होने लगा। उस समय सवारी और ट्रांसपोर्ट के साधन नहीं थे। उसने सारे ग्रंथ बोरे में भरकर बैल की पीठ पर रखे। दैनिक जीवन में इस तरह का कोई काम उसे कभी करना नहीं पड़ा था।

व्यावहारिक बुद्धि भी इतनी नहीं थी। बचपन से लेकर युवावस्था तक का सारा समय अध्ययन में बीता था। पता नहीं था कि घोड़े या बैल की पीठ पर सामान कैसे लादा जाता है। इसलिए बैल की पीठ पर पोथियों का भार तो रखा, किंतु संतुलन बनाने में असमर्थ रहा। अपनी बुद्धि से उसने एक उपाय निकाला। बैल की पीठ पर रखी गोड़ी के एक ओर तो पोथियों का भार था। दूसरी ओर संतुलन देने के लिए उसने स्वयं को प्रस्तुत किया। परिणाम यह हुआ कि बैल के साथ-साथ दूसरी ओर संतुलन बैठाने के प्रयत्न में वह घिसटने लगा। इस प्रयत्न में स्वाभाविक था कि उसे कष्ट और परेशानी उठानी पड़ रही थी, किंतु पोथियों का लोभ उसे विवश कर रहा था। आगे की जीविका इन्हीं पोथियों के द्वारा ही तो उपार्जित करनी थी।

एक बुद्धिमान आदमी ने उसे आधा बैल की पीठ पर और आधा जमीन पर घिसटते हुए देखा तो उसे सहानुभूति हो गई। सोचा लगता तो पंडित जैसा है, लेकिन काम गँवारों जैसा कर रहा है। उसने बैल को रोका और पूछा—''भाई, यह क्या कर रहे हो?'' पसीने से तरबतर उसने कहा—''देख नहीं रहे हो, अपनी पोथियों का भार ले जा रहा हूँ।''

''लेकिन इतने मूर्खतापूर्ण तरीके से क्यों ले जा रहे हो? भार बैल को ही ढोने दो, तुम क्यों ढो रहे हो?''

मूर्ख कहने से चिढ़ा वह पंडित बोला—''शिष्ट भाषा बोलना सीखो। मैं मूर्ख नहीं, काशी में बारह वर्ष तक अध्ययन कर चुका पंडित हूँ। भार मेरे ऊपर नहीं, बैल के ऊपर है। मैं तो सिर्फ संतुलन दे रहा हूँ।''

उस व्यक्ति ने कहा—''अध्ययन जरूर किया है पंडितजी आपने, लेकिन संतुलन बनाने की विद्या काशी में नहीं, गाँव में सीखनी पड़ती है। अभी आप इस कला से अनभिज्ञ हैं। आप एक ओर हटें तो संतुलन मैं बना देता हूँ।''

पंडित जी पता नहीं क्या सोचकर एक ओर खड़े हो गए तो उस व्यक्ति ने भार को दो हिस्सों में विभक्त किया और बैल की पीठ पर रखकर कहा—''अब आप आराम से बैल को हाँककर ले जाएँ इसके ऊपर लदा हुआ भार नीचे नहीं गिरेगा। बैल के ऊपर आपका अतिरिक्त बोझ भी नहीं पड़ेगा।''

पंडितजी को उस क्षण अपने अज्ञान का बोध हुआ। उनके मन में आया—सब कुछ काशी में ही नहीं सीखा जा सकता। कुछ गाँव-देहात में रहकर भी सीखना चाहिए।

संतुलन, यानी आधा-आधा पक्ष बराबर रहे। हम अपने जीवन के दो पक्षों को भी बराबर का महत्त्व दें। दोनों में संतुलन स्थापित करें। जो जीवन की आवश्यकता है, वह पदार्थ से पूरी होगी, आत्मा से नहीं होगी।

बंधन का कारण है आसक्ति

गुरु के आश्रम में दीर्घकाल तक शिक्षा पाने के बाद शिष्य के घर जाने की बेला आई। गुरु के उपकार के भार से दबे शिष्य ने अनुरोध किया—''गुरुदेव! गुरुदक्षिणा में आपको क्या दूँ।'' गुरु ने कहा—''मैं तुम्हारी सेवा से बहुत प्रसन्न हूँ। मुझे कुछ नहीं चाहिए।''

गुरु निराकांक्षी और निःस्पृह थे। आज के जमाने के होते तो मालदार आदमी का बेटा समझकर कोई बहुत बड़ी चीज माँग लेते। आज के गुरु माँग लेते हैं। साफ कह देते हैं कि इतने दिन पढ़ाया, अब क्या दे रहे हो? और बड़े घरों के लड़के अपने मास्टरजी को मुँहमाँगी चीज दे भी देते हैं।

लेकिन गुरुजी ने शिष्य को आश्वस्त करते हुए कुछ भी लेने से इन्कार कर दिया तो शिष्य विनीत भाव से बोला—''नहीं, कुछ तो माँगें ही। आपने बहुमूल्य विद्याएँ देकर मुझे उपकृत किया है। यहाँ से कुछ दिये बिना जाऊँ, इसे मेरी आत्मा स्वीकार नहीं कर रही है। कुछ तो माँगें।''

गुरु ने टालने की दृष्टि से कह दिया—''इस धरती पर जो व्यर्थ की चीज हो, वह तुम मुझे दे दो'' शिष्य विचार में पड़ गया। फिर भी कुछ सोचकर वह चल पड़ा। आश्रम से थोड़ी दूर आया होगा कि उसकी दृष्टि झाड़ी के तीखे काँटों पर पड़ी। उसने काँटों भरी एक टहनी तोड़ी और उसे लेकर गुरु के पास आया। बोला—''गुरुदेव!

ये काँटे इस धरती पर बिल्कुल अनुपयोगी हैं। आप इन्हें स्वीकारें।''

गुरु ने कहा—''काँटों को तुमने अनुपयोगी कैसे मान लिया? इनकी सुरक्षा में ही तो गुलाब जैसा फूल खिलता है। किसान काँटों की बाड़ लगाकर अपने खेत की सुरक्षा करते हैं। पैर में कभी काँटा चुभ जाए तो उस काँटे को काँटे के द्वारा ही निकाल जाता है। काँटे अनुपयोगी कैसे?''

शिष्य फिर चल पड़ा। कुछ दूर गया तो उसके विचार ने झटका खाया। मार्ग में धूल ही धूल थी। उसने धूल को उठाकर हथेली पर रखा और सोचा—पाँवों के नीचे रौंदी जाने वाली यह धूल किस काम की? शायद गुरुजी इसे स्वीकार कर लें। ऐसा सोचकर धूल उसने अपने उत्तरीय में बाँधी और गुरु के पास आया। मुट्ठी भर धूल गुरु के चरणों के समक्ष रखकर बोला—''इससे ज्यादा अनुपयोगी चीज और क्या होगी गुरुदेव?''

गुरु ने कहा—''यह तो मिट्टी का ही अंश है। मिट्टी को तुमने व्यर्थ क्यों समझा? जल का संयोग पाकर इसी धूल में बीज अंकुरित होता है। किसान इसी मिट्टी में तरह-तरह की फसल उगाता है। जल में मिश्रण कर इसी से मकान बनाए जाते हैं। मिट्टी के इन कणों से ज्यादा उपयोगी तो कुछ और हो ही नहीं सकता।''

शिष्य ने हार मान ली। उसने कहा—''आप ही बताएँ, मेरी तो समझ में नहीं आ रहा है।'' गुरु ने कहा—''अपने भीतर झाँको, कुछ अनुपयोगी और व्यर्थ की चीज जरूर मिल जाएगी।'' शिष्य ने कहा—''यह देहाभिमान व्यर्थ की चीज है।'' गुरु ने शिष्य के सिर पर हाथ रख दिया। बोले—''हाँ वत्स! यह सचमुच व्यर्थ की चीज है। इसे मुझे दे दो।''

धर्म बाहर नहीं, भीतर है

एक आदमी किसी महात्मा के पास गया और बोला—''मैं धर्म को समझना चाहता हूँ।'' धर्म और सुख कोई दो अलग चीजें नहीं हैं। मैं तो मानता हूँ जो व्यक्ति धर्म करता है और धर्म करने के क्षण में सुख का अनुभव नहीं करता, उसे सोचना पड़ेगा कि मैंने धर्म किया या धर्म के नाम पर कुछ और किया। यह निश्चित बात है कि जिस क्षण आदमी धर्म करे, उस क्षण उसे सुख का अनुभव करना ही चाहिए।

महात्मा के सामने जब उस व्यक्ति ने कहा कि मैं धर्म को समझना चाहता हूँ तो उन्होंने उसकी ओर ध्यान से देखा। गुरु और पहुँचे हुए महात्मा विचित्र प्रकृति के होते हैं। वे भी पहुँचे हुए सिद्ध महात्मा थे। उन्होंने कहा—''धर्म क्या है, यह छोटी-सी बात मैं नहीं कोई भी तुम्हें बता देगा।'' वह आदमी बोला—''आप बताएँ कि मैं किसके पास आऊँ?''

महात्मा जी ने कहा—''प्रश्न इतना आसान है कि तुम्हें कहीं दूर जाने की जरूरत नहीं। मेरे आश्रम की उत्तर दिशा में थोड़ी दूर जाने पर तुम्हें एक तालाब मिलेगा। उस तालाब के किनारे तुम बैठ जाना और उसमें तैरती मछली से तुम यह सवाल पूछना जो मुझसे पूछ रहे हो।'' महात्माजी की बात बहुत अटपटी लगी। स्वयं तो बता नहीं रहे हैं और कह रहे हैं कि तालाब की मछली से पूछो। लेकिन महात्मा पर पूरा विश्वास था। थोड़ी दूर जाने की ही तो बात थी। महात्माजी की सच्चाई का भी चल जाएगा। ऐसा सोचकर वह चल पड़ा। तालाब के किनारे पहुँचा तो उसमें तैरती मछली को अभिवादन कर बोला—''यहाँ से थोड़ी दूर पर जो आश्रम है, वहाँ के महात्माजी ने मुझे तुम्हारे पास भेजा है अपने प्रश्न का उत्तर पाने के लिए। मैं धर्म को समझना चाहता हूँ।''

मछली ने कहा—''वे मेरे गुरु हैं। उन्होंने आदेश दिया है तो मैं धर्म तुम्हें समझाऊँगी, लेकिन उससे पहले तुम मेरा एक काम करो। मुझे बहुत प्यास लगी है। कहीं से एक गिलास पानी लाकर मुझे पिलाओ।''

मछली द्वारा पानी पिलाने की बात सुनकर उस व्यक्ति का धैर्य जवाब दे गया। कहीं यह मछली विनोद तो नहीं कर रही है। दिन-रात पानी में रहकर भी यह स्वयं को प्यासी बता रही है।, यह मजाक नहीं तो और क्या है? उसने अपनी अप्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा—''मछली! मैं तुम्हारे पास अपनी जिज्ञासा शांत करने आया था। तुम मेरा उपहास कर रही हो। पानी से भरा इतना विशाल तालाब और तुम अपने को प्यासी बता रही हो?''

मछली ने गंभीरता से कहा—''तुम्हारे भीतर तो इससे कई गुना विशाल सरोवर है, फिर तुम्हें धर्म की प्यास क्यों है? धर्म तो तुम्हारे भीतर है और उसे तुम बाहर खोज रहे हो। इसी स्थान पर ध्यान लगाकर बैठ जाओ और अपने भीतर देखने का प्रयत्न करो, तुम्हारे प्रश्न का उत्तर तुम्हें मिलना शुरू हो जाएगा। धर्म को समझने के लिए तुम्हें कहीं बाहर भटकने की जरूरत नहीं। उस व्यक्ति को संबोध मिल गया। धर्म है अपने भीतर की पवित्रता। अपनी वाणी की पवित्रता, अपने भावों की पवित्रता, अपने मन की पवित्रता। बाहर न तो धर्म मिलेगा, न सुख मिलेगा। आदमी विचित्र है कि जहाँ है वहाँ तो खोजता नहीं और जहाँ नहीं है, वहाँ खोज करता है। बिल्कुल उस कस्तूरी मृग की तरह। कबीरदासजी ने कहा—

कस्तूरी कुंडल बसै, मृग ढूँढै बन माहि।
ऐसे घट में ईस है, दुनिया जानै नाहि।।

गुरु कराता है पहचान

आयुर्वेद के महान आचार्य चरक के आश्रम में रहकर दीर्घकाल तक रोगों और औषधियों पर गहन अध्ययन करने के उपरांत शिष्य के विदा होने का समय आया। उन्हीं दिनों शिष्य की पीठ पर एक व्रण हो गया। उसने तमाम औषधियों का प्रयोग किया, किंतु कोई लाभ न हुआ। चरक ने उससे कहा—''तुम स्वयं औषधि की खोज करो। इतने दिन-तक मेरे साथ रहकर औषधियों का ज्ञान प्राप्त किया। तुम स्वयं निष्णात हो। मैं इतना ही मार्गदर्शन कर सकता हूँ कि आश्रम से उत्तर दिशा की ओर जाओ, शायद अभीप्सित औषधि तुम्हें मिल जाए।''

शिष्य चल पड़ा उत्तर दिशा की ओर। उसने उस दिशा के वन-प्रांतरों को छान डाला, किंतु उपयुक्त औषधि नहीं मिली। क्लांत, थका-हारा, निराश शिष्य कई दिन के बाद लौटा तब तक उसका व्रण बहुत विस्तार ले चुका था। पीड़ा से विह्वल शिष्य ने निराश स्वर में कहा—''दुर्भाग्य गुरुदेव! उपयुक्त औषधि की गवेषणा में मैं

शिष्य की हालत देख महर्षि चरक को दया आई! वे बोले—''ओ हो, यह औषधि तो आश्रम के पिछवाड़े वाटिका में ही मिल जानी चाहिए।'' ''इतना कहकर वे तेजी से गए और एक वनस्पति की कुछ पत्तियाँ तोड़ लाए। वहीं सिला पर उसके पत्तों को घिसकर वह लेप उन्होंने शिष्य के व्रण पर लगा दिया। आश्चर्य! व्रण उसी समय ठीक होने लगा और दूसरे दिन वह बिल्कुल ठीक हो गया।''

शिष्य ने दुःखी स्वर में कहा—''औषधि जब इतनी पास में थी तो सघन वन-प्रान्तरों में मुझे आपने इतने दिन तक क्यों दौड़ाया, भटकाया?''

चरक ने कहा—''अगर न भेजता तो इतनी औषधियों का परीक्षण, दो-चार दिनों में तुमने जो किया, उनके गुणधर्म का ज्ञान तुम्हें कहाँ से होता?'' गुरु की कृपा और उनके वरदान से अभिभूत शिष्य गुरु के चरणों में प्रणत हो गया।

संतोष नहीं है

सौराष्ट्र की घटना है। एक आदमी ने लॉटरी के एक-एक रुपये के दो टिकट खरीदे। इसमें उसके मात्र दो रुपये खर्च हुए। संयोग या किस्मत की बात, उस व्यक्ति की एक टिकट पर पाँच लाख रुपये की लॉटरी निकल आई। बेचारा साधारण मजदूर था। उसके साथ कुछ और साथी मजदूरों ने टिकट खरीदे थे। ड्रा निकला तो सबने अपने-अपने नंबर मिलाने शुरू किए। उसने अपने साथी का नंबर देखा। उसकी लॉटरी निकल आई थी। उन्होंने सोचा—हम भाग्यशाली नहीं थे, लेकिन हमारा साथी तो भाग्यशाली निकला। चलो उसके घर चलकर उसे बधाई देते हैं। पाँच लाख रुपये की लॉटरी निकली है तो खिलाने-पिलाने में आज वह कोई कोर-कसर नहीं रखेगा। सब उसके घर गए, लेकिन घर पर सन्नाटा था। वह व्यक्ति चौपाल में चारपाई पर चादर से अपना मुँह ढके सो रहा था। सबने सोचा कि उसे पता नहीं चल पाया है। उन्होंने उसे जगाया और कहा—''तुम सो रहे हो, आज लॉटरी का ड्रा निकला है। तुमने अपना नंबर देखा?''

''देख लिया।'' उस आदमी ने बुझे मन से कहा।

''तुम लखपति बन गए। पाँच लाख रुपये की तुम्हारी लॉटरी खुली है।'' लोगों ने एक साथ कहा।

''तभी तो जी जलाने के लिए सब लोग एक साथ आए हो।'' उस व्यक्ति के चेहरे पर निराशा के भाव थे।

''अरे, पाँच लाख रुपये कम होते हैं क्या? बीस रुपये की दिहाड़ी पर दिन भर पसीना बहाते हो।'' लोगों ने बड़ी हैरानी से कहा।

''पाँच की बात छोड़ो, मेरा एक रुपया व्यर्थ गया। खुशी तो तब होती जब दोनों टिकटों पर इनाम उठता। मैंने कितना बड़ा घाटा उठाया, अफसोस इसका है।''

यह पदार्थ जगत के चिंतन का परिणाम है। यहाँ पाँच लाख रुपये प्रसन्नता नहीं देते, एक रुपया दुःख देता है। मन की चपलता राई को पहाड़ और पहाड़ को राई बना देती है। आवेश इतने ज्यादा हैं कि आदमी स्वयं को सँभाल नहीं पाता और उनके प्रवाह में बह जाता है।

एकाग्रता है जरूरी

एक आदमी को किसी ने सुझाव दिया कि दूर से पानी लाते हो, क्यों नहीं अपने घर के पास एक कुआँ खोद लेते? हमेशा के लिए पानी की समस्या से छुटकारा मिल जाएगा। सलाह मानकर उस आदमी ने कुआँ खोदना शुरू किया।

दिन भर खोदा लेकिन सात-आठ फुट खोदने के बाद उसे पानी तो क्या गीली मिट्टी का भी चिन्ह नहीं मिला। उसने वह जगह छोड़कर दूसरी जगह खुदाई शुरू की। लेकिन दस फीट खोदने के बाद भी उसमें पानी नहीं निकला। उसने तीसरी जगह कुआँ खोदा, लेकिन यहाँ भी निराशा ही हाथ लगी। इस क्रम में उसने आठ-दस फीट के दस कुएँ खोद डाले, पानी नहीं मिला। वह निराश होकर उस आदमी के पास गया, जिसने कुआँ खोदने की सलाह दी थी। उसे बताया कि मैंने दस कुएँ खोद डाले, पानी एक में भी नहीं निकला। उस व्यक्ति को आश्चर्य हुआ।

वह स्वयं चलकर उस स्थान पर आया, जहाँ उस अज्ञानी आदमी ने दस गड्ढे खोद रखे थे। उनकी गहराई देखकर वह समझ गया। बोला—''दस कुएँ खोदने की बजाए एक कुएँ में ही तुम अपना सारा परिश्रम और पुरुषार्थ लगाते तो पानी कब का मिल गया होता। तुम हर बात को गहराई से समझने की आदत डालो और सब गड्ढों को बंद कर दो और केवल एक को गहरा करते जाओ, पानी निकल आएगा।''

खट्-खट् चलती रहेगी

गाँव की कहानी है। ठाकुर साहब घोड़े पर जा रहे थे। घोड़ा प्यासा था। तभी उन्हें खेतों की सिंचाई करता एक किसान दिखाई दिया। वह रहट से पानी निकाल रहा था। ठाकुर साहब घोड़े को रहट के पास ले गए। किंतु रहट से आती खट्-खट् की आवाज से घोड़ा चमक रहा था। ठाकुर साहब ने किसान से कहा—''थोड़ी देर तुम यह खट्-खट् बंद कर दो तो मेरा घोड़ा पानी पी ले।'' किसान ने आदेश का पालन किया, किंतु यह क्या? रहट के बंद होते ही उसमें से पानी आना भी बंद हो गया। दरअसल रहट, जो पानी निकालने का यंत्र है, उसके चक्के में एक लीवर लगा रहता है जो रहट को बैक या पीछे होने से रोकता है। जैसे ही चक्के की तीली आगे बढ़ती है, लोहे का यह लीवर खट् की आवाज के साथ आगे वाली तीली पर अपनी पकड़ मजबूत बना लेता है और चक्के को पीछे लौटने से रोकता है।

ठाकुर साहब ने किसान से कहा—''मैंने तुम्हें खट्-खट् की आवाज बंद करने के लिए कहा था, पानी बंद करने के लिए नहीं। तुमने तो रहट ही रोक दी।''

किसान ने कहा—''ठाकुर साहब, आप रहट की प्रक्रिया से शायद परिचित नहीं हैं। इसमें पानी तभी निकलेगा, जब यह खट्-खट् चलती रहेगी। यह आवाज बंद हुई तो पानी भी बंद हो जाएगा।''

क्रेता-विक्रेता

गधों पर सामान ढो रहा वह आदमी सड़क मार्ग से जा रहा था। किसी ने पूछा—''क्या सामान है भाई, बेचोगे?''

उसने कहा—''नहीं, यहाँ नहीं, शहर में ले जाकर बेचूँगा।''

''सामान क्या है, यह तो बताओ।''

''सब पर अलग-अलग सामान है। किसी पर लदा है अहंकार, किसी पर आचारशिथिलता, किसी पर भ्रष्टाचार, किसी पर बेईमानी, किसी में ईर्ष्या और सबसे आगे जा रहे गधे पर है अनैतिकता।''

''इन चीजों को खरीदेगा कौन?'' उस आदमी ने आशंका व्यक्त की। गधे वाले ने कहा—''तुम कह रहे हो खरीदेगा कौन, यहाँ मैं सप्लाई नहीं कर पा रहा हूँ, इतनी माँग है। शहर वालों से एडवांस ले रखा है, वहीं ले जा रहा हूँ। पहुँचते ही सारा माल हाथों-हाथ बिक जाएगा।''

माल बेचकर गधेवाला वापस लौटा तो फिर वही आदमी मिला। बोला—''इतना जल्दी बेचकर आ गए। तुम्हारा वह माल तो कई तरह का था। उसके खरीददार कौन-कौन थे?'' गधे वाले व्यापारी ने कहा—''चरित्रहीनता को खरीदा शासक वर्ग ने। अहंकार को खरीदा धनी लोगों ने। ईर्ष्या को खरीदा पंडितों ने और बेईमानी को व्यापारियों ने थोक भाव से खरीद लिया। वेराइटी इस बार कम थी। अगली बार कई नई चीजें लेकर आ रहा हूँ।''

ये चार ऐसे दोष हैं, जिनसे अछूता रहना चाहिए। जिसमें ये चार चीजें प्रवेश कर गईं, उसका पतन अवश्यंभावी है। हम हर तरह की नकारात्मक वृत्ति के प्रति भी सावधान रहें।

प्रतिक्रिया से घबराएँ नहीं

एक व्यक्ति नया-नया ही संन्यासी बना था। उसी गाँव का था। तालाब के किनारे डेरा जमाए बैठा था। एक दिन सो रहा था। सिरहाने ईंट रखी हुई थी। महिलाएँ पानी लाने तालाब पर जा रही थीं। एक महिला बोली, 'देखो, संन्यासी बन गया तो क्या हुआ। अभी सिरहाने का मोह नहीं छूटा और कुछ नहीं तो ईंट को ही सिरहाना दे रखा है।' संन्यासी ने सुना और सोचा कि मैंने ठीक नहीं किया। उसने ईंट निकाल दी और बिना सिरहाने दिए ही सो गया। बहिनें पानी लेकर वापस आईं, देखा और फिर बोलीं, 'देखो, कितना कमजोर है यह संन्यासी! हमने कहा और ईंट निकाल दी।' संन्यासी ने सुना और ईंट फिर लगा ली। वही बहिन दुबारा पानी लेने आई और बोली, 'अच्छे संन्यासी बने तुम! हमारे कहने से ईंट निकालोगे और कहने से ही ईंट लगाओगे, तो फिर संन्यासी बनोगे ही नहीं। संन्यासी बनना है तो हम कहते रहेंगे, तुम्हें जो करना है, वह करते रहो। हम कहते हैं उसकी प्रतिक्रिया से तुम चलोगे तो संन्यासी नहीं बन पाओगे।'

धैर्यवान होना चाहिए

एक फकीर ने चर्चा के प्रसंग में कहा, 'मैंने हर व्यक्ति से कुछ न कुछ अवश्य ही सीखा है।' एक व्यक्ति ने पूछ लिया, 'आपने चोर से क्या सीखा? फकीर बोला, 'एक बार मैं चोर के घर ठहरा था। रात के समय चोर चोरी करने जाता। जब वह वापस लौटता, तब मैं पूछता, कुछ मिला? वह कहता, कुछ नहीं मिला। आज खाली हाथ लौटा हूँ, कल मिल जाएगा। दूसरे, तीसरे दिन मैं यही पूछता गया। वह कहता कि आज भी कुछ नहीं मिला, खाली हाथ लौटा हूँ। कल कुछ मिल जाएगा। इस प्रकार पूरा एक महीना बीत गया। एक महीने तक चोर को कुछ नहीं मिला। मैंने सोचा, चोर रोज चोरी करने जाता है। सात-आठ घंटे बिताता है। अपनी नींद का मीठा समय खोता है। चोरी में कुछ नहीं मिलता। पूरा एक महीना हो गया। पर उसमें निराशा का भाव नहीं आया। वह सदा कहता है, आज नहीं तो कल अवश्य मिलेगा। मैंने सोचा, चोर में इतना धैर्य है कि वह खाली हाथ लौटने पर निराश नहीं हुआ। यह देखकर मैंने उससे सीखा कि भक्ति के मार्ग में कभी निराश नहीं होना है। अच्छा काम करते हुए कभी निराश नहीं होना है।'

समता में है संतता

महाराष्ट्र के संत एकनाथ गोदावरी में स्नान करके आ रहे थे। एक आदमी झरोखे में बैठा था। उसने सोचा कि संत आ रहे हैं, उन्हें गुस्से में ले आऊँ। संत झरोखे के नीचे आए, उसने ऊपर से थूक दिया। संत के सिर पर थूक पड़ा। वे शुद्धि के लिए पुनः नदी की ओर चल पड़े। स्नान किया और फिर उसी झरोखे के नीचे से गुजरे। उस आदमी ने पुनः थूक दिया। संत पुनः स्नान करने नदी की ओर मुड़े। बीस बार आदमी ने थूका और बीस बार संत को स्नान करना पड़ा। उनके मन में उस व्यक्ति के प्रति तनिक भी क्रोध नहीं आया। व्यक्ति निराश हो गया।

इतना जघन्य प्रयत्न करने पर भी क्रोध नहीं आया। वह नीचे उतरा और संत के पैरों में गिर पड़ा। उसने गिड़गिड़ाते हुए कहा, 'मैंने जघन्य अपराध किया। आप महान हैं, क्षमा करें।' संत बोले, 'तुमने कोई अपराध नहीं किया है। तुमने मेरा बड़ा उपकार किया है। तुम्हारे कारण ही मैं आज पुण्यभागी बना हूँ। प्रतिदिन एक बार माँ गोदावरी की गोद में जाता हूँ। तुमने तो मुझे माँ की गोद में जाने के बीस अवसर दिए। मैं तुम्हारा आभारी हूँ।'

बहाने नहीं, श्रम हो

एक आदमी बैठा था। गाँव में मंदिर बन रहा था। सब लोगों ने निर्णय लिया कि मंदिर बनाना है, पर मजदूरों की जरूरत नहीं है। गाँव के सब लोग अपना श्रम लगाएँगे और मंदिर का निर्माण करेंगे। सारा गाँव मंदिर के निर्माण में जुट गया। एक आदमी निकम्मा बैठा है। दूसरे लोग पहुँचे। उन्होंने कहा, 'तुम्हें पता नहीं मंदिन बन रहा है और सबको काम करना है! चलो, मंदिर के काम में लगें।' वह बोला, 'क्या करूँ, सबके पेट भरे हैं और मेरा पेट खाली है। मैं कैसे काम कर सकता हूँ।

भला खाली पेट वाला आदमी कैसे काम करेगा? कैसे अपनी शक्ति लगाएगा?' लोगों ने कहा, 'बेचारा ठीक कहता है, पेट खाली है तो काम कैसे करेगा?' श्रमिक को तो और ज्यादा खाने को चाहिए। उसे पेट भरकर रोटियाँ खिला दीं। उसने डटकर रोटियाँ खाईं। फिर कहा गया, चलो, काम पर चलें। वह बोला, 'मैं कैसे जा सकता हूँ? मैं तो अब काम नहीं कर सकता। पेट इतना भर गया कि काम करने की स्थिति में नहीं हूँ।'

अमीरजादा-शहजादा

एक आदमी चला जा रहा था। जंगल में से गुजर रहा था। प्यास लग गई। इधर-उधर कहीं पानी नहीं मिला। प्यास गहरी होती गई।

गरमी का दिन, दुपहरी का समय, खोजते-खोजते एक कुआँ दिखाई दिया। वहाँ गया, देखा, पानी है, रस्सी पड़ी है, डोल भी पड़ी है, पर पानी निकालने वाला कोई नहीं है। उसने सोचा, पानी निकालूँ और प्यास बुझाऊँ। दूसरे ही क्षण विचार आया कि मैं पानी कैसे निकाल सकता हूँ? मैं तो अमीरजादा हूँ, बड़ा आदमी हूँ। मैं पानी निकालूँ और कोई देख ले तो मेरा बड़प्पन चूर-चूर हो जाएगा। बड़े लोग क्या समझेंगे? वे कहेंगे कि देखो आज अमीरजादा अपने हाथ से पानी निकालकर पी रहा है। बड़ी भद्दी बात होगी। वह बिना पानी निकाले, प्यासा बैठ गया।

थोड़ी देर हुई, इतने में दूसरा आदमी आया। वही हालत। कंठ सूखे जा रहे हैं, बुरी हालत हो रही है। गहरी प्यास, पानी पीने के लिए खोजते-खोजते वहीं आया। देखा, डोल पड़ी है, रस्सी है, कुआँ है और आदमी भी बैठा है। बोला, 'अरे भाई! बहुत प्यास लगी है, पानी पिला दो।' उसने कहा, 'मैं अमीरजादा हूँ, मैं कैसे पानी निकालूँ? तुम ही पानी निकालो।' उसने कहा, 'मैं कैसे निकालूँ? मैं नवाबजादा हूँ।' वह भी बैठ गया। पहले एक था, अब दो हो गए।

थोड़ी देर हुई, तीसरा आदमी आया। वह दूर से ही पानी-पानी चिल्ला रहा था। वे बोले नहीं, चुपचाप बैठे रहे। वह पास आया और बोला, 'अरे भाई! प्यासा हूँ, पानी तो पिला दो।' एक बोला, 'आप शांत रहें, ज्यादा हल्ला करने की जरूरत नहीं है। मैं अमीरजादा हूँ, दूसरा नवाबजादा है, इसलिए हम दोनों ही पानी नहीं निकाल सकते। अब तुम पानी निकालो।' वह बोला, 'मैं कैसे निकालूँ, मैं तो शहजादा हूँ।' तीनों प्यासे बैठ गए।

थोड़ी देर हुई, चौथा आदमी आया। वह भी प्यासा था। वहीं पहुँच गया। डोल और रस्सी को पड़े देखा, साथ ही तीन उदास चेहरों को भी देखा। वह डोल को रस्सी से बाँधकर पानी निकालने लगा, तो वे तीनों चिल्लाए, 'भाई! हमें भी पानी पिलाना, अन्यथा प्यास के मारे प्राण निकलने में ज्यादा देर नहीं है।' वह बोला, 'सब साधन तो आपके पास ही थे। पानी निकालते और पी लेते।' पहला बोला, 'मैं अमीरजादा हूँ, पानी निकालूँ तो इज्जत भ्रष्ट हो जाएगी।' दूसरा बोला, 'मैं नवाबजादा हूँ, पानी निकालूँ तो सारी मर्यादा खंडित हो जाएगी।' तीसरे ने कहा, 'मैं शहजादा हूँ, पानी निकालने के लिए थोड़े ही जन्मा हूँ?' तब उस चौथे आदमी ने कहा, 'ठीक है। बैठे रहो। मैं ही पानी निकालकर पी लेता हूँ।' वह पानी पीने लगा। तीनों बोल पड़े, 'अरे! हमें भी तो पानी पिलाओ।' उसने कहा, 'मैं हरामजादा हूँ, खुद पानी पीता हूँ, पिलाता किसी को नहीं। यही मेरी मर्यादा है।' वह पानी पीकर चलता बना। उन्होंने पूछा, 'तुम हरामजादे कैसे बने?' तो जवाब मिला—'अमीरजादों, नवाबजादों और शहजादों ने हरामजादों को पैदा किया है।'

अत्यंत मार्मिक व्यंग्य है। यह पूरे समाज की स्थिति का चित्रण है। समाज में हरामजादा कोई भी नहीं होता, किन्तु जब समाज का एक बहुत बड़ा वर्ग अमीरजादा, शहजादा और नवाबजादा बनकर बैठ जाता है, तब हरामजादों को जन्म लेना ही पड़ता है। इसके अलावा और कोई उपाय शेष नहीं रह जाता। यह समाज की प्रकृति का विकृत स्वरूप है। जहाँ परस्परावलंबन की बात खत्म हो जाती है, वहाँ आदमी यह अनुभव नहीं करता कि कोई मुझे सहारा दे रहा है, आलंबन दे रहा है, मैं किसी के सहारे से जी रहा हूँ। वहाँ सामाजिक जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है, हिंसा, क्रूरता और कठिनाइयाँ बढ़ जाती हैं।

सफलता का सूत्र है-दृढ़ संकल्प

बीरबल सम्राट अकबर के नवरत्नों में से एक थे। एक दिन दरबार में आने में उन्हें देर हो गई। अकबर ने पूछा—''बीरबल, तुम देर से आए, क्या बात है?'' बीरबल ने कहा—''हुजूर गृहस्थी के तमाम झंझट हैं। कुछ न कुछ लगा रहता है। घर से चलने को हुआ तो छोटा बच्चा मचल उठा। रोने लगा। उसे समझाने-सँभालने में देरी हो गई।''

बादशाह ने कहा—''तुम तो बड़ों-बड़ों को पल भर में समझा देते हो, बच्चे को समझाते में कैसे देर हुई?''

बीरबल ने कहा—''जहाँपनाह! बड़े को समझाना आसान है। बच्चे इतनी आसानी से कहाँ समझते हैं?'' बादशाह ने बीरबल की बात से असहमति प्रकट की। कहा—''मैं इस बात को नहीं मानता। बच्चों को पल भर में संतुष्ट किया जा सकता है।'' बादशाह के सामने जिद करने से कोई फायदा नहीं था। तय हुआ कि समय आने पर बात को सिद्ध कर देंगे।

एक दिन बीरबल एक बच्चे को लेकर बादशाह के पास आया। बादशाह भी अच्छे मूड में थे। बीरबल ने कहा—''हुजूर यह बड़ा हठी है। एक घंटे से दूध पीने की फरमाइश कर रहा है।'' अकबर के आदेश पर तुरंत एक पात्र में दूध पेश किया गया। बच्चे ने कहा—''मुझे मीठा दूध चाहिए।'' तुरंत उसमें मिश्री घोल दी गई। बच्चे ने एक घूँट दूध पिया, फिर बोला—''मुझे मीठा नहीं फीका दूध चाहिए।''

बादशाह को थोड़ी झुँझलाहट होने लगी। फिर भी दूसरा दूध मँगवाया तो बच्चे ने कहा—''नहीं, मुझे तो इसी दूध को इसमें से मिश्री निकाल कर दो।'' बादशाह ने कहा—ऐसा नहीं हो सकता।'' बच्चा रोने लगा। बच्चे से कहा गया—''कोई दूसरी चीज माँग लो।'' बच्चे ने कहा—''गन्ना चूसूँगा।'' एक बड़ा गन्ना बच्चे के हाथ में दिया गया। फिर उसने कहा—''मुझे इतना बड़ा गन्ना नहीं चाहिए, इसे छोटा करो।'' गन्ने के तीन टुकड़े कर दिए गए। बच्चो जोर से रो पड़ा। पूछा गया—''अब क्या हुआ?''

बच्चे ने कहा—''इसे ज्यादा छोटा क्यों कर दिया? इसे जोड़ो।'' बादशाह ने कहा—''इसे अब मेरे सामने से ले जाओ।''

बीरबर ने कहा—''याद है हुजूर, उस दिन आप कह रहे थे कि बच्चे को एक मिनट में राजी किया जा सकता है।'' बादशाह ने कहा—''तुम ठीक हो, मैं ही गलत था।''

युवा को समझाना सरल है। समाज की स्थिति अभी नासमझ बच्चे जैसी है। इसलिए बात उनकी समझ में नहीं आ रही है। सब जानते हैं कि जीवन की प्रकृति क्या है? समाज की व्यवस्था क्या है। इसमें शाश्वत तत्त्व कितना है और परिवर्तन का तत्त्व कि

प्रेरणा से बदलें जीवन को

आचार्य महाश्रमण

जैसी दृष्टि वैसी सृष्टि

महात्मा बुद्ध के पास कुछ व्यक्ति आए और बोले—भन्ते! हमारे गाँव में एक ऐसा व्यक्ति है जो सूर्य को नहीं मानता, प्रकाश को नहीं मानता। हम सबने उसको बहुत समझाया कि भैया! सूरज होता है, प्रकाश होता है, सुबह होती है पर वह तो किसी भी शर्त पर यह मानने के लिए तैयार नहीं है।

बुद्ध ने पूछा—उसके पास आँखें हैं या नहीं?

भन्ते! आँखें तो नहीं हैं। वह अन्धा है।

बुद्ध ने समाधान की भाषा में कहा—फिर तुम मनाने की चेष्टा क्यों करते हो? उसे वैद्य के पास ले जाओ। आँखों का इलाज करा दो। आँखों का आवरण हट जाएगा, रोशनी आ जाएगी तो स्वयं ही मानने लग जाएगा। ऐसा ही किया गया। दृष्टि मिलते ही उस भक्ति ने स्वतः यथार्थ का बोध कर लिया। कई बार दृष्टि प्राप्त व्यक्ति भी रंगीन चश्मा लगाकर यथार्थ का बोध नहीं कर पाता। जिस रंग का चश्मा पहन लेता है उसे दुनिया वैसी ही दिखाई देने लगती है। पीलिये के रोगी को प्रत्येक वस्तु में पीलापन नजर आता है। अपेक्षा है व्यक्ति यथार्थ दर्शन का प्रयत्न करे। जो जिस रूप में है उसे उसी रूप में जाने। अधिक जानना भी ठीक नहीं। कम जानना भी ठीक नहीं। अधिक जानना और कम जानना दोनों ही अयथार्थ हैं। जो वस्तु जिस रूप में है, उसे उसी रूप में जानना सम्यक् ज्ञान होता है।

किसी भी क्रिया की निष्पत्ति के पीछे दृष्टिकोण बहुत बड़ा निमित्त बनता है। बिल्ली अपने बच्चे को भी पकड़ती है और चूहे को भी पकड़ती है पर दोनों की पकड़ में बहुत बड़ा अन्तर होता है। बच्चे के प्रति ममता का भाव है, चूहे के प्रति क्रूरता का। बच्चे को बचा लेती है। चूहों को मार देती है। अन्तर्दृष्टि का अन्तर है। दृष्टि में अन्तर आते ही परिणाम में अन्तर आ जाता है। एक शल्यचिकित्सक भी पेट को औजार से चीरता है और एक डाकू भी पेट को छुरा भोंककर चीरता है। पेट को चीरने की क्रिया एक होने पर भी दृष्टि की समानता नहीं है। डॉक्टर की दृष्टि व्यक्ति को जीवनदान देने पर टिकी है। डाकू की दृष्टि जीवन को लूटने पर टिकी है। दृष्टि में बदलाव आते ही सब कुछ बदल जाता है।

मनुष्य जीवन को बहुमूल्य और दुर्लभ माना जाता है। इसका सही मूल्यांकन होना जरूरी है। पदार्थपरक दृष्टिकोण वाला व्यक्ति मानव जीवन की महत्ता का बोध नहीं कर सकता। एक राजा संन्यासी के पास गया। नमस्कार कर अहंकार की भाषा में कहने लगा—महात्माजी! आप मुझे जानते हैं या नहीं? मैं सम्राट हूँ। मेरे पास विशाल साम्राज्य है। बहुत बड़ी सेना है। अकूत खजाना है। संन्यासी साधक थे, ज्ञानी थे। वे राजा के अहंकार की भाषा समझ रहे थे। बिना किसी प्रतिक्रिया के चुपचाप सुनते रहे। जब राजा बोलकर मौन हो गया तो संन्यासी ने उसके अहं पर चोट करते हुए कहा—राजन्! तुम्हारा व्याख्यान तो मैंने बहुत सुन लिया पर मेरी दृष्टि में तो तुम्हारे राज्य का मूल्य दो गिलास पानी से अधिक नहीं है। राजा भौंचक्का रह गया। इतने बड़े साम्राज्य का मूल्य दो गिलास पानी कैसे हो सकता है? संन्यासी ने अपनी बात को आगे बढ़ाते हुए कहा—राजन! कल्पना करो, तुम कहीं घूमने निकले। बीहड़ जंगल में चले गए। साथी कोई पास में न हो। गर्मी का मौसम। भयंकर प्यास लग जाए। पानी कहीं दिखाई न दे, प्राण कंठों में आ जाएँ उस समय संयोगवश कोई व्यक्ति आए और एक गिलास ठंडा पानी तुमको पिलाए तो तुम उसे क्या दोगे?

राजा बोला—महात्मन्! प्यास से मेरे प्राण निकल रहे हों, मौत सिर पर मँडरा रही हो, उस समय मुझे कोई एक गिलास पानी पिला दे तो मैं उसे आधा राज्य दे दूँगा। संन्यासी ने कहा—राजन! फिर एक कल्पना करो—तुम घूमने निकले। घोड़ा उल्टी गति का था। तुम्हें सघन जंगल में ले आया। साथी सब पीछे छूट गए। भयंकर गर्मी का समय। तपती दुपहरी। अकस्मात् तुम्हारे शरीर में मूत्रावरोध की बीमारी हो गई। प्राणान्त वेदना हो रही थी। उस समय एक वैद्य आए। तुम्हें ऐसी दवा दे जिससे मूत्रावरोध समाप्त हो जाए। एक गिलास जितना प्रस्रवण हो जाए। तुम्हें आराम मिले। स्वस्थता की अनुभूति हो। उस समय तुम उसे क्या दोगे?

संन्यासी—महात्मन्! उसे मैं प्रसन्न होकर आधा राज्य दे दूँगा।

संन्यासी ने अपने अभिप्राय को स्पष्ट करते हुए कहा—राजन्! समझे या नहीं? एक गिलास पानी पिलाने का आधा राज्य और एक गिलास पानी निकालने का आधा राज्य। कुल मिलाकर पूरे राज्य का मूल्य दो गिलास पानी जितना ही तो हुआ। फिर तुम किस बात का अहं करते हो? राज नतमस्तक हो संन्यासी के चरणों में गिर पड़ा। अहं विलय का अनूठा सूत्र उसके हाथ लग गया।

अहंकार पतन का मार्ग है। अहंकारी व्यक्ति यथार्थ से अनभिज्ञ रहता है। औरों के सामने व्यक्ति अहंकार का प्रदर्शन कर भी सकता है पर मौत के आगे तो किसी का अहं चलता नहीं। कोई यह सोचे कि मेरे पास सुरक्षा की बहुत बड़ी व्यवस्था है, मौत मेरा क्या बिगाड़ेगी? क्या वह मौत के मुँह में जाने से बच सकता है?

ज्ञानीजन कहते हैं—व्यक्ति किस बात का अहं करे? आज जिसे मनुष्य जन्म प्राप्त है, वह कितनी बार बेर की गुठली में पैदा हुआ होगा? कितनी बार खजूर की गुठली में जन्म लिया होगा? कितनी बार साँप, बिच्छू बना होगा? कितनी बार पेड़-पौधा बना होगा? जो व्यक्ति सच्चाई को समझ लेता है? उसका अहं विगलित हो जाता है।

अध्यात्म की दिशा में प्रस्थान

गति का दूसरा अर्थ है—जीवन में विकास करना। यह भी एक प्रकार की गति है। भारतीय संस्कृति 'चरैवेति' को बहुत महत्त्व देती है। उसके अनुसार जो चलता है उसका भाग्य भी उसके साथ चलता है और जो ठहरता है उसका भाग्य भी ठहर जाता है। यहाँ चलने का

अर्थ है—अध्यात्म की दिशा में प्रस्थान करना। इस प्रस्थान के लिए जरूरी है जीवन को ज्ञान के प्रकाश और आचरण की सौरभ से भरा जाए। एक राजा को अपने तीन राजकुमारों में से एक को उत्तराधिकार के लिए चयनित करना था।

वह चयन उम्र के आधार पर नहीं, योग्यता के आधार पर करना चाहता था। उसने तीनों राजकुमारों को बुलाकर एक-एक रुपया हाथ में थमाया और आदेश दिया कि कल सायं आठ बजे तक इस रुपये से तीनों के महल मुझे भरे हुए मिलने चाहिए। तीनों राजकुमार अपनी-अपनी बुद्धि के घोड़े दौड़ाने लगे। बड़े राजकुमार ने सोचा—एक रुपये से महल भरना सम्भव नहीं है। मैं जुआ खेलूँ। एक के अनेक रुपये हो जाएँगे तो महल को भर दूँगा। इस सोच के साथ जुआ खेला।

पासा उल्टा पड़ा और वह एक रुपया भी गँवा बैठा। दूसरे राजकुमार ने सोचा—एक रुपये से क्या मिल सकता है। कोई अच्छी वस्तु तो मिल नहीं सकती। इससे गाँव का कूड़ा-कचरा अवश्य मिल सकता है। इस चिंतन के साथ उसने सफाई-कर्मचारी को वह रुपया दिया और और पूरे महल में कचरा, गन्दगी भरवा ली। तीसरा राजकुमार सूझबूझ का धनी था। वह बाजार गया।

उस एक रुपये से कुछ मोमबत्तियाँ, कुछ अगरबत्तियाँ और कुछ फूलमालाएँ खरीद लाया। महल के हर कोने में एवं द्वार पर उन्हें स्थापित कर दिया। ठीक समय पर राजा महलों का निरीक्षण करने निकला। बड़े पुत्र का महल खाली था। पुत्र उदास था। पूछने पर उसने अपनी राम कहानी सुना दी। राजा आगे बढ़ा।

मझले पुत्र के महल के पास जाते ही राजा को बदबू आने लगी। उसे कपड़े से नाक को ढकना पड़ा। पूछने पर उसने बताया—पिताजी! आपके द्वारा प्रदत्त एक रुपये में गन्दगी एवं कचरे के सिवाय और मिल भी क्या सकता था और आपके आदेशानुसार महल को भरना जरूरी था। इसलिए मैंने महल को कचरे से भर दिया। राजा छोटे राजकुमार के महल की ओर ज्यों ही बढ़ा उसे दूर से ही प्रकाश दिखाई दिया। मन को आह्लादित करने वाली भीनी-भीनी महक आने लगी। छोटे राजकुमार का महल सौरभ और प्रकाश से भरा देख राजा बहुत प्रसन्न हुआ। उसने छोटे राजकुमार की बुद्धि की प्रशंसा की और उसे अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया। वस्तुतः जीवन को मंजिल की ओर गतिमान करने के लिए ज्ञान का प्रकाश और आचरण की सौरभ चाहिए।

ज्ञान के आलोक में व्यक्ति अपना आत्मनिरीक्षण करता रहे और सदाचरण की सौरभ से जीवन को महकाता रहे। जो व्यक्ति उदारचेता होता है, ईमानदार होता है, नशामुक्त जीवन जीने वाला होता है, विनम्र होता है, मृदु होता है, शांत स्वभावी होता है, बड़ों का आदर करना जानता है, औरों के कल्याण की भावना रखता है, सरल होता है, उसका जीवन सद्गुणों की सौरभ से भरा होता है। अपनी प्रज्ञा के प्रकाश में व्यक्ति स्वयं झाँके और देखे उसके जीवन में इन सद्गुणों की सौरभ है या नहीं? यदि है तो निश्चित ही उसकी गति प्रशस्त है।

दृष्टि कहाँ टिकी है?

एक राजा था। वह बहुत प्रभावशाली था। बुद्धि और वैभव दोनों से संपन्न था। आसपास के राजा भी समय-समय पर उससे परामर्श लिया करते थे। एक दिन राजा अपनी शय्या पर सो रहा था। सोए-सोए उसके दिमाग में कुछ कल्पनाएँ उभरने लगीं। वह मन-ही-मन अपने राजसी वैभव एवं विलासिता पर इठलाने लगा। सोचा—मैं कितना भाग्यशाली और पुण्यवान हूँ।

कितना विशाल है मेरा परिवार, कितना समृद्ध है मेरा अंतःपुर, कितना सक्षम है मेरा सैन्यबल, कितना अक्षय है मेरा राजकोष। अन्यत्र ऐसा दुर्लभ है। ओह! मेरे खजाने के समक्ष कुबेर के खजाने की क्या बिसात? मेरे रनिवास की शोभा-सुषमा को देखकर स्वर्ग की अप्सराएँ भी ईर्ष्या करती होंगी।

मेरा हर वचन आदेश होता है। हर व्यक्ति मेरी आज्ञा को शिरोरत्नमिव धारण करता है। इस तरह अहं की हवा से राजा का तन-मन फूलने लगा। राजा संस्कृत भाषा का विद्वान था। संस्कृत में श्लोक रचना करना उसकी रुचि का विषय था। दिमाग में कल्पना आ जाए तो श्लोक रचना आसानी से हो जाती है। राजा ने मन-मस्तिष्क में उफनते भावों को शब्द के धागे में पिरोना शुरू किया। तीन चरण बन गए।

चौथा चरण बनना अवशेष था। यह सत्य है कि जब तक पूरा श्लोक नहीं बन जाता है तब तक रचनाकार की जुबान पर वे पंक्तियाँ पुनः-पुनः थिरकती रहती हैं। राजा बार-बार उन तीन चरणों को गुनगुना रहा था—

चेतोहरा युवतयः स्वजनाऽनुकूलः
सद्बान्धवाः प्रणयगर्भगिरश्च भृत्याः
गर्जन्ति दन्तिनिवहास्तरलास्तुरंगाः।

(मेरी चित्ताकर्षक रानियाँ हैं, अनुकूल स्वजनवर्ग है, श्रेष्ठ कुटुम्बीजन हैं। कर्मकर विनम्र और आज्ञा-पालक हैं, हाथी, घोड़ों के रूप में विशाल सेना है...)

बार-बार गुनगुनाने पर भी चौथा-चरण बन नहीं रहा था। संयोग की बात, उसी रात एक चोर राजमहल में चोरी करने के लिए आया हुआ था। वह मौका पाकर राजा के शयनकक्ष में घुस गया और पलंग के नीचे दुबककर बैठ गया। चोर भी संस्कृत भाषा का विज्ञ और आशुकविता करने में सिद्धहस्त था। समस्यापूर्ति करने का उसे अभ्यास था।

राजा द्वारा गुनगुनाये जाते श्लोक के तीन चरण चोर ने सुन लिए। राजा के दिमाग में चौथा चरण नहीं आ रहा है, यह भी वह जान गया। उसके मस्तिष्कीय तंतुओं में हलचल हुई और समस्यापूर्ति के रूप में चौथा चरण उसने बना लिया। मैं चोर हूँ, वह इस बात को तो भूल गया और राजा द्वारा उच्चारित तीन चरणों के बाद चौथे चरण का संगान करते हुए बोला—

सम्मीलने नयनयोर्नहि किंचिदस्ति।।

राज्य, वैभव आदि सब तभी तक है, जब तक आँख खुली है। आँख बंद होने के बाद कुछ नहीं है। अर्थात् जिस दिन यमराज के

मेहमान बन जाओगे, फिर संसार में तुम्हारे लिए कुछ नहीं बचेगा। अतः किस पर गर्व कर रहे हो?

चोर द्वारा उच्चारित इस एक पंक्ति ने राजा की आँखें खोल दीं। उसे सम्यक् दृष्टि मिल गई। वह चारों ओर विस्फारित नेत्रों से देखने लगा—ऐसी ज्ञान की बात किसने कही है? कैसे कही है? उसने आवाज दी—पलंग के नीचे जो भी है, वह मेरे सामने उपस्थित हो। चोर सामने उपस्थित हुआ। उसने विनम्रता के साथ कहा—राजन! मैं आया तो चोरी करने था पर आप द्वारा समुच्चारित श्लोक सुनकर मैं 'चोर हूँ' इस बात को भूल गया। मेरा संस्कृत प्रेम उमड़ पड़ा। परिणामस्वरूप मैं चौथे चरण की पूर्ति करने का दुस्साहस कर बैठा। राजन! मैं अपराधी हूँ।

आप महान हैं। मुझे क्षमा करें। अवसरज्ञ राजा ने कहा—तुम व्यक्तिगत जीवन में कुछ भी करते हो, इस क्षण मुझे उससे कुछ लेना-देना नहीं है। इस वक्त तो तुम मेरे गुरु बन गए हो। तुमने मुझे आज सम्यक्दृष्टि दी है। यथार्थता से परिचय कराया है। आँख बंद होने के बाद कुछ भी नहीं रहता—यह कहकर तुमने मेरा सत्य से साक्षात्कार करवा दिया। अब तुम मेरे गुरु हो गए हो। गुरु होने के कारण तुम मुझसे जो चाहो माँग सकते हो। चोर की समझ में कुछ नहीं आया कि राजा यह सब क्यों कह रहा है? तभी राजा ने पुनः कहा—आज मेरे ज्ञानचक्षु उद्घाटित हुए हैं।

मुझे वास्तविकता का बोध हो गया है। अतएव शुभस्यशीघ्रम्—इस सूक्त को आत्मसात करते हुए मैं शीघ्र ही संन्यास लेना चाहता हूँ। मुझे यह राज्य अब तृण के समान प्रतीत हो रहा है। इसके प्रति मेरे मन में कोई आकर्षण नहीं है। तुम यदि मेरा राज्य चाहो तो मैं उसे भी सहर्ष देने के लिए तैयार हूँ। चोर बोला—राजन! आपको जैसे इस वाक्य से बोधपाठ मिला है, वैसे ही मेरा मन भी उद्बुद्ध हो गया है। आप जिस राज्य को निस्सार समझ कर छोड़ रहे हैं, भला मैं उसका भोग कैसे कर सकता हूँ। मैं तो आपके साथ ही संन्यास स्वीकार करना चाहता हूँ।

देखते-देखते राजा और चोर दोनों संन्यासी बन गए। एक ही पंक्ति ने दोनों को स्पंदित कर दिया। यह है सम्यक् दृष्टि का परिणाम। जब तक राजा की दृष्टि सम्यक् नहीं थी, वह धन-वैभव, भोग-विलास को ही सब कुछ समझ रहा था। ज्यों ही आँखों से रंगीन चश्मा उतरा, दृष्टि सम्यक् बनी कि पदार्थ पदार्थ हो गया और आत्मा आत्मा।

शारीरिक सहिष्णुता

कहा जाता है—एक बार अकबर और बीरबल घूमने निकले। जंगल में काफी दूर चले गए। उन्होंने देखा—एक लड़का पथरीली भूमि पर आराम से सो रहा है।

बादशाह के मन में एक जिज्ञासा पैदा हुई। बीरबल से पूछा—बीरबल! यह कैसे संभव है कि व्यक्ति ऐसी ऊबड़-खाबड़ पथरीली भूमि पर सोए और आराम से उसे नींद आ जाए?

बीरबल ने कहा—जहाँपनाह! इसमें आश्चर्य जैसी कोई बात नहीं है। यह तो अभ्यास की बात है। शरीर को जैसा अभ्यास दिया जाता है वह वैसा ही बन जाता है। प्रारम्भ से ही जो कठोर भूमि पर शयन करने का अभ्यासी है उसे नींद लेने में कोई कठिनाई नहीं होती। बीरबल की बात बादशाह के समझ में नहीं आई। बादशाह ने बीरबल को अपनी बात प्रमाणित करने के लिए कहा। बीरबल बोला—जहाँपनाह! मैं अवश्य अपनी बात को प्रमाणपुरस्सर प्रस्तुत करूँगा।

बीरबल ने लड़के को जगाया। लड़का गहरी नींद में सो रहा था। बड़ी मुश्किल से जगा। बीरबल ने कहा—बच्चे! तुम हमारे साथ चलो। हम तुम्हें महल में रखेंगे। अच्छा खाने को देंगे। सोने के लिए मुलायम गद्दे देंगे। बच्चा खुशी-खुशी साथ चलने के लिए तैयार हो गया। लड़के को बादशाह के महल में रखा गया। छह महीने वहाँ रहा। कोमल मखमली गद्दों पर सुलाया गया।

बड़ी मस्ती की नींद लेता। जगाने पर भी मुश्किल से जागता। एक रात बीरबल ने बादशाह की अनुमति प्राप्त कर उसके गद्दे के नीचे दो-चार पत्थर के टुकड़े रख दिए। लड़का सदा की भाँति सोया पर आज वह पूरी रात नींद नहीं ले सका। क्षणभर के लिए भी उसकी आँखें निमीलित नहीं हुई। प्रातः बादशाह ने बच्चे को अपने पास बुलाकर पूछा—क्यों, नींद तो अच्छी लेते हो? बच्चा बोला—जहाँपनाह! इतने दिन तो नींद बहुत अच्छी आई पर आज की रात बहुत बुरी बीती। एक क्षण के लिए भी मुझे नींद नहीं आई। पता नहीं, बिछौने के नीचे क्या था मेरा तो सारा शरीर दर्द करने लगा।

बीरबल ने कहा—महाराज! यह वही बालक है जो पत्थरों पर आराम से गहरी नींद लेने वाला था किन्तु आज गद्दे के नीचे थोड़े से पत्थर के टुकड़े रखे होने के कारण इसकी नींद हराम हो गई क्योंकि इसे पहले कठोर भूमि पर सोने का अभ्यास था। छह महीने में यह अभ्यास छूट गया। अब यह थोड़ी-सी भी प्रतिकूलता सहन नहीं कर सकता। मौसल बदलता रहता है। हर मौसम को शरीर झेल सके, ऐसा अभ्यास होना चाहिए। सर्दी के दिनों में कुछ संत जुकाम के भय से गला बाँध लेते।

गुरुदेव तुलसी कहते—ऐसा करना ठीक नहीं है। गले को बाँधकर रखने से गले का ठंडक झेलने का अभ्यास छूट जाता है। प्रतिरोधात्मक शक्ति कम हो जाती है। फिर थोड़ी सी ठंडी हवा गले को लगी कि गला खराब हो जाएगा। ऐसा देखा भी जाता है कि जो जितना अधिक ठंडक या गर्मी का बचाव करते हैं वे उससे उतने ही अधिक प्रभावित होते हैं इसी तरह चलने की बात है। कुछ व्यक्ति बीस-पच्चीस कि.मी. पैदल चलकर थकान का अनुभव नहीं करते, जबकि कुछ दो-तीन कि.मी. भी मुश्किल से चल पाते हैं।

समता का विकास

चीन के एक राजा क्यांग थे। उन्होंने शुनशुनाओ को तीन बार अपना मंत्री बनाया और तीन बार ही उसे अपने पद से हटा दिया। राजा क्यांग के इन जल्दी-जल्दी लिए गए फैसलों से न तो शुनशुनाओ कभी प्रसन्न हुए और न ही उनके मन में कभी खिन्नता आई। एक बार एक विद्वान व्यक्ति किनबु उनसे मिले और उनके

अपार धैर्य का कारण पूछा। शुनशुनाओ अत्यन्त सहज भाव से बोले—जब मुझे मंत्री बनने को कहा गया, तब मैंने सोचा कि राजा व देश को मेरे कौशल की जरूरत होगी।

इसे अस्वीकार करना ठीक नहीं होगा, इसलिए मुझे जब भी पद मिला, वह मैंने ग्रहण कर लिया और जब-जब मुझे हटाया गया, तब मैंने यही सोचा कि राजकाज में अब मेरी कोई उपयोगिता नहीं बची होगी, इसलिए मंत्री पद से हटाए जाने को मैंने कभी बुरा नहीं माना। न तो मंत्री पद मिलने पर मुझे कुछ मिला और न ही इस पद से हटने पर मेरा कुछ गया। जो भी सम्मान मुझे मिला वह मात्र पद का था, मुझसे उसको कोई सरोकार नहीं था। शुनशुनाओ दोनों स्थितियों में राग-द्वेष मुक्त रहा, समत्व में रहा।

एक संन्यासी के मन में कभी उतार-चढ़ाव, कभी राग-द्वेष के भाव आ सकते हैं, किन्तु जिसमें राग-द्वेष का भाव आता रहता है, वह नित्य-संन्यासी नहीं होता। नित्य-संन्यासी की भूमिका वह होती है, जहाँ आकांक्षा और द्वेष दोनों ही छूट जाते हैं। जो आशा के पाश से जकड़े हुए हैं, वे नित्य-संन्यासी कहलाने के योग्य नहीं होते। गीता के अनुसार आकांक्षा पूर्णतया न भी छूट पाए तो उसका अल्पीकरण हो जाए।

गृहस्थ लोग भी इच्छा के अल्पीकरण का अभ्यास करें। अधिक पैसा प्राप्त करने की इच्छा रखने वाला व्यक्ति यह चिन्तन करे कि मुझे दाल-रोटी मिल रही है, रहने की व्यवस्था अच्छी है, आवश्यकताओं की पूर्ति हो रही है, फिर मैं पैसे के पीछे क्यों रहूँ? अब मैं साधना करूँ। यह इच्छा का नियंत्रण हो गया। इसी तरह वस्त्र आदि के बारे में सोचे कि जब मेरे पास इतने कपड़े हैं, तब नये-नये कपड़े पहनने की ज्यादा लालसा क्यों रखूँ? प्राचीन संस्कृत साहित्य में तो यहाँ तक कहा गया है—

यावद् भ्रियेत जठरं तावत्स्वत्वं हि देहिनाम्।
अधिकं योऽभिमन्येत स स्तेनो वधमर्हति।।

जितने से पेट भर जाए, उतना संग्रह तो पास में रखना आदमी का अधिकार है। उससे ज्यादा कोई रखता है तो वह चोर है और इतना ही नहीं, वह मारने-पीटने के लायक है। सारांश यह है कि संग्रह मत करो, ज्यादा इच्छा मत रखो।

भक्ति संपन्न बनो

एक युवक था। वह सरकारी नौकरी में अफसर था। अनेक लोग उससे मिलने के लिए उसके घर आते। उस युवक की माँ एकांक्षी (काणी) थी। युवक ने सोचा—इतने बड़े-बड़े लोग मेरे पास आते हैं। मेरी माँ को भी देखते हैं। एकाक्षी माँ अच्छी नहीं लगती। इससे मेरी गरिमा कम होती है। लड़का माँ के पास गया और बोला—माँ! मैं तुमको अपने साथ नहीं रखूँगा। तुम अलग घर में रहा करो। माँ ने कहा—ठीक है पुत्र! तुम जहाँ रखोगे, वहाँ रह जाऊँगी। पुत्र ने माँ को अलग कर दिया।

पुत्र का फर्ज होता है माँ की सेवा करना, किन्तु उसने माँ को असहाय छोड़ दिया। माँ वृद्धावस्था में थी। दो-चार वर्षों बाद उसका अवसान हो गया। पुत्र ने देहावसान के उपरान्त किए जाने वाले कार्य संपन्न किए। फिर माँ का सामान टटोला। उसमें एक लिफाफा मिला। उसमें बेटे के नाम एक संदेश था। माँ ने लिखा था—पुत्र! तुम सुख से रहना। मेरे मन में तुम्हारे प्रति वही स्नेह है, जो पहले था। उसमें कोई अन्तर नहीं आया। मैं इस बात को जानती हूँ कि तुमने मुझे अलग क्यों रखा था। मैं तुम्हें यह बताना चाहती हूँ कि मैं एकांक्षी क्यों बनी? मात्र तुम्हारी जानकारी के लिए मैं यह पत्र लिख रही हूँ। बेटा! जब तुम छोटे बच्चे थे, तुम्हारी एक आँख खराब हो गई, उसमें रोशनी नहीं रही। मैंने डॉक्टर से कहा—डॉक्टर साहब! आप मेरी एक आँख निकालकर मेरे बच्चे को लगा दीजिए। मैं जीवनपर्यन्त स्वयं एकांक्षी रह सकती हूँ, किन्तु अपने बच्चे का कानापन सहन नहीं कर सकती। डॉक्टर ने तुम्हारी खराब आँख निकाली और मेरी एक आँख तुम्हारे लगा दी। बेटा! मैं तब से एकांक्षी बन गई। बेटे ने ज्यों ही यह बात पढ़ी, दुःखी हो गया। अरे! मेरे लिए जिस माँ ने अपना इतना बड़ा बलिदान किया, उस माँ को मैंने घर से अलग कर दिया, पर अब क्या हो? अब तो वह मात्र पश्चात्ताप ही कर सकता था। मेरे कथन का तात्पर्य है कि बीमारी में माँ की भी कभी-कभी याद आती है और भगवान् की भी याद आती है। आदमी को दुःख में भगवान् याद आते हैं। अगर सुख में भगवान को याद करते रहें तो दुःख पैदा ही क्यों हो? ठीक कहा गया—

दुःख में सुमिरण सब करें, सुख में करे न कोय।
जो सुख में सुमिरण करे तो, दुःख काहे को होय।।

सेर को सवा सेर

एक गाँव का चौधरी एक शहर में पहुँचा। एक स्वर्णकार के घर जाकर वह बोला—स्वर्णकार! एक पीपा गाय का ताजा घी लेकर आया हूँ, तुम इसे ले लो और इसके बदले में मुझे कोई गहना दे दो। स्वर्णकार ने प्रसन्न मन से घी ले लिया और प्रसन्न मन से बोला—चौधरी! लो यह सोने का गहना ले जाओ, चौधरण के पहनने के काम आयेंगे। दोनों ने आदान-प्रदान किया और प्रसन्न मन से स्वर्णकार ने चौधरी को विदा किया।

दोनों की प्रसन्नता का कारण यह था—चौधरी सोच रहा था कि मैंने स्वर्णकार को ठग लिया और स्वर्णकार सोच रहा था कि मैंने चौधरी को ठग लिया। चौधरी गहना लेकर सीधा अपने घर पहुँचा और चौधरण से बोला—लो यह गहना, आज मैंने सुनार को ठग लिया। परंतु कुछ ही समय बाद चौधरी की प्रसन्नता गायब हो गई, जब यह पता चला की गहना सोने का नहीं, पीतल का है। स्वर्णकार भी सुनारिन के पास गया और बोला—लो, यह एक पीपा ताजा घी। आज मैंने बेचारे चौधरी को ठग लिया। किन्तु थोड़ी देर बाद स्वर्णकार की प्रसन्नता भी विषाद में बदल गई।

जब यह पता चला कि पीपे में ऊपर-ऊपर तो घी है, शेष में सारा गोबर भरा पड़ा है। न स्वर्णकार सुखी हुआ, न चौधरी सुखी हुआ। समाज में जब इस तरह ठगी चलती है तो इसका परिणाम समाज के लोगों को ही भुगतना पड़ता है। ईमानदारी और ऋजुता न केवल अध्यात्म का तत्त्व है अपितु सुखी सामाजिक जीवन के लिए भी आवश्यक है।

संस्कारों की रोशनी

साध्वी अशोकश्री

एक विदेशी व्यापारी व्यापारार्थ छोटे से नगर के राजभवन में दो घोड़ियों को अपने साथ लेकर पहुँचा। राजा ने तत्काल उठकर उसका अतिथि-सत्कार किया और पूछा—आपका हमारे इस छोटे से देश में आने का कारण क्या है? विदेशी तत्काल बोला—मैं आपकी परीक्षा लेने आया हूँ कि यहाँ के लोग कितने बुद्धिमान हैं। राजा ने पूछा—क्या बात है आप बताइये? विदेशी बोला—मेरे पास दो घोड़ियाँ हैं। इन दोनों का परीक्षण करके बताना है कि इनमें कौन माँ है और कौन बेटी? राजा ने दोनों घोड़ियों को गौरकर देखा, दोनों के रंग-रूप तथा लम्बाई-चौड़ाई में कोई अन्तर नजर नहीं आ रहा है। कौन बेटी है कौन माँ है इसका निर्णय करना तो बहुत ही कठिन हो गया। राजा ने तत्काल मंत्री को आमंत्रित कर कहा—सात दिन के भीतर-भीतर तुम्हें इसका सही उत्तर देना है। इन दोनों में माँ कौन और बेटी कौन? अन्यथा तुम्हें मृत्यु-दण्ड दिया जाएगा।

राजा का सख्त आदेश सुनकर मंत्री स्तब्ध-सा रह गया, और चिन्तन में डूब गया कि काश! यदि सही उत्तर नहीं दे सका तो मेरी मृत्यु अवश्यंभावी है। दुःख में निमग्न मंत्री अपने घर पहुँचा। पुत्रवधू विशाखा एक थाल में खाना परोसकर ससुर के लिए लायी पर ससुर ने थाल की ओर आँख उठाकर भी नहीं देखा। पुत्रवधू बहुत समझदार और योग्य थी। वह तत्काल समझ गई कि आज ससुर जी कोई विशेष चिन्ता में डूबे हुए हैं। वह सन्निकट आकर बोली—पिताश्री! आप आज कौनसी चिन्ता में डूबे हुए हैं? श्वसुर ने कहा—बेटी तुम्हें क्या बतलाऊँ, तुम मेरी इस चिन्ता को दूर नहीं कर सकती। पुत्रवधू ने कहा—पिताश्री! कभी-कभी बहू-बेटियाँ भी सही समाधान दे सकती हैं। आप बताएँ तो सही आपके कौनसी समस्या आई है? पुत्रवधू के अत्याग्रह पर मंत्री ने सारी बात बता दी। पुत्रवधू ने कहा—पितृवर? यह कोई बड़ी समस्या नहीं है। ऐसी समस्याओं का समाधान तो घर की बहू-बेटियाँ भी आसानी से कर सकती हैं। मंत्री ने कहा—जल्दी बताओ बेटी इसका सही समाधान क्या है? तत्काल विशाखा ने समाधान बताते हुए कहा—जब सभा मंच पर दोनों घोड़ियों को खड़ा किया जाये उस समय उनका जो भोजन है दो थैलों में अलग-अलग कर थैला दोनों के सामने रख दिया जाए। फिर दोनों की प्रतिक्रिया देखना कि कौन-सी घोड़ी गबागब खा रही है और कौन-सी घोड़ी थोड़ा-सा खाती है और फिर सामने वाली घोड़ी को देखती है? आप तत्काल निर्णय दे देना कि जो घोड़ी गबागब खा रही है वह घोड़ी बेटी है और जो थोड़ा खाती है और सामने वाली की ओर देखती है वह होगी माँ। ऐसा तत्काल यही उत्तर दे देना। सही उत्तर मिलने पर विदेशी भी अत्यन्त प्रसन्न होगा और राजा की ओर से भी खूब बधाइयाँ मिलेंगी।

मंत्रीवर ने अब बिल्कुल चिन्ता मुक्त होकर भोजन किया। निश्चिन्तता से नींद में रातभर सोया। मंत्री मन में बहुत प्रसन्न हो रहा था कि ऐसी पढ़ी-लिखी सुसंस्कार सम्पन्न समझदार बहू मेरे घर में आई। इसने आज मुझे गहरी समस्या से उबार लिया। सात दिन के बाद बड़े ठाठ-बाट के साथ मंत्री अपनी पुत्रवधू को साथ लेकर राजभवन में पहुँचा। पूरी संसद जुड़ी। उस राज संसद में दोनों घोड़ियों को खड़ा कर दिया। पूरी राज सभा में हलचल। आज माँ और बेटी की सही पहचान सामने आयेगी। राजा ने विदेशी व्यापारी और मंत्री को आगे बुलाया और मंत्री से कहा—छुपा हुआ रहस्य खोलो कि दोनों में माँ कौन और बेटी कौन?

मंत्रीवर ने घोड़ियों के लिए भूसे की दो थैलियाँ मँगवा दोनों के सामने एक-एक थैली रख दी। अब दोनों अपना खाना खा रही हैं, पर दोनों में एक तो दबादब खाती जा रही है दूसरी खाते-खाते रुक-रुककर सामने वाली घोड़ी की ओर देख रही है और खाना खाती जाती है। इस प्रक्रिया को ध्यान से देखकर तत्काल मंत्रीवर ने दोनों को थपथपी लगाते हुए कहा—यह माँ है और यह बेटी है। व्यापारी को सही उत्तर मिलने पर अत्यन्त खुशी जाहिर करते हुए कहा—राजन् आपका मंत्री तो बहुत बुद्धिशाली है जिसने पूरे नगर की शान बढ़ाकर विजयघोष गुँजा दिया। इस प्रकार समस्त राज्य में अत्यधिक खुशहाली का वातावरण बन गया।

राजा ने दूसरे दिन मंत्री को सन्निकट बुलाकर पूछा—मंत्रीवर। क्या यह उत्तर तुमने अपनी बुद्धि से दिया या पराई बुद्धि से दिया है? मंत्री बोला—राजन्! ऐसे छोटे-मोटे प्रश्नों का उत्तर तो हमारी बहू-बेटियाँ भी दे देती हैं। इसमें कौनसी बड़ी बात है। राजा ने मंत्री को टकराते हुए कहा—क्या सचमुच यह उत्तर तुम्हारी पुत्रवधू ने दिया है। तब मंत्री ने राजा के समक्ष पूरी बात खुलकर बता दी। राजा ने तत्काल पुत्रवधू विशाखा को राजभवन में बुलाया और उसका बहुत सम्मान किया और पुरस्कार प्रदान किया। राजा ने कहा—बहूरानी! उच्च आदर्श के प्रतीक ऐसे अच्छे संस्कार तुमने कहाँ से प्राप्त किए। बहूरानी ने कहा—मैंने अपने मता-पिता से पाये। उसने आगे कहा—राजन् ऐसे कई शिक्षा सूत्र मैंने मेरी माता से पाये हैं। जो हर जीवन के लिए अनमोल एवं उपयोगी सूत्र बनते हैं। राजा बोला कि वे सूत्र कौन-कौन से हैं? सारे बताओ।

बहूरानी बोली—

- सूरज-चाँद की सेवा करना यानी सास-ससुर की सेवा करना।
- अग्नि से कभी मत अड़ना यानी पति के साथ कभी मत अड़ना।
- देना पर लेना नहीं यानी किसी की सेवा करना पर पुनः लेने की कामना मत रखना।
- लेना पर देना नहीं यानी कभी कोई तुम्हें कटु शब्द बोल दे तो प्रत्युत्तर में पुनः जबाव मत देना।
- दर्पण को साफ रखना यानी अपने घर को तथा चरित्र को उज्ज्वल रखना।

राजा ने इस प्रकार के शिक्षा सूत्र सुन बहूरानी विशाखा के जीवन में सेवा भावना, उदारता, शालीनता आदि वैशिष्ट्य को प्रत्यक्ष रूप में देखकर अत्यन्त गौरव का अनुभव किया। सोचा ऐसे संस्कार अगर घर-घर में जागें तो हर घर स्वर्ग बन जाए। बहूरानी के मौलिक चिन्तन का बहुमान बढ़ाते हुए राजा ने उसे "बहूमाता की उपाधि" से अलंकृत किया और उसे ससम्मान अपने घर पहुँचाया। राजा ने मंत्री को भी सौ-सौ साधुवाद दिया।

ऐसी विलक्षण घटनाएँ जन-जन के लिए प्रेरणास्रोत बनती हैं ऐसे अनुभवी व्यक्ति स्वयं परिवार के लिए, समाज के लिए, देश एवं राष्ट्र के लिए सदा चिराग बने हैं।

स्वतंत्रता के धनी

अजपाल की लम्बे समय से ईर्ष्या आचार्य हेमचन्द्र से थी। वह जानता था कि हेमचन्द्र के कारण ही कुमारपाल में सर्वधर्म समभाव की भावना पैदा हुई है। वह इस भावना को जड़-मूल से ही नष्ट करना चाहता था। उसने बालचन्द्र मुनि को कहा—तुम अपने गुरुभ्राता रामचन्द्र को सूचित कर दो कि वह साहित्य की धरा को बदले और मेरे कथनानुसार कार्य करे। यदि उसने मेरी इच्छा के विपरीत कार्य किया तो मेरी तलवार की तीखी नोक उसके कलेजे को बींध देगी।

सम्राट कुमारपाल गुजरात के एक तेजस्वी सम्राट थे। उन्होंने अपनी धर्मनिष्ठा, न्यायपरायणता तथा स्नेह-सद्भावना के कारण जन-जन के अन्तर्मानस में उदात भावनाएँ समुत्पन्न की थीं।

उन्हें राज्य में मुख्य रूप से दो धाराएँ प्रवाहित थीं—एक श्रमण और दूसरी वैदिक। पर दोनों में अत्यधिक निकटता थी। दुराव और अलगाव नहीं था। जिसकी जैसी इच्छा हो, वह उसी धर्म का पालन कर सकता था। धार्मिक मान्यता की स्वतंत्रता थी। आचार्य हेमचन्द्र का पवित्र सान्निध्य पाकर सम्राट कुमारपाल धन्य हो गया। आचार्य हेमचन्द्र की अनेकांतात्मक, समन्वयात्मक दृष्टि ने कुमारपाल के जीवन में आमूलचूल परिवर्तन कर दिया। आचार्य की प्रतापपूर्ण प्रतिभा से निर्मित सद्साहित्य ने जन-जीवन में अभिनव प्राणों का संचार किया।

आचार्य हेमचन्द्र के अनेक शिष्य, उनमें दो शिष्य बहुत ही मेधावी थे, कवि थे, लेखक थे। एक का नाम रामचन्द्र था और दूसरे का नाम बालचन्द्र। बालचन्द्र की अपेक्षा रामचन्द्र अधिक प्रतिभासम्पन्न थे। वे बेजोड़ शब्द-शिल्पी तथा सरस्वती के वरद-पुत्र थे। उन्होंने अपनी तेजस्वी प्रतिभा से 66 ग्रन्थ के पूर्ण होने पर उनको प्रबन्ध-शतकर्ता की उपाधि मिलने वाली थी।

आचार्य हेमचन्द्र का स्वर्गवास हो गया। जब यह सूचना सम्राट कुमारपाल को मिली तो उन्हें अत्यन्त आघात लगा। वे उस आघात को सहन न कर सके। बत्तीस दिन के पश्चात् ही सम्राट कुमारपाल का भी देहान्त हो गया। चारों ओर कुमारपाल का शासन-सुव्यवस्था की लोग प्रशंसा कर रहे थे। कुमारपाल के शासन सम्हालने योग्य कोई लड़का नहीं था। अतः शासन की बागडोर सम्राट के भ्राता अजपाल ने सम्भाली। अजपाल ब्राह्मण धर्म का कट्टर उपासक था। वह जैन धर्म का विरोधी था और कवि बालचन्द मुनि का अनन्य स्नेही मित्र भी था।

ज्यों ही अजपाल राजा बना, उसके मन में ये विचार कौंधे कि जैन धर्म और ब्राह्मण धर्म ये दोनों पृथक्-पृथक् हैं पर कुमारपाल ने दोनों में समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया। यह प्रयास तो गुड़ और गोबर को एक करने का प्रयास है। मैं इस प्रकार की धार्मिक सहिष्णुता को मूर्खता मानता हूँ। मेरे राज्य में इस प्रकार के मूर्ख व्यक्ति नहीं रह सकते। अतः उसने राजाज्ञा जाहिर कर दी। वह चाहता था कि अन्य किसी की नहीं, मेरी खुद की प्रशंसा होनी चाहिए। उसने यह भी घोषणा की कि मेरी प्रशस्ति में ग्रन्थों का निर्माण किया जाये। तीसरी घोषणा उसने यह की कि कवि रामचन्द्र और कवि बालचन्द्र जो जैन मुनि हैं, उनकी वाग्धारा भी मेरी प्रशंसा में बहेगी। इतने दिनों तक उन्होंने अपने मन-पसन्द विषय पर लिखा और अब उन्हें मेरे गुण गाने होंगे।

कवि बालचन्द्र मुनि जो राजसभा में ही थे, उनके मन में कवि रामचन्द्र मुनि के प्रति ईर्ष्या थी। वे रामचन्द्र मुनि की कीर्ति-कौमुदी को सहन नहीं कर पा रहे थे। उन्होंने राजा अजपाल को उकसाने के लिए कहा—राजन्! मेरे ज्येष्ठ गुरु भारती के भण्डार को समर्पित हो चुके हैं। अब वे सौवाँ ग्रन्थ लिख रहे हैं। अब आप ही बतावें, उसका क्या होगा?

अजपाल ने तुनककर कहा—वे 66 ग्रन्थ यज्ञ की अग्नि को समर्पित कर दिये जाएँगे। जिन ग्रन्थों में समन्वय की प्रधानता और अजपाल की प्रशंसा का अभाव है, वे ग्रन्थ भंडारों में रखने योग्य नहीं हैं। उन सभी को मैं अग्नि की शरण में पहुँचा दूँगा। जिन ग्रन्थों में ब्राह्मण धर्म की गौरव-गाथा अंकित है और साथ ही मेरी गुण-गरिमा का वर्णन है, वे ही ग्रन्थ शाश्वत रह सकेंगे।

कवि बालचन्द्र मुनि ने जरा आगे चलकर कहा—नरश्रेष्ठ जैनधर्म और ब्राह्मण धर्म में तो बहुत अधिक समानता है। धर्म तो एक-दूसरे पर थोपने की चीज नहीं है, स्वेच्छा से स्वीकार करने की चीज है। जो धर्म थोपा जाता है, वह धर्म नहीं अधर्म है।

अजपाल ने आँखें लाल करते हुए कहा—बालचन्द्र! ज्यादा बकवास न करो। जानते हो, मेरी आज्ञा की अवहेलना करने का परिणाम! मैं एक झटके से तुम्हारा सिर उड़ा दूँगा। जल्लादों से तुम्हारी खाल खिंचवा दूँगा।

काँपते हुए, बालचन्द्र मुनि ने कहा—राजन्! यह मेरे विचार नहीं हैं, मैं तो आपकी प्रशंसा में ही लिखूँगा। मैं तो आपको बता रहा था कि मेरे गुरुभ्राता रामचन्द्र मुनि के काव्य में इस प्रकार के विचार आये हैं।

कवि बालचन्द्र मुनि की ईर्ष्या स्पष्ट रूप से प्रकट हो गई।

अजपाल की लम्बे समय से ईर्ष्या आचार्य हेमचन्द्र से थी। वह जानता था कि हेमचन्द्र के कारण ही कुमारपाल में सर्वधर्म समभाव की भावना पैदा हुई है। वह इस भावना को जड़-मूल से ही नष्ट करना चाहता था। उसने बालचन्द्र मुनि को कहा—तुम अपने गुरुभ्राता रामचन्द्र को सूचित कर दो कि वह साहित्य की धरा को बदले और मेरे कथनानुसार कार्य करे। यदि उसने मेरी इच्छा के विपरीत कार्य किया तो मेरी तलवार की तीखी नोक उसके कलेजे को बींध देगी। आजपाल ने एक क्षण रुक कर अपने प्रधान आमात्य की ओर दृष्टि प्रसारित करते हुए कहा—कुमारपाल ने जैन और ब्राह्मणों की बेमेल खिचड़ी पकाई है। वह मुझे बिल्कुल पसन्द नहीं

हैं। मैं उन सभी स्थलों को नष्ट कर दूँगा, समन्वय के नाम से ही मुझे चिढ़ है, क्यों मेरी बात अच्छी तरह समझ गये न?

कवि मुनि रामचन्द्र प्रतिभासम्पन्न कवि होने के साथ स्वाभिमानी भी थे। वे सत्य के ग्राहक थे। वे स्वयंभू थे, किसी के अनुचर नहीं। उनकी कविता स्वान्तःसुखाय प्रस्फुटित होती थी। प्रातःकाल का समय था, प्राची से सहस्ररश्मि सूर्य की चमचमाती किरणें आलोक प्रदान कर रही थीं और कवि रामचन्द्र मुनि आध्यात्मिक मस्ती में झूमते हुए कविता निर्माण में तल्लीन थे। उनकी लेखनी कागज पर सरपट दौड़ रही थी। तभी किसी ने उनकी भाव एकाग्रता को तोड़ते हुए कहा—पाटन में क्या हो रहा है? कुछ पता है?

कवि रामचन्द्र मुनि ने उसी मस्ती से उत्तर दिया—जो प्रतिदिन होता है, वही हो रहा होगा। अभी मुझे काव्य लिखने दो। मैं इस समय काव्य सृजन में लगा हुआ हूँ।

आगन्तुक ने कहा—यह तो मुझे पता है कि आप काव्य-सर्जना में दत्तचित्त हैं पर मैं आपसे पूछता हूँ कि काव्य-सृजन आप किसलिए कर रहे हैं? क्या यज्ञ की अग्नि में होम करने के लिए?

कवि रामचन्द्र ने कहा—कवि का काव्य होम के लिए नहीं होता, वह तो जन-जन के अन्तर्मानस चेतना का संचार करने के लिए होता है।

आगन्तुक व्यक्ति ने कहा—कवि प्रवर! आपको ज्ञात होना चाहिए कि अब कुमारपाल का राज्य नहीं है। कुमारपाल का उत्तराधिकारी अजपाल बना है। वह कट्टर सम्प्रदायवादी मानस का व्यक्ति है। उसकी धर्मान्धता चरम सीमा पर पहुँच चुकी है। जो लोग धार्मिक एकता और सच्चाई की बात करेंगे, उन्हें अजपाल मौत के घाट उतार देगा। मेरा आपसे अनुरोध है कि आप भी अपने लघु गुरुभ्राता मुनि बालचन्द्र की तरह चापलूसी करना सीखें और फिर साहित्य सृजन करें।

मुनि रामचन्द्र ने कहा। मैं मृत्यु के भय से सत्य से विचलित नहीं हो सकता। मेरी वाचा गुणियों के गुणों का ही संकीर्तन करेगी, न कि क्रूर शासक की प्रशंसा करेगी।

आगन्तुक व्यक्ति ने देखा, कवि रामचन्द्र मुनि की वाणी में निर्भीकता है। आँखों में अपूर्व तेज है। वार्तालाप चल ही रहा था कि अजपाल के सैनिक आ गए। उन्होंने कवि मुनि रामचन्द्र को बन्दी बना लिया और राजसभा में उपस्थित किया। अजपाल ने ऊपर से नीचे तक कवि को देखा और बोला—क्या तुमने मेरी घोषणा नहीं सुनी? तुमने मेरी प्रशस्ति में काव्य लिखा या नहीं? यदि नहीं लिखा है तो प्रायश्चित्त करना होगा।

कवि रामचन्द्र मुनि ने कहा—राजन्! कवि किसी का गुलाम नहीं होता, वह स्वतंत्र प्रकृति का धनी होता है। वह कभी किसी की आज्ञा से नहीं लिखता। वह किसी का भी प्रतिबन्ध पसन्द नहीं करता। मैं जो भी लिखता हूँ, किसी अज्ञात शक्ति की प्रेरणा से लिखता हूँ।

अजपाल की भृकुटियाँ तन गईं, क्रोध की रेखाएँ ललाट पर उभर आईं। उसने गम्भीर गर्जना करते हुए कहा। यदि तुम अपना जीवन चाहते हो तो तुम्हें बालचन्द्र का अनुसरण करना होगा, नहीं तो चमचमाती तलवार तुम्हारा स्वागत करेगी।

रामचन्द्र ने निर्भीकता से कहा। मैं सत्य की हत्या कर चापलूसी नहीं कर सकता। कवि कोई साँप नहीं होता जो पिटारे में बन्द हो जाए और सपेरे की बीन पर फन फैलाकर नाचता रहे। मैं किसी को प्रसन्न करने के लिए नहीं अपितु स्वान्तःसुखाय कविताएँ लिखता हूँ।

अजपाल ने आवेश में आकर जल्लादों को आदेश दिया—गर्म-गर्म शलाकाएँ रामचन्द्र की आँखों में डाल दो।

आदेश सुनते ही सभा में भयंकर तहलका मच गया। पर किसी में हिम्मत नहीं थी, जो राजा अजपाल को कुछ कह सके। देखते ही देखते जल्लादों ने गर्मागर्म शलाकाएँ आँखों में डाल दीं। किन्तु मुनि रामचन्द्र के चेहरे पर वही अपूर्व तेज था। उनके चेहरे पर मधुर मुस्कान अठखेलियाँ कर रही थी। वे कह रहे थे—मेरी स्थूल आँखों में अंजन आँका जा सकता है, वे नष्ट की जा सकती हैं पर मेरे अन्तःचक्षु को नष्ट करने की शक्ति तुम्हारी शलाकाओं में नहीं है।

अजपाल को आश्चर्य हो रहा था। वह सोच रहा था— मेरे चरणों में रामचन्द्र गिर पड़ेंगे। पर वही पूर्ववत् मस्ती देखकर अजपाल ने कहा—कविवर! अहंकार छोड़ दो। मैं तुम्हें राजकवि का सम्माननीय पद दूँगा। कुमारपाल के समय आचार्य हेमचन्द का जैसा सम्मान हुआ, उससे भी बढ़कर मैं तुम्हारा सम्मान करूँगा और तुम अपनी प्रतिभा को कालजयी बना लोगे।

रामचन्द्र मुनि ने मुस्कुराते हुए कहा—राजन्! मैं उपाधियों को व्याधि मानता हूँ। मैं अपने हृदय जगत् का सम्राट हूँ, जहाँ पर तुम्हारी सत्ता का प्रवेश नहीं है। उनकी काव्य की स्वर-लहरियाँ झनझना उठीं—

स्वतंत्रो देव! भूयांसः सारमेयोपि वर्त्मनि।
माँ स्म भूयं-परायंत्रः त्रैलोकस्यापि नायकः।।

हे देव! मानव मात्र की स्वतंत्रता सदा बनी रहे। परतंत्र होकर स्वर्ग प्राप्त करने की अपेक्षा स्वतंत्र बनकर गली कूचों में परिभ्रमण करने वाला कुत्ता भी कहीं अधिक श्रेष्ठ है।

रामचन्द्र मुनि की बात सुनकर अजपाल क्रोध से बेभान हो उठा। उसने अमात्य को आदेश देते हुए कहा—यह अपने आपको भावजगत् का सम्राट मानता है तो आज हमारी ओर से इसका अभिषेक किया जाए और साथ ही इसे सिंहासन पर भी बिठाया जाये। वह अभिषेक है—खौलते हुए तेल से अभिसिंचन और तप्त तवे पर बिठाकर सिंहासन का आनन्द दिया जाए। इस निर्मम आज्ञा को सुनकर सभी सभासद काँप उठे।

मुनि रामचन्द्र आत्मभाव में तथा शुभ अध्यवसाय में उत्तरोत्तर आरोहण कर रहे थे। मर्मान्तक वेदना होने पर भी वे पूर्ण रूप से प्रसन्न थे। उन्हें आह्लाद था कि मैंने आचार्य हेमचन्द्र के द्वारा दी गई भेद-विज्ञान की शिक्षा को अपनाया है तथा सत्य के महामार्ग पर अडिग रहा हूँ। उनका भौतिक शरीर देखते ही देखते नष्ट हो गया पर उनका यशः शरीर युग-युग तक मानव को प्रेरणा प्रदान करता रहेगा। नमन हो ऐसे सत्यनिष्ठ स्वतंत्रता-प्रेमी सन्त को।

साभार : जैन कहानियाँ

पक्षियों के राजा 'पदियो' की सूझबूझ

छत्रसिंह बच्छावत

राजा शिव और पार्वती का बड़ा भक्त था। उसे बड़ा कौतूहल हुआ। उसने पक्षीराज से आग्रह किया कि पदियो राजा! शिवजी और पार्वती जी का आपस का ऐसा कौन-सा विवाद था कि तुमने सुलझाया? हमें भी बताओ। उसके बाद ही आगे की कार्यवाही की जायेगी। पदियो राजा ने बोलना आरंभ किया। जब मैं आपके पास आ रहा था तो शिवजी और पार्वतीजी इस विषय पर बहस कर रहे थे कि ''दुनिया में मर्द अधिक हैं या औरतें।'' शिवजी ने कहा कि 'मर्द' जबकि पार्वती जी अडिग थीं 'औरत' पर।

रानी बहुत ही क्रोधित हो गई थी। इतने बड़े साम्राज्य की रानी और उड़ती हुई एक छोटी-सी चिड़िया ने उसकी कीमती साड़ी पर अपना मल (बींट) गिरा दिया। रानी ने पक्षियों की सहज प्रकृति को नहीं समझा व बदला लेने की भावना के धनुष-बाण को अपने हृदय पट पर खींच लिया।

महलों की रानी—जो सुंदर व कोमल थी, अधरों व पलकों में मदहोशी छलकती थी, वह राजा के मन को आकर्षित कर सकने वाली विद्या में भी पूर्ण निपुण थी। राजा ने जब शयनकक्ष में प्रवेश किया तो समरंगी झिलमिलाते कमरे को अंधकारमय वातावरण में पाकर आश्चर्यचकित एवं दुःखित हुआ।

अपनी रानी की इच्छाओं पर पूर्ण समर्पित रहने वाले राजा ने जब रानी को आश्वासन दिया कि वह उसकी हर माँग मंजूर करेगा, उसके कोप के हर कारण को दूर करेगा तो रानी ने रोष में कहा, ''एक छोटी-सी चिड़िया आपकी रानी पर मैला गिरा सकती है, तब इससे बड़ा मेरा जघन्य अपमान क्या हो सकता है?'' सुनकर राजा मन ही मन मुस्करा दिया।

''मेरी प्रिय रानी! खुली हवा में उड़ते हुए पक्षी अपना स्वाभाविक क्रिया-कर्म करते समय कैसे जाने कि नीचे राजा है या रंक! चिड़िया का कोई दोष नहीं। उस समय का कोई ऐसी ही संयोग था कि इस प्रकार की घटना हो गई। भूल जाओ ऐसी तुच्छ बातों को।'' राजा आगे कुछ और समझाने जा रहा था कि रानी ने गर्जना भरी कटु वाणी में कहा, ''आप इसे तुच्छ बात कहते हैं? जब तक आकाश के सारे पक्षियों को आप प्राणदंड नहीं देंगे, तब तक मैं अन्न-पानी नहीं लूँगी और न ही आपसे एक शब्द बोलूँगी।''

राजा बहुत चिंतित हुआ। रानी का यह कैसा पागलपन है? एक निहायत मन के अहं की पूर्ति के लिए मैं सार्वजनिक रूप से अनुचित आदेश किस तरह दूँ? यदि आदेश निकालूँ भी तो केवल उस दोषी एक चिड़िया के लिए हो सकता है, समस्त पक्षियों के लिए कैसे? राजा ने रानी को पुनः समझाने की कोशिश की, तो रानी ने विकराल मूर्ति-सी बन आतंकित कर दिया कि वह प्राण दे देगी।

राजा हो या योगी, माया और मोह उसके स्वरूप को बदल डालते हैं और अपने अधीन कर लेते हैं। राजा अपनी रानी के लिए सब कुछ करने को तैयार हो गया। उसने अपने राज्य में घोषणा करवा दी कि जितने भी राज्य में पक्षी हैं, उन्हें कल दरबार में हाजिर होना पड़ेगा। रानी की साड़ी पर मल गिराने के दोष पर सबको मृत्यु दण्ड दिया जायेगा। आदेश हवा में फैल गया व आकाश के पक्षियों में खलबली मच गई। चारों ओर से हाहाकार और कराहने की आवाजें आने लगीं कि कल उनका आखिरी दिन है। इस बीच पक्षियों के राजा 'पदियो राजा' को जब सारी घटना ज्ञात हुई तो उसने अपने साथियों को दिलासा देते हुए कहा कि तुम शांति रखो, समता रखो। चिंता आग को उभारती है। कल तुम सब दरबार में हाजिर होकर राजा को समाचार दे देना कि उनका 'पदियो राजा' जब तक न पहुँचे, तब तक दण्ड की कोई घोषणा न करें।

''पदियो राजा'' के प्राण दंड प्राप्ति से पहले किसी भी पक्षी-परिवार को दण्ड मंजूर नहीं होगा। पक्षियों को इस पर बड़ी तसल्ली हुई और अपने पदियो राजा की बलिदान भावना की भूरि-भूरि प्रशंसा में कहते रहे कि राजा हो तो ऐसा हो। पक्षियों से दरबार खचाखच भरा हुआ था। राजा ने पक्षियों से पूछा कि क्या सब पहुँच गये हैं?

एक बुजुर्ग पक्षी ने नम्रतापूर्वक निवेदन किया कि राजन्! हमारा 'पदियो राजा' पहुँचने वाला है व उसकी बिना उपस्थिति के कोई भी दंड अनुचित होगा। राजा ने सोच लिया कि जब प्राणदंड देना ही है तो पक्षियों की बात का सम्मान रखना जरूरी है। करीब आधा घंटा की इंतजारी के बाद भी 'पदियों राजा' नहीं पहुँचा तो राजा सहित सारा दरबार व्यग्रता में बेचैन हो उठा। पक्षीगण भी प्राणदंड की चिंता में धैर्य खोने लगे।

इतने में ही देखा कि एक भीमकाय पक्षी ने, जिसका एक पाँव आकाश की ओर तथा दूसरा पाँव जमीन पर है, विहसी हँसी हँसता हुआ दरबार में प्रवेश किया। वही पक्षियों का राजा था। राजा ने क्रोधित होकर कहा कि जब तुम्हें राज-आदेश मालूम था तो पहुँचने में इतनी देरी क्यों की? तुम्हारे एक के लिए हम सब लोगों का कितना समय बरबाद हुआ?

''राजन क्षमा करें, मैं खुली हवा में रहने वाला आकाश का राजा हूँ।'' पदियो राजा ने व्यस्तता भरी आवाज में कहा कि धरती पर रहने वाले इंसानों की बेईमानी, अदालतों के झूठे मामलों में भाग लेने और आधुनिक धार्मिक नेताओं की अनैतिक बातों को सुनते रहने के कारण मेरे पास इतना कम वक्त बचता है कि धरती पर उपस्थित हो सकूँ।

इस वक्त भी मैं आ नहीं पा रहा था। बड़ी मुश्किल से यहाँ मरने के लिए आ पाया हूँ। शिवजी और पार्वतीजी आपके दरबार का दृश्य देख आपस में विवाद कर रहे थे, मैं सुलझाकर आया। चलिये छोड़िये इन बातों को, अब जो आप प्राणदंड देने वाले हैं, हम सब

तैयार हैं। राजा शिव और पार्वती का बड़ा भक्त था। उसे बड़ा कौतूहल हुआ। उसने पक्षीराज से आग्रह किया कि पदियो राजा! शिवजी और पार्वती जी का आपस का ऐसा कौन-सा विवाद था कि तुमने सुलझाया? हमें भी बताओ। उसके बाद ही आगे की कार्यवाही की जायेगी।

पदियो राजा ने बोलना आरंभ किया। जब मैं आपके पास आ रहा था तो शिवजी और पार्वतीजी इस विषय पर बहस कर रहे थे कि ''दुनिया में मर्द अधिक हैं या औरतें।'' शिवजी ने कहा कि 'मर्द' जबकि पार्वती जी अडिग थीं 'औरत' पर। परंतु दोनों के पास इसकी पुष्टि के प्रमाण नहीं थे।

मुझे रोक कर इसका सही जवाब देने के लिए कहा गया तो मैंने बताया कि कहने को तो मर्द ज्यादा हैं, परंतु वास्तविकता में औरतों की संख्या ज्यादा हो गई है। शिवजी इस बेढंगी बात पर झुँझलाये कि कैसी अजीब बात करते हो? मैंने गहराई से समझाते हुए कहा कि जितनी औरतें दुनिया में हैं, उतनी तो हैं ही, इसके साथ ही ऐसे मर्द हैं जो अनैतिक अनुचित बेबुनियादी बातों पर अपनी औरतों की गुलामी करते हैं और उनकी बातों में आ जाते हैं, मैं उन्हें भी औरतों की श्रेणी में लेता हूँ। फलतः उन मर्दों की गणना घटकर औरतों की श्रेणी में योग हो गई है।

शिवजी और पार्वतीजी इस पुष्टिकरण से बहुत खुश हुए और धन्यवाद दिया। इसी बातचीत में थोड़ी देर हो गई और मैं भागा-भागा आपके पास चला आया हूँ।'' समस्त दरबार में 'पदियो राजा' के यथोचित जवाब से राजा के आदेश पर विपरीत प्रतिक्रिया होने लगी व स्वयं राजा ने शर्म से सिर झुका लिया। उसने सोच लिया कि शिवजी और पार्वतीजी कभी माफ नहीं करेंगे, यदि मैंने रानी की कुकृत्य वृत्ति पर निःसहाय पक्षियों को प्राणदंड दे दिया। उसी अंतरात्मा 'मर्द' से 'औरत' की श्रेणी में आने पर खुद को धिक्कार रही थी। उसने ऐलान किया कि पदियो राजा ने मेरी आँखें खोल दी हैं, इसी क्षण से सब पक्षी आजाद हैं।

महल में बैठी, रानी ने जब सारी घटना सुनी तो पाँव तले से जमीन खिसक गई। रानी ने तत्काल क्रोध-ज्वाला की पुनरावृत्ति की कि यदि कल तक उन पक्षियों को प्राणदंड नहीं दिया गया तो वह स्वयं को स्व-शोणित से सींच लेगी।

इस बार भी रानी की आर्तध्वनि का तीर राजा पर ठीक लग गया। स्वर्ग की अप्सरा कुछ भी नहीं अपनी रानी के सामने। राजा ने तत्काल पक्षियों को प्राणदंड देने की पुनः घोषणा करवाई एवं ऐलान करवाया कि कल दोपहर से पहले-पहले सब पक्षी हाजिर हो जायें।

पक्षियों में वही भगदड़ पहले की तरह। 'पदियो राजा' का सब पक्षियों को वही आश्वासन और वही संदेश कहलाकर राजा के पास भिजाना कि उसके पहुँचने से पहले किसी को प्राणदंड न दें। कारण, पक्षियों की अपनी परंपरा में सबसे पहले प्राणदंड पाने वाला उसका राजा होता है।

भरे दरबार में पक्षियों सहित बैठा राजा 'पदियो राजा' की इंतजारी में आतुर हो चुका था। इस बार उसने दस मिनट अंतिम टाइम दिया, और चेतावनी दे दी कि इस बीच यदि 'पदियो राजा' आ जाये तो ठीक है, वरना सबको मृत्युदंड दे दिया जाये। सब पक्षी अंतिम साँसें गिन रहे थे। इसी बीच सब देखते हैं कि पदियो राजा दरबार में प्रवेश कर रहा था। ''तुम वक्त के मूल्य को आँकना नहीं जानते। राजा का हर क्षण कितना महत्वपूर्ण है, तुम पक्षी लोग कुछ भी नहीं समझते?'

राजा ने आग बबूला होकर पदियो राजा से देरी से आने का कारण पूछा तो पक्षियों के राजा ने अत्यंत धैर्य और शांत भाव से कहा कि धरती पर निर्धारित समय से दस मिनट विलंब से पहुँचना धरती का शासक अपनी शान समझता है।

जब शासक ही अनुशासित न रहे तो अन्य व्यवस्थाओं की स्थिति क्या हो सकती है। एक क्षण रुक कर पदियो राजा पुनः बोला—ज्यों ही मैं दौड़ता हुआ चला आ रहा था, त्यों ही देखा कि आज भी शिवजी और पार्वती जी जोर-जोर से झगड़ रहे हैं। मैं बिना रुके भागता रहा, परंतु रोक लिया गया। दोनों में वाद-विवाद ऐसा अजीब छिड़ा हुआ था कि धरती पर होने से तो जाँच कमीशन बैठाने पड़ते हैं।

उनके वाद-विवाद का विषय भी बड़ा अजीब था—''दुनिया में 'मुखद्वार' कितने और 'मलद्वार' कितने हैं?'' दोनों ही असमंजस में थे और साथ ही यह भी कह रहे थे कि ''जितने जिनके मुख होंगे, उतने ही उनके मलद्वार होंगे।''

उन्होंने मुझसे भी अपने विचार बताने का आग्रह किया। मैंने बहुत अनुनय-विनय की कि मुझे धरती पर राजा के दरबार में तुरंत हाजिर होना है, अन्यथा वहाँ सब पक्षियों को प्राणदंड मिल जायेगा। शिवजी पार्वतीजी ने दिलासा दिलाई कि वे धरती के राजा का तमाशा देख रहे हैं। हमें सब मालूम है। तुम इसका उचित उत्तर देकर जाओ। मैंने जल्दी-जल्दी में उनसे अर्ज किया कि दुनिया में 'मुखद्वार' से ज्यादा 'मलद्वार' हैं। ''यह कैसे? क्या प्रमाण है?'' शिवजी पार्वतीजी ने एक साथ मुझसे पूछा।

मैंने भूतकाल के कई उदाहरण पेश किए व वर्तमान काल की कथनी-करनी तथा आचार-विचार में फर्क समझाते हुए कहा कि जो मनुष्य अपने सुंदर मुख से निकाली हुई सत्य तथा न्याय की बात से मुकर जाये, वह मुखद्वार नहीं, मलद्वार ही है। अतः जितने भी ऐसे मुखद्वार हैं, वे सब मलद्वार की श्रेणियों में हैं और इसलिए दुनिया में 'मलद्वार' अधिक हैं। शिवजी-पार्वतीजी मेरे प्रत्युत्तर से बड़े खुश हुए तथा मजाक में कहा कि तुम धरती के राजा के मुखद्वार की तो बात नहीं कर रहे हो?

घटना सुनते ही धरती के राजा का मुख देखने लायक था। राजा के दरबारियों में अपने राजा के अन्यायपूर्ण व कलंकित आदेश देने तथा श्रीमुख से पिछले दरबार में दिये गये न्याय को बदलने पर अपने सिर शर्म से नीचे कर दिए। राजा ने भी शर्म से अपना मुख नीचा कर लिया और नीचे मुख किए ही आदेश दिया कि रानी को तुरंत संदेशा दे दें कि वह मर सकती हैं। राजा ने कहा कि पक्षियों से भी मनुजत्व सीखें। राजा ने 'पदियो राजा' एवं पक्षियों से क्षमा माँगी व आश्वासन दिया कि भविष्य में उसका मुखद्वार फिर मलद्वार नहीं बनेगा। खुशी-खुशी सब पक्षी विदा किये गये।

बचपन

उषा महाजन

वे भूली कहाँ थीं कुछ भी!

रह-रहकर वही दृश्य तो उनके मन को कुरेदते रहते हैं और वे अपने-आप से ही आँखें चुराने की कोशिश में लग जाती हैं।

पहला ही दिन था उसका उनके यहाँ।

उन्होंने बच्ची को चायपत्ती के डिब्बे के साथ मुफ्त मिली साबुन की टिकिया थमाते हुए कहा था, ''बहुत महँगा साबुन है। अच्छी तरह मल-मलकर नहाना, समझी! और सुन, जो नया फ्रॉक तुझे पिंकी की मम्मी ने दिया है, वही पहनना। पुराना वाला अपनी काकी को दे देना, जब वह तुझसे मिलने आए। वह अपनी लड़की को पहना लेगी। तेरे लिए तो पिंकी की मम्मी ने और भी बहुत-से कपड़े ले रखे हैं।''

नसीहतें देती वे मुड़ी ही थीं कि मन कहीं कौंधा—'लड़की ने ये क्या घिसे हुए सस्ते से प्लास्टिक के गुलाबी क्लिप बालों में लगा रखे हैं। कितने भद्दे लग रहे हैं, घटिया से!'

''सुन!''

बच्ची ठिठकी। एक बाँह पर नए कपड़ों का भार लादे और दूसरे हाथ में साबुन की नई टिकिया थामे उसने सहमकर उनकी ओर दृष्टि उठाई। वे उसके हुलिये का एकटक मुआयना करते हुए बोलीं, ''देख, ये क्लिप उतार दे बालों से। इन्हें भी दे दीयो काकी को, उसकी बेटी के लिए। तुझे पिंकी की मम्मी अच्छे वाले ला देगी। इससे बहुत अच्छे, जैसा तेरा फ्रॉक है न, उसी रंग के, और सुन, पिंकी की मम्मी को 'आंटी जी' बोला कर, समझी! और मुझे 'दादी जी' जैसे पिंकी कहती है।''

उन्होंने बच्ची को उत्साह में भरकर देखा था कि नए फ्रॉक के बाद, साबुन की नई टिकिया, दूसरे नए कपड़ों और बालों के लिए नए बढ़िया क्लिपों के मिलने का सुनकर लड़की की क्या प्रतिक्रिया होती है। लेकिन बच्ची के निर्विकार, निरपेक्ष चेहरे पर वे कुछ भी मनचाहा नहीं पढ़ पाई थीं और मन ही मन कुढ़ी थीं, 'ये गरीब लोग भी कितने घुन्ने हो गए हैं आजकल! अभी जरा-सी है और चालाकी का आलम यह कि भनक भी नहीं लगने दे रही कि इतना सब जो मिल रहा है उसे यहाँ, उसकी कब सोची थी उसने या उसकी काकी ने! खासी पगार के अलावा बढ़िया खाना-पीना, जैसे वे खुद खाते हैं। साबुन-तेल, कपड़ा-लत्ता, कंघा-आइना—सब। अपना अलग बाथरूम। छोटा-सा ही सही—अलग कमरा। ऐश है उसकी तो। कहाँ उन झुग्गियों में काकी के ढेरों बच्चों के साथ कोने में दुबककर सोना! न रोज नहाने-धोने को मिलना, न भर पेट खाना नसीब होना। यहाँ तो सब कुछ है।' देखा था उन्होंने कि झाड़-पोंछ की आड़ में कैसे वह पिंकी के ड्रेसिंग टेबल के सामने खड़ी होकर अपने आपको निहारती रहती थी।

उनके बेटा-बहू चाहते थे कि घर के सदस्य की तरह ही दिखे वह। अड़ोसियों-पड़ोसियों को कहने-सोचने का मौका न मिले कि बच्ची को काम पर लगा रखा है। समझते रहें कि किसी गरीब लड़की की परवरिश कर रहे हैं अपने यहाँ रखकर, अपनी ही बच्ची की तरह।

शनिवार-इतवार को बगल वाले ब्लॉक के शॉपिंग सेंटर के सामने जो एक्सपोर्ट सरप्लस का हाट लगता है, बहू वहाँ से उसके लिए कुछ जोड़े अच्छे कपड़े भी खरीद लाई थी, सस्ते में। साफ-सुथरी रहेगी, ढंग के कपड़े पहनेगी, तो घर में हर वक्त इसकी उपस्थिति भी नहीं खलेगी। और बच्ची काम भी करेगी खुशी-खुशी।

बच्ची!

वे अपने-आप में ही सकपकायी थीं। बच्ची ही तो थी वह। रखवाते वक्त उसकी काकी ने पैसे बढ़वाने के चक्कर में भले ही बताया था कि तेरह-चौदह साल की थी, पर वे खूब समझ सकती थीं कि लड़की की उम्र दस-ग्यारह से ऊपर नहीं थी।

मजबूरी थी उनकी भी, सो रख लिया था। दिल्ली से लगे इस उपनगर में गगनचुंबी इमारतें तो बनती जा रही थीं, एक के बाद एक। और खुले वातावरण तथा सस्ते के आकर्षण में लोग बसते भी जा रहे थे यहाँ। लेकिन बिजली-पानी की मूलभूत जरूरतों के अलावा घरेलू कामवालियों की भी खासी किल्लत थी। दूर-दूर तक छिटके-छितरे बहुमंजिली इमारतों के झुंड के झुंड। लेकिन परिवहन व्यवस्था एकदम अव्यवस्थित, असंतुलित। बसों की आवाजाही दिल्ली की तरह थोड़े ही थी कि दूर-दूर से काम करने आ जातीं महरियाँ। न ही यहाँ दिल्ली की तरह पॉश कॉलोनियों के साथ लगते गाँव थे, जैसे वसंत विहार के साथ वसंत गाँव, मुनीरका के साथ मुनीरका गाँव, सिरी फोर्ट के साथ शाहपुर जाट या साकेत के साथ खिड़की गाँव। दिल्ली की तरह यहाँ अभी मलिन बस्तियों के जमघट भी नहीं जमे थे कि पैसे वालों और जीविका के लिए उनके यहाँ काम करने वाले निर्धनों की परस्पर निर्भरता का लाभ यहाँ के बाशिंदों को मिल जाता। यहाँ तो रियल एस्टेट के मालिकों ने चप्पा-चप्पा जमीन कब्जा रखी थी, भविष्य में अपनी रियासतें विकसित करने के लिए।

बहरहाल, इस 'हैप्पी हैवेन' सोसायटी में काम करने आनेवाली कुछ गिनी-चुनी कामवालियों के नखरों से तो वे नहीं ही निभा सकती थीं। हर काम के चार-चार सौ रुपए। यानी झाड़ू-पोंछा, बर्तन, कपड़ों के कुल मिलाकर बाहर सौ रुपए। तिस पर हर दूसरे दिन नागा! और जो एक काम भी ऊपर से कह दो तो मजाल है कि कर दें खुशी-खुशी! कहेंगी, ''आंटी जी, और भी चार घरों में काम करना है। मेरे पास टैम कहाँ है!'' इधर आजकल एक नया ट्रेंड निकला है महरियों-कामवालियों में, बीबी जी के बदले 'आंटी जी' या 'दीदी' कहने का। उम्र के हिसाब से या व्यक्तिगत रख-रखाव के हिसाब से। अर्थात् अगर बाल-वाल रँगे हुए रहती हों, सलवार-सूट या जींस पहनती हों, तो बुढ़ापे में भी 'दीदी' कहला सकती हैं। लेकिन अगर जो देह थुलथुल हुई, केशराशि नैसर्गिक श्वेत-धवल, तो वे भी बेचारी क्या कहें 'आंटी जी' के सिवा!

तो ऐसे पार्टटाइम कामवालियों से भला काम चल सकता था उनका! वह भी तब, जबकि सारे घर के कामों का दायित्व अकेले उन्हीं के कंधों पर था। बेटा-बहू तो सवेरे ही अपने-अपने दफ्तरों

को निकल जाते थे। यद्यपि वे फुलटाइम अर्थात् घर पर ही रहने वाले नौकर या नौकरानी को रखने के लिए बाध्य थीं, लेकिन जवान लड़का या लड़की वे हरगिज नहीं रखना चाह रही थीं। लड़का रखतीं, तो हर वक्त डर कि पता नहीं कब टेंटुआ दबा दे या चोरी करवा दे। जवान लड़की की अलहदा परेशानियाँ। आस-पड़ोस के नौकरों-चौकीदारों से आँख-मटक्के करेगी और कुछ ऊँच-नीच हो जाए, तो फँसेगा घर का मालिक ही। जवान लड़की रखने को तो उनकी बहू भी राजी नहीं थी। कहाँ तक करेगी अपने पति की निगरानी। सो दिल्ली में किसी रिश्तेदार के यहाँ काम करने वाली महरी को कहकर इस बच्ची यानी मीनू को मँगवाया था, अपने यहाँ काम करने के लिए।

बस्ती के श्मशान घाट के पास से बहते नाले के किनारे बनी झुग्गियों में रहती थी मीनू, अपने काका-काकी के चार बच्चों के साथ। उन सब बच्चों में बड़ी वही थी। घर पर रहती तो बच्चों की देखभाल करती और जब काकी काम पर निकलती, तो वह भी साथ जाकर उसका हाथ बँटाती। काकी झाड़ू देती, तो वह पोंछा लगाती। काकी कपड़े फींचती, तो वह बर्तन मल देती।

पता नहीं कैसे कराते होंगे झुग्गियों से सीधे आने वाली कामवालियों से काम! उन्होंने तो नहाने-वहाने और साफ-सुथरा रहने की आदत डाल एकदम ही बदल डाला था लड़की को। लेकिन उसके चेहरे की चिरंतन उदासी, उसका वह टुकुर-टू। तब से तो और भी बेचैन रहने लगी थीं वे, जब दिल्ली में पढ़ रही उनकी भतीजी गरिमा आई थी उनसे मिलने। आते ही उसने सबसे पहले यही 'नोट' किया था, ''ओ गॉड, बुआ! यह क्या कर रही हैं आप? चाइल्ड लेबर? इस बच्ची के पढ़ने के दिन हैं और आपने यहाँ इसे काम पर लगा रखा है?'' उन्होंने अपनी दलीलें दी थीं, ''यह अपनी काकी के साथ दिल्ली में कई-कई घरों में काम करने जाती थी, वहाँ कौन-सा पढ़ने जा रही थी? यहाँ तो एक ही घर का काम करना पड़ता है। फिर, हम इसे इतनी अच्छी तरह रख भी तो रहे हैं।''

''सवाल यह नहीं है, बुआ। सवाल है बच्चों के अधिकारों का। बच्चों के शिक्षा पाने के अधिकार का। आप इसकी काकी को काम पर रख लेतीं और इसे पढ़ने भेज देतीं। आजकल तो 'वेल टु डू' लोग अपने नौकरों के बच्चों की पढ़ाई-लिखाई स्पांसर करते हैं।''

गरिमा की इन बातों का वे क्या जवाब देतीं?

किस आदर्शवाद, किस यूटोपिया की बातें कर रही है यह लड़की! घर-गृहस्थी से पाला पड़ेगा, तब पूछेंगी वे उससे सिद्धांत और व्यवहार का फर्क! वे कोई अनपढ़-गँवार नहीं हैं कि उन्हें यह सब पता नहीं, जो गरिमा कह रही है और इतने बड़े ओहदे पर कार्यरत उनकी बहू भी क्या गरिमा से कम पढ़ी-लिखी है! लेकिन मीनू का ही सोचने लगतीं वे दोनों, तो उनका अपना क्या होता! कौन निबटाता घर भर का इतना काम, इतने सहज तरीके से!

और फिर उन्होंने क्या ठेका ले रखा है दुनिया भर को साक्षर बनाने का! पढ़ाने का! अपने ही घर के प्राणियों की सही देखभाल हो जाए, यही बहुत है। आज के युग में अपने ही एक-दो बच्चों को पालने-पढ़ाने में लोगों की चूलें हिल जाती हैं।

जभी तो बरसी थी बहू उस दिन पिंकी, मीनू पर और साथ ही उन पर भी, जब साल के आखिर में बची हुई 'कैजुअल लीव' लेकर कुछ दिन घर बैठी थी। दोपहर को पिंकी के कमरे में अचानक ही गई, तो देखतीं क्या है कि पिंकी अपना बस्ता बिखेरे एक-एक कॉपी-किताब मीनू को दिखा रही थी, ''देखो, यह इंग्लिश की वर्कबुक है, यह कर्सिव राइटिंग की कॉपी है, यह मैथ्स की बुक है और देखो, मेरी ड्राइंग बुक, यह मेरी स्क्रैप बुक, बड़ा मजा आता है स्कूल में और टिफिन टाइम में झूलों पर तो बड़ा ही मजा।''

''अच्छा! बड़ा मजा आता है स्कूल में? और घर पर पढ़ाई में जरा भी मजा नहीं आता? सारा दिन खेलती रहती है इस मीनू की बच्ची के साथ?'' बहू ने पिंकी के कान उमेठते हुए उसे अचानक ही चौंका दिया था।

मीनू काँपकर जहाँ की तहाँ खड़ी रह गई थी। पिंकी रुँआसी-सी हो अपनी कॉपियाँ किताबें स्कूल बैग में भरने लगी थी। ''तू क्या कर रही है खड़ी-खड़ी?'' बहू ने फटकार लगाई, ''जा, अपना काम कर जाकर! बिगाड़ रही है लड़की को। खबरदार जो फिर पिंकी के कमरे में आकर डिस्टर्ब किया इसको!'' मीनू कमरे से निकल सरपट भागी थी। वे जानती थीं, मीनू देर तक अपने कमरे में पड़ी सिसकती रही थी।

कई दिनों तक यों ही उदास-उदास-सा चेहरा लिए काम करती रही थी वह। लेकिन बहू के दफ्तर जाते ही पिंकी और मीनू दोनों ही भूल गई थीं बहू की घुड़क। पिंकी के कमरे से आती दोनों की हँसने-खिलखिलाने की आवाजें सुन सकती थीं वे। न जाने क्या-क्या बातें करती होंगी दोनों! आखिर बच्चियाँ ही तो थीं! पिंकी शायद उसे बर्थडे में मिले गिफ्ट दिखा रही होगी और बता रही होगी कि किसने क्या-क्या दिया या फिर जन्म से लेकर अब तक के अपने फोटोग्राफ्स के अलबम दिखा रही होगी उसको। बहू चाहे जो कहे, वे नहीं रोक पाती थीं बच्चों को खेलने-बतियाने से। आखिर एक ही घर की छत के नीचे कैसे दूर रखा जा सकता था दो बच्चों को! बहरहाल। उस दिन को भूल नहीं सकती थीं क्या वे! महीना पूरा होते ही मीनू की काकी उसकी पगार लेने आ पहुँची थी। वह तो पैसे लेने ही आई थी, लेकिन मीनू ने उसे देखकर जो रोना शुरू किया कि वे हैरान ही हो गईं। काकी ने तो यही समझा होगा कि पता नहीं कितनी बुरी तरह रखा जा रहा है उसे यहाँ। तब उन्होंने ही उसकी काकी से कहा था कि एकाध दिन के लिए ले जाए उसे अपने साथ घर हो आएगी, चचेरे भाई-बहनों से मिल आएगी, तो मन हल्का हो जाएगा इसका।

मीनू की खुशी छिपाए नहीं छिप रही थी। दौड़ते-भागते हुए अपने जाने की तैयारी में जुट गई वह। साथ ले जाने के लिए प्लास्टिक के बैग में अपने कपड़े भी भर लिए। अब उसे इंतजार था तो सिर्फ पिंकी के स्कूल से लौटने का। उसकी काकी को वापस लौटने की जल्दी थी, पर मीनू पिंकी से मिलकर ही जाना चाहती थी। पिंकी आई, तो उसके साथ मीनू सीधे उसके कमरे में ही दौड़ी। दोनों में पता नहीं क्या बातें हुईं। पता नहीं क्या कहा था मीनू ने उसे अपने जाने को लेकर कि उसके जाने के बाद पिंकी ने चुप्पी ही साध

ली। कितना पूछा था उन्होंने कि आखिर क्या कहकर गई थी मीनू उससे, जो घर भर से कुट्टी ही कर ली थी। पर पिंकी को नहीं बताना था, सो नहीं बताया। मीनू को गए दो दिन बीते, फिर तीसरा दिन और फिर पूरा हफ्ता ही। आखिर कितने दिनों तक बैठी रहेगी यों अपनी काकी के घर! उन्हें तो फिक्र लगने लगी थी। कहीं उसकी काकी ने ज्यादा पैसों पर उसे किसी और के घर तो नहीं रखवा दिया? इन लोगों का कोई भरोसा नहीं। फिर यह ख्याल भी आया मन में कि कहीं बीमार-वीमार तो नहीं पड़ गई! पता तो करना चाहिए।

बहू से कहकर उसकी रिश्तेदार के यहाँ फोन करवाया कि पुछवाएँ मीनू की काकी से कि अभी तक वह उसे वापस छोड़ने क्यों नहीं आई। बहू ने फोन उन्हें ही पकड़ा दिया। और जो सुना उन्होंने उस तरफ से, वे स्तब्ध ही रह गईं। बहू की रिश्तेदार बता रही थी, ''मीनू की काकी तो आप लोगों से बहुत नाराज है। कह रही थी कि एकदम बिगाड़कर रख दिया था आप लोगों ने लड़की को। छोटे मुँह बड़ी बातें करने लगी थीं कि काकी, हाथ धोकर खाना बनाओ, सब्जियों को धोकर काटो, गंदे कपड़े दो दिन तक नहीं पहनेगी वह, वगैरह-वगैरह। और सबसे बड़ी जिद तो यह करने लगी थी कि वह स्कूल में पढ़ने जाएगी और आपके यहाँ काम पर वापस नहीं लौटेगी। आपकी पोती की तरह वह भी स्कूल में पढ़ेगी। अब काकी बेचारी क्या करती उसका! उसने उसे यहाँ काम कराने के लिए रखा था, न कि पढ़ाने के लिए। सो भेज दिया वापस वहीं गाँव में, उसके माँ-बाप के पास। वही पढ़ाते रहें उसे वहाँ।''

''हे भगवान्!'' उन्होंने अपना माथा पीटा, ''अब फिर से नए नौकर की खोज!'' तभी न जाने क्या कौंधा उनके मन में, ''अरे, मैंने तो जाते वक्त उसका बैग भी नहीं देखा। उसने वापस न लौटने की सोची थी, तो कहीं घर की कोई कीमती चीज न ले-लवा गई हो अपने साथ!'' ओह, उनका दिल जोरों से धड़कने लगा। घर का सारा कीमती सामान तो खुला ही पड़ा रहता था उसके सामने। घड़ियाँ, चूड़ियाँ, अँगूठियाँ—सभी तो दराजों में डाले रखती थी पिंकी की मम्मी। और पिंकी के कमरे में तो घुसी ही रहती थी मीनू।

बहू के कमरे की चीजें, तो बहू ही जाने। वे पिंकी के कमरे की तरफ दौड़ीं। एक-एक दराज खोल उलट-पुलटकर जाँचने लगीं। कपड़े, खिलौने, पेन, पेंसिलें—सभी गिनने की कोशिश करती रहीं। पिंकी की किताबों के शेल्फ! उस पर सजी नाचने वाली गुड़िया, क्रिस्टल का कीमती सजावटी सामान, चिड़िया वाली घड़ी—सभी तो सलामत थे अपनी जगह।

''अरे!'' वे ठिठकीं, ''पिंकी, तेरी फोटो वाला फ्रेम कहाँ है? यहीं तो पड़ा रहता था।'' पिंकी चुप। जैसे सुना ही न हो। उन्होंने इधर-उधर ढूँढ़ा। शायद झाड़-पोंछ करते मीनू ने कहीं और रख दिया हो। या फिर टूट ही न गया हो गिरकर उससे। और डर से उन्हें बताया न हो। उन्होंने पिंकी को हल्के से झकझोरा, ''पिंकी, बेटा! बता दे ना! वह फोटो कहाँ है, जो यहाँ शेल्फ पर पड़ी रहती थी?''

उन्होंने देखा, पिंकी की आँखों में एक संशय-सा। बताए या नहीं! कहीं डाँट ही न पड़े। इस बार उन्होंने जरा प्यार से, लाड़ से पूछा, ''क्या हुआ तेरी उस फोटो के फ्रेम का? क्या मीनू से गिरकर टूट गया था?'' ''नहीं, दादी जी।'' पिंकी उनसे लिपटते हुए बोली, ''वह तो मैंने उस दिन मीनू को गिफ्ट कर दिया था, जिस दिन वह जा रही थी।'' हैरान-सी वे उसे डपटने लगीं, ''क्यों भला? किसलिए?'' पिंकी रुआँसी हो आई, ''तो क्या हुआ, दादी जी! देखो ना।'' उसने झटके से अपनी स्टडी टेबल का दराज खोला, ''देखो ना, दादी जी, उसने भी तो बदले में मुझे इतना अच्छा गिफ्ट दिया!'' उनकी विस्मित, विस्फारित आँखों के सामने पिंकी की खुली हथेली पर वही दो 'घटिया-से, घिसे-पिटे, प्लास्टिक के गुलाबी 'हेयर-क्लिप' चमक रहे थे जिन्हें पहले ही दिन उन्होंने मीनू के बालों से उतरवाया था।

आत्मविश्वास है विजय

सीताराम गुप्ता

घटना है वर्ष 1960 की। स्थान था यूरोप का भव्य ऐतिहासिक नगर तथा इटली की राजधानी रोम। सारे विश्व की निगाहें 25 अगस्त से 11 सितंबर तक होने वाले ओलंपिक खेलों पर टिकी हुई थीं। इन्हीं ओलंपिक खेलों में एक बीस वर्षीय अश्वेत बालिका भी भाग ले रही थी। वह इतनी तेज दौड़ी, इतनी तेज दौड़ी कि 1960 के ओलंपिक मुकाबलों में तीन स्वर्ण पदक जीत कर दुनिया की सबसे तेज धाविका बन गई।

रोम ओलंपिक में लोग 83 देशों के 5346 खिलाड़ियों में इस बीस वर्षीय बालिका का असाधारण पराक्रम देखने के लिए इसलिए उत्सुक नहीं थे कि विल्मा रुडोल्फ नामक यह बालिका अश्वेत थी अपितु यह वह बालिका थी जिसे चार वर्ष की आयु में डबल निमोनिया और काला बुखार होने से पोलिया हो गया और फलस्वरूप उसे पैरों में ब्रेस पहननी पड़ी। विल्मा रुडोल्फ ग्यारह वर्ष की उम्र तक चल-फिर भी नहीं सकती थी लेकिन उसने एक सपना पाल रखा था कि उसे दुनिया की सबसे तेज धाविका बनना है। उस सपने को यथार्थ में परिवर्तित होता देखने के लिए ही इतने उत्सुक थे पूरी दुनिया के लोग और खेल-प्रेमी।

डॉक्टर के मना करने के बावजूद विल्मा रुडोल्फ ने अपने पैरों की ब्रेस उतार फेंकी और स्वयं को मानसिक रूप से तैयार कर अभ्यास में जुट गई।

अपने सपने को मन में प्रगाढ़ किए हुए वह निरंतर अभ्यास करती रही। उसने अपने आत्मविश्वास को इतना ऊँचा कर लिया कि असंभव-सी बात पूरी कर दिखलाई।

एक साथ तीन स्वर्ण पदक हासिल कर दिखाए। सच यदि व्यक्ति में पूर्ण आत्मविश्वास है तो शारीरिक विकलांगता भी उसकी राह में बाधा नहीं बन सकती।

बंधन से मुक्ति

शशिकांत शर्मा

किसी जंगल में पुराने पीपल पर एक तोता अपने अन्य साथियों सहित बड़े प्रेम से रहता था। एक बार उस वन में एक बहेलिया आया और उसने उसी पेड़ के पास जाल बिछा दिया। उस तोते ने वहाँ कुछ दाने देखे। उस समय वह बहुत भूखा था, इसलिए बहेलिए की चाल को वह समझ नहीं पाया और उसमें फँस गया। बहेलिए ने तोते को फंसा देखा तो वह वह बड़ा प्रसन्न हुआ। तोता बहुत छटपटाया परन्तु बहेलिए के मन में दया कहाँ?

तोते को लिये बहेलिया चला जा रहा था कि उसी मार्ग पर घोड़े पर बैठकर राजकुमार वन-विहार को निकला। उसने तोते को देखा तो वह उसे बड़ा पसन्द आया। उसने बहेलिए से उस तोते को खरीद लिया। राजकुमार ने सोने का एक बड़ा-सा पिंजरा बनवाया और उसमें तोते को बन्द कर दिया। तोता बहुत दुःखी हुआ। उसे अपने साथी, पीपल, जंगल, सरोवर बहुत याद आ रहे थे लेकिन अब क्या हो? यहाँ तो पिंजरे का पंछी था। राजकुमार उस सुग्गे को बहुत पसन्द करता था, अतः उसके पढ़ाने की भी अच्छी व्यवस्था की और कुछ ही समय में वह तोता पढ़कर प्रवीण हो गया।

संयोग ऐसा बना कि एक बार उस देश की राजकुमारी रथ में बैठकर वन-विहार को निकली। उसके साथ उसकी सखियाँ और कुछ सैनिक भी सुरक्षा के लिये थे।

जब वे चलते-चलते बहुत दूर एक जंगल में जा पहुँचे तो उन्होंने देखा कि सामने एक भयंकर डाकू हाथ में ढाल-तलवार लिए खड़ा है। वे सब उसे देखकर चकित हो गए। जो थोड़े से सिपाही साथ थे, उनको डाकू ने कुछ ही समय में मार गिराया और वह रथ समेत राजकुमारी को लेकर घनघोर जंगल में जा छिपा।

कुछ दिन तो राजा ने अपनी पुत्री की प्रतीक्षा की, लेकिन फिर भी राजकुमारी नहीं आई तो उसने खोज करने के लिए चारों ओर अपने आदमी भेजे, फिर भी राजकुमारी का कहीं पता नहीं लगा। आखिर राजा ने ढिंढोरा पिटवा दिया कि जो भी कोई राजकुमारी को खोज लाएगा या उसका पता बता देगा, उसे आधा राज्य प्रदान कर दिया जाएगा। बहुत दिन हो गए लेकिन राजकुमारी का कहीं कोई पता न लगा। राजा, रानी और राजकुमार सभी बहुत दुःखी थे।

एक दिन राजकुमार अपने महल में चिंतित-सा बैठा था। तोते ने राजकुमार की चिन्ता का कारण पूछा तो उसने सारी बात कह सुनाई। तोता भी बहुत दुःखी हुआ। राजकुमारी बहुत दयालु स्वभाव की थी। वह कई बार स्वयं तोते को फल खिलाया करती थी।

एक दिन तोते ने राजकुमार से निवेदन किया—''मैं उड़ने वाला पक्षी हूँ, यदि आप मुझे मुक्त कर दें तो मैं कहीं राजकुमारी का पता लगाने की चेष्टा करूँ। राजकुमार को यह बात जँची और उसने भारी मन से तोते को उड़ा दिया।'' तोता नगर-नगर, ग्राम-ग्राम घूमता रहा परन्तु राजकुमारी का कहीं पता न लगा। आखिर घूमते-फिरते वह अपने पुराने पीपल पर आया तो उसे पुराने साथी मिले। वह उनसे मिलकर बड़ा प्रसन्न हुआ। उनको भी उसके आने से अपार प्रसन्नता हुई। तोते ने अपने साथियों को राजकुमारी से सम्बन्धित सारी बात बतलाई।

संयोग से वह डाकू उस जंगल में रहता था और उसी जंगल में उसने राजकुमारी को भी कैद कर रखा था। तोते के साथियों ने सारी बात तोते को बतला दी। वे सभी उस स्थान पर गए जहाँ राजकुमारी कैद थी। सभी तोते बैठकर उपाय सोचने लगे तो आखिर हल निकल ही आया।

उस जंगल में चूहों की टोली रहती थी, उनके सरदार से निवेदन किया गया कि रात को राजकुमारी के बन्धन काट दिए जाएँ तो बड़ी कृपा हो। मूषक-सरदार ने कहा, ''यह कौन-सी बड़ी बात है।'' उसी रात बंधन काटने की बात सोची गई। संयोग से उस रात डाकू कहीं डाका डालने के लिए गया हुआ था। रात को चूहों ने राजकुमारी के बंधन काट दिए। तोते ने सारी बात समझाकर राजकुमारी को धीरज बँधाया और उसे अपने साथ ले चला। प्रभात होते-होते वे लोग राजधानी के द्वार के पास पहुँच गए। ज्यों ही द्वार खोला गया तो सामने राजकुमारी और उसके साथ तोता था। राजा को यह समाचार सुनाने के लिए लोग दौड़ पड़े।

राजकुमारी से मिलकर सभी बड़े प्रसन्न हुए। राजकुमारी ने तोते की चतुराई की बड़ी प्रशंसा की। राजा भी तोते पर बड़ा प्रसन्न हुआ। उसने तोते से कहा—''पक्षी, जो काम हम मानव नहीं कर सके, वह काम आज तुमने कर दिखाया। अब तुम मेरे आधे राज्य के स्वामी के रूप में मेरे साथ रहोगे।'' तोते ने बड़े ही नम्र शब्दों में राजा से कहा—''राजन् हम प्रकृति-पुत्र हैं। हम न किसी पर राज्य करना चाहते हैं और न ही किसी के राज्य में रहना चाहते हैं। हम तो जो प्रकृति प्रदान कर देती है, उसी को खाकर अपने साथियों के साथ खुशी से रहते हैं। यदि आप वास्तव में मेरे लिए कुछ करना चाहते हैं तो मुझे मुक्त कर दीजिये और साथ ही आज्ञा निकलवा दीजिए कि आगे से इस राज्य में कोई भी मनुष्य किसी भी पक्षी को बंधन में न डाले।'' राजकुमारी बंधन के कष्टों से परिचित हो गई थी।

उसने भी राजा से कहा—''वास्तव में बंधन बहुत अधिक कष्टदायी है।'' राजा तोते के दुःख को समझ गया और उसको उड़ाते हुए बोला—''जाओ पक्षी! आज से मेरे राज्य में कोई भी किसी पक्षी को कैद नहीं कर सकेगा।''

अन्तिम इच्छा

विकास जैन

''भाइयो! मैंने आज तक जीवन में किसी का भला नहीं किया। मेरे कारण आप लोगों को बहुत सारी मुसीबतों का सामना करना पड़ा। आज मैं अपने अन्तिम समय में अपने बुरे कर्मों के लिये आपसे क्षमा-याचना करना चाहता हूँ।

किसी गाँव में धनदास नाम का एक व्यक्ति रहता था। वह बड़ा ही धूर्त था। हरे-भरे परिवार में आग लगा देना उसके बाएँ हाथ का खेल था। भाई-भाई में, बाप-बेटे में, सास-बहू में, जिस किसी घर में प्रेम होता, वह इससे देखा नहीं जाता था। उनको आपस में लड़वाने में उसे बड़े आनन्द की अनुभूति होती थी। वह नित्य बड़े सवेरे उठता, हाथ में लोटा लेकर शौचादि से निपटने हेतु गाँव के बाहर चला जाता था। वापस लौटते समय कहीं ना कहीं, किसी ना किसी परिवार में आग लगाये बिना वह दातून नहीं करता था। वह उसके नित्य नियम का एक हिस्सा-सा बन गया था।

सारा गाँव उसकी इन हरकतों से परेशान था। उसकी पीठ के पीछे सब उसे भला-बुरा कहते थे। परन्तु प्रत्यक्ष में उसका विरोध करने की किसी में हिम्मत नहीं होती थी। हर एक आदमी उससे घबराता था और उसका विरोध करने वाले के साथ तो वह गिन-गिनकर बदले लिया करता था। धनदास के परिवार के सब सदस्य उसकी इस आदत के कारण बहुत दुःखी थे। लोगों की शिकायतें सुन-सुनकर उसके कान पक चुके थे। लेकिन वह किसी की भी नहीं सुनता था।

बड़ी लम्बी आयु तक लोगों को परेशान करते रहने के बाद एक दिन वह बीमार पड़ गया। उसे महसूस हो गया कि अब उसका अन्तिम समय आ गया है। अपना अंत समय निकट आया जानकर बुरे से बुरे व्यक्ति को भी अपने कुकर्मों पर पश्चाताप होता है और वह प्रभु से प्रार्थना करता है कि वह उसे क्षमा कर उसे सद्गति दे। मगर धनदास का इन बस बातों से कोई वास्ता नहीं था। उसे तो इस बात का दुःख था कि उसके मरने के बाद गाँव वाले सुखी हो जायेंगे। उसके बाद उन्हें तंग करने वाला कोई नहीं रहेगा।

इसी बीमारी की हालत में उसने पूरे गाँव वालों को अपने घर बुलाया। सब लोगों के लिये उसने चाय-पानी का इन्तजाम किया। अपने घर आये मेहमानों को कभी पानी भी नहीं पिलाने वाले धनदास के इस सद्-व्यवहार से सारे लोग चकित थे। चाय-पानी के बाद गाँव वालों को सम्बोधित करते हुए वह बोला—''भाइयो! मैंने आज तक जीवन में किसी का भला नहीं किया। मेरे कारण आप लोगों को बहुत सारी मुसीबतों का सामना करना पड़ा। आज मैं अपने अन्तिम समय में अपने बुरे कर्मों के लिये आपसे क्षमा-याचना करना चाहता हूँ। मैंने अपने मुँह से कभी प्रभु का नाम नहीं लिया। सदा आप लोगों के बीच में झगड़ा-फसाद कराने में ही अपने मुँह का उपयोग किया। अतः आप लोगों से मेरी प्रार्थना है कि आप मेरे मरने के बाद मेरे इस काले मुँह में लकड़े का ठूँठ-ठूँसकर, मेरे चेहरे को खुला रखकर, श्मशान घाट तक ले जायें। ताकि लोगों को सबक मिले और मेरे जैसे बुरे कामों से बचे रहें। आशा है आप लोग मेरी इस अन्तिम इच्छा को अवश्य पूरा करेंगे।''

धनदास की इस काया पलट से लोगों को बड़ा ही आश्चर्य हुआ और साथ ही साथ बड़ी प्रसन्नता भी हुई। धनदास की क्षमा याचना से लोगों के दिल बरफ की तरह पिघल गये। उन्होंने धनदास को आश्वासन दिया कि उसकी अन्तिम इच्छा को अवश्य पूरा किया जायेगा। दूसरे दिन ही धनदास की मृत्यु हो गयी। गाँव वालों ने उसकी अंतिम इच्छा के अनुसार उसके मुँह में लकड़े का ठूँठ ठूँस दिया। उसकी लाश को कपड़े से पूरा ढक दिया गया। सिर्फ मुँह खुला रखा गया। ''राम नाम सत्य है'' के नारों के साथ शव-यात्रा शुरू हुई।

शाम का समय था। शव यात्रा बाजार से होकर निकली। आगे थोड़ी ही दूरी पर पुलिस चौकी पड़ती थी। उस दिन थाने में कोई बड़ा अफसर आया हुआ था। नारों की आवाज सुनकर वह थाने से बाहर आया। लाश के मुँह में ठूँसे हुए लकड़े को देखकर उसे सन्देह हुआ। उसने जुलूस को रुकवा दिया और अर्थी नीचे रखने का आदेश दिया। अफसर को दाल में कुछ काला नजर आया।

उसने सोचा कि हो न हो, इन लोगों ने इस बेचारे के मुँह में लकड़ा ठूँस कर इसकी हत्या कर दी है और शाम के अँधेरे में इसे दफनाने हेतु लिये जा रहे हैं।

अफसर ने थाने के अंदर से सिपाहियों को बुलाया और लाश को पुलिस के कब्जे में कर लिया। हजारों सफाई देने पर भी अफसर ने किसी की एक नहीं सुनी और सब शव यात्रियों को हिरासत में लेकर हवालात में बंद करवा दिया। रात भर बेचारे हवालात में बंद रहे। सवेरे गाँव के कुछ प्रमुख लोगों की जमानत देने पर उन्हें छोड़ा गया। अब सब लोगों की समझ में आ गया कि धूर्त धनदास की क्षमा-याचना भी ढोंग थी। मरते-मरते भी उस दुष्ट ने उन बेचारों को हवालात की हवा खिला दी थी।

इस कथा से हमें यह शिक्षा मिलती है कि हमें धूर्त लोगों की चिकनी-चुपड़ी बातों में नहीं आना चाहिये। ऐसे लोग किसी को अपने जाल में फँसाने के लिये अत्यधिक नम्रता दिखाते हैं। उनके हर कार्य के पीछे कुटिलता छिपी रहती है।

काँच की बरनी और दो कप चाय

प्राण शर्मा

जीवन में जब सब कुछ एक साथ और जल्दी-जल्दी करने की इच्छा होती है, सब कुछ तेजी से पा लेने की इच्छा होती है, और हमें लगने लगता है कि दिन के चौबीस घंटे भी कम पड़ते हैं, उस समय ये बोध कथा, 'काँच की बरनी और दो कप चाय' हमें याद आती है।

दर्शनशास्त्र के एक प्रोफेसर कक्षा में आये और उन्होंने छात्रों से कहा कि वे आज जीवन का एक महत्वपूर्ण पाठ पढ़ाने वाले हैं...उन्होंने अपने साथ लाई एक काँच की बड़ी बरनी (जार) टेबल पर रखी और उसमें टेबल टेनिस की गेंदें डालने लगे और तब तक डालते रहे जब तक कि उसमें एक भी गेंद समाने की जगह नहीं बची... उन्होंने छात्रों से पूछा—क्या बरनी पूरी भर गई? हाँ...आवाज आई...फिर प्रोफेसर साहब ने छोटे-छोटे कंकर उसमें भरने शुरू किये, धीरे-धीरे बरनी को हिलाया तो काफी सारे कंकर उसमें जहाँ जगह खाली थी।

समा गये, फिर से प्रोफेसर साहब ने पूछा, क्या अब बरनी भर गई है, छात्रों ने एक बार फिर हाँ... कहा अब प्रोफेसर साहब ने रेत की थैली से हौले-हौले उस बरनी में रेत डालना शुरू किया, वह रेत भी उस जार में जहाँ संभव था बैठ गई, अब छात्र अपनी नादानी पर हँसे... फिर प्रोफेसर साहब ने पूछा, क्यों अब तो यह बरनी पूरी भर गई ना?

हाँ... अब तो पूरी भर गई है... सभी ने एक स्वर में कहा... सर ने टेबल के नीचे से चाय के दो कप निकालकर उसमें की चाय जार में डाली, चाय भी रेत के बीच में स्थित थोड़ी-सी जगह में सोख ली गई... प्रोफेसर साहब ने गंभीर आवाज में समझाना शुरू किया—इस काँच की बरनी को तुम लोग अपना जीवन समझो... टेबल टेनिस की गेंदें सबसे महत्वपूर्ण भाग अर्थात् भगवान, परिवार, बच्चे मित्र, स्वास्थ्य और शौक हैं।

छोटे कंकर मतलब तुम्हारी नौकरी, कार, बड़ा मकान आदि हैं, और रेत का मतलब और भी छोटी-छोटी बेकार सी बातें, मनमुटाव, झगड़े हैं... अब यदि तुमने काँच की बरनी में सबसे पहले रेत भरी होती तो टेबल टेनिस की गेंदों और कंकरों के लिये जगह ही नहीं बचती, या कंकर भर दिये होते तो गेंदें नहीं भर पाते, रेत जरूर आ सकती थी... ठीक यही बात जीवन पर लागू होती है...यदि तुम छोटी-छोटी बातों के पीछे पड़े रहोगे और अपनी ऊर्जा उसमें नष्ट करोगे तो तुम्हारे पास मुख्य बातों के लिये अधिक समय नहीं रहेगा...मन के सुख के लिये क्या जरूरी है ये तुम्हें तय करना है।

अपने बच्चों के साथ खेलों, बगीचे में पानी डालो, सुबह पत्नी के साथ घूमने निकल जाओ, घर के बेकार सामान को बाहर निकाल फेंक, मेडिकल चेक-अप करवाओ... टेबल टेनिस गेंदों की फिक्र पहले करो, वही महत्वपूर्ण हैं... पहले तय करो कि क्या जरूरी है... बाकी सब तो रेत है... छात्र बड़े ध्यान से सुन रहे थे।

अचानक एक ने पूछा, सर लेकिन आपने यह नहीं बताया कि चाय के दो कप क्या हैं? प्रोफेसर मुसकुराए, बोले... मैं सोच ही रहा था कि अभी तक ये सवाल किसी ने क्यों नहीं किया... इसका उत्तर यह है कि, जीवन हमें कितना ही परिपूर्ण और संतुष्ट लगे, लेकिन अपने खास मित्र के साथ दो कप चाय पीने की जगह हमेशा होनी चाहिये।

रिश्तों की नजाकत

तुलसी जैन

संसार सम्बंधों से चलता है। सम्बंधातीत चेतना व्यक्ति को वीतरागता की ओर अग्रसर करती है। यह मनुष्य की महत्ता है। परंतु कभी-कभी इसी असंवेदनशीलता से मनुष्य अव्यावहारिक बन जाता है। रिश्ते बड़े नाजुक होते हैं। तुच्छ स्वार्थ, लालच, अहंकार, क्रोध आदि की वजह से रिश्तों की मिठास में खटास पैदा हो जाती है। सम्बंधातीत चेतना देवोपम है। सम्बन्ध की सही समझ एक सफल व्यक्तित्व की पहचान होती है। वही सम्बंधों की अवहेलना, व्यक्ति के लिए अभिशाप बन जाती है। उसकी लोकप्रियता बाधित होती है।

सम्बंधों में उतार-चढ़ाव आते हैं; क्योंकि आशा व अपेक्षा के अनुकूल बात नहीं होने पर मन का आहत या प्रतिक्रियाशील होना स्वाभाविक है। ऐसे में यदि व्यक्ति का हृदय निरवद्य व स्वार्थ-भावना रहित है, तो स्थिति पुनः सुधर जाती है। घायल रिश्ते फिर से अंतरंग बन जाते हैं। सवाल बस इतना सा है कि कठोर वास्तविकता की खुदरीली नहीं कोमल प्रस्तुति हो। कुइनाइन की गोली अवश्य दी जाए, पर उस पर शहद का लेप लगाकर। एक बात और यहाँ पर उल्लेख करना प्रासंगिक होगा। कभी-कभी कुछ अकल्पित घटनाओं से बिगड़े हुए सम्बंध आश्चर्यजनक ढंग से सुधर जाते हैं एवं बसे-बसाये घर उजड़ भी जाते हैं।

भाई-भाई

राम-लक्ष्मण अथवा राम-भरत का प्रेम देख उनके प्रति मस्तक श्रद्धानत हो जाता है। इस कलि-काल में भी यह संभव है। कभी-कभी भाइयों में विवाद उत्पन्न हो जाता है। सम्बंध अम्लीय बन जाते हैं। लेकिन यह मन-मुटाव स्थायी नहीं होता। सामान्य-सी घटना से रिश्ते फिर ट्रेक पर आ जाते हैं। एक तरफ की नमनीयता दूसरे भाई के हृदय को भी आंदोलित कर देती है। बरसों से जमी बरफ पिघल जाती है।

अविभक्त पंजाब का एक छोटा-सा गाँव। एक छत के नीचे दो भाइयों का परिवार बड़े स्नेह व आनंद से रह रहा था। एक बार 8 फुट x 8 फुट के एक छोटे से आँगन को लेकर बात इतनी बिगड़ गई कि 28 किमी दूर जिला मुख्यालय में एक-दूसरे के विरुद्ध मुकदमा दायर कर दिया गया। दोनों भाइयों में बातचीत तक बंद हो गई। विवाह आदि उत्सव के मौके पर समस्त गाँववासियों को आमंत्रण; किंतु भाई को नहीं। 30 वर्ष तक केस चलता रहा।

एक दिन दोनों भाई अपनी-अपनी बैलगाड़ी से न्यायालय पहुँचे। न्यायाधीश ने आज फिर अगली तारीख दो महीने बाद की घोषित कर दी। बड़े भाई की गाड़ी आगे थी। वह गाड़ी पर खड़ा होकर बैल हाँक रहा था। अचानक उसकी धोती की लाँग खुलकर चक्के में आती दिखाई दी। पीछे छोटा भाई, अपनी गाड़ी में आ रहा था। उसने सोचा भैया की धोती चक्के में आ जाने से वह गिर जाएँगे एवं इन्हें चोट लगेगी। उसने पीछे से आवाज दी—भैया! थोड़ा रुकिये।

30 वर्ष के लम्बे अंतराल के बाद छोटे भाई के मुख से भैया शब्द सुनकर बड़ा भाई रोमांचित हो उठा। पूछा—क्या बात है? छोटे ने कहा—आपकी धोती की लाँग चक्के में आ जाएगी। आप गिर जाएँगे। धोती को सम्हालकर पहन लो।

बड़े भाई ने उतरकर धोती को ठीक कर दिया। बोला—चलो! शहर चलें। छोटा भाई बोला—क्यों भैया! अपनी पेशी तो दो महीने बाद होनी है। आज क्यों जाएँगे?

बड़े भाई ने बड़े मर्म की बात कही—अरे! तू कौन-सी पेशी की बात कर रहा है? जो भाई मेरे गिर जाने को सहन नहीं कर पाता, उसके साथ कैसा केस, कैसा मुकदमा?

बड़े भाई ने अदालत पहुँचकर 64 वर्गफुट के उस आँगन को एवं अपना सब कुछ छोटे भाई के नाम कर दिया। छोटा भाई बिलखते हुए अग्रज के चरणों में लोट गया।

30 वर्ष की कटुता तीन मिनिट में समाप्त हो गई।

उपशांत रहस्य का उद्दीपन

''बीती ताही बिसारी दे, आगे की सुधी लेई''—भारतीय

संस्कृति का यह मंत्र कुशल प्रबंधन का सूत्र भी है। दूसरों की दोष-दुर्बलताओं को क्षमा करने से परिवार में शांत सहवास संभव होता है। जैन संस्कृति में खमत खामणा की दिव्य परम्परा प्रचलित है। फोरगेट एण्ड फोरगिव उसी का परिणाम है। भूले-बिसरे अपशांत प्रसंगों को ईंधन डालकर पुनः प्रज्वलित करने से अनर्थ ही घटित होता है। कभी-कभी यह महाविनाश का कारण बनता है। भारतीय वाङ्मय का यह प्रसिद्ध आर्हती उपाख्यान प्रणिधान योग्य है—

श्रेष्ठी घर के आँगन में बैठकर भोजन कर रहे थे। दोपहर की धूप को उनके मुख मंडल में पड़ते देख धर्मपत्नी ने अपनी आँचल से छाँव कर दी। घर में चार सदस्य। सेठजी, सेठानी, पुत्र और पुत्रवधू। पत्नी को आँचल की आड़ प्रदान करते देख श्रेष्ठी के अधरों पर एक रहस्यमय स्मित हास्य खिलकर विलीन हो गया। रसोई में काम करती बहू ने इसे अच्छी तरह देख लिया। सोते वक्त अपने पति को यह बात बताकर पिताजी के हँसने का कारण जानना चाहा। पति बोला—पिताजी क्यों हँसे, इससे तुम्हें क्या मतलब? पर त्रिया हठ के आगे विवश होकर पिता के सामने यह प्रश्न उठाया। पिता बोला—बेटा! सावधान हो जाओ। यह बात यहीं रहने दो। मैं विनाशकारी अनागत को स्पष्ट देख रहा हूँ।

इस बात में पुत्रवधू की जिज्ञासा को तीव्र कर दिया। मजबूर होकर श्वसुर ने अतीत को उधेड़ते हुए कहा—हम पति-पत्नी गरीबी का तीव्र प्रहार झेल रहे थे। उस समय हमारा यह पुत्र का जन्म नहीं हुआ था। दिन में एक वक्त मुश्किल से खाना मिलता था। वह भी भरपेट नहीं। अनाहार के साथ कलह हम दोनों में लगा रहता था। एक दिन हमारे बीच किसी बात को लेकर झगड़ा हो गया था। मैं कुएँ से पानी निकाल रहा था, उस समय प्रबल आवेश में अपना आपा खोकर तुम्हारी सासू माँ ने आकर मुझे धक्का दिया। मैं सीधा कुएँ में जा गिरा। सौभाग्यवश कुछ लोगों ने मुझे बचा लिया। समय के साथ भाग्य ने करवट ली। परिस्थिति बदली। आज मैं करोड़ों की संपत्ति का स्वामी हूँ। उस समय दो रोटी का जुगाड़ भी नहीं कर पा रहा था। आज पत्नी का व्यवहार पूरा बदल गया है। मेरे पर पड़ रही सामान्य सूर्य-ताप को भी वह सहन नहीं कर पाई। समयचक्र के इस विवर्तन पर मुझे हँसी आई थी।

सासू के विरुद्ध यह गूढ़ ब्रह्मास्त्र प्राप्त कर बहरानी उचित अवसर की प्रतीक्षा करने लगी। एक दिन सासू ने किसी बात पर हलकी सी अप्रसन्नता प्रगट की। बहू ने अस्त्र का प्रयोग कर दिया। बोली—रहने दीजिए, माँ जी! मैं अपने बाप के घर से संस्कार लेकर आई हूँ। पति को कुएँ में धक्का देने की परम्परा मेरे पीहर में नहीं है। दुःख-सुख में अमीरी-गरीबी में पति के साथ आनंद से रहने की सीख मुझे दी गई है। आप अपने अतीत को याद कर चुप रहना, यह आपके लिए और पूरे परिवार के लिए श्रेयस्कर रहेगा।

श्रेष्ठी-पत्नी, बहू के इस अतर्कित आक्रमण से स्तब्ध हो गई। इतिहास, उनकी आँख के सामने लहराने लगा। बहू को कैसे जानकारी हुई? अब किस मुँह सच का सामना करेगी। अपनी इस लज्जा और भय से उसने कुएँ में कूदकर अपनी जान दे दी। अपनी प्रियतमा पत्नी की मृत्यु के लिए स्वयं को दोषी मानकर श्रेष्ठी ने विष-पान कर मृत्यु वरण कर लिया। माँ-बाप की दारुण मृत्यु ने एकमात्र पुत्र को अवसादग्रस्त कर दिया। उसने भी जहर पीकर जीवन तज दिया। पूरे परिवार के इस दुःखद अंत को देखकर पुत्रवधू अपराध-बोध से जर्जरित हो गई। उसने गले में साड़ी लपेट कर छत से नीचे झूलकर अपनी जीवनलीला को समाप्त कर दिया। विस्मृति के गर्भ में लीन अप्रिय प्रसंग या उपशांत कलह का अनावश्यक उद्दीपना का परिणाम देख लिया न!

दूरदृष्टि

रतनचंद जैन

बहुत दिनों की बात है हिमाचल प्रदेश के पहाड़ी गाँव में एक बूढ़ा रहता था, जो महामूर्ख के नाम से चर्चित था। उसके घर के सामने दो बड़े पहाड़ थे, जिससे आने-जाने में असुविधा होती थी। पहाड़ के दूसरी ओर पहुँचने में कई दिन लग जाते।

एक दिन उसने अपने दोनों बेटों को बुलाया और उनके हाथों में फावड़ा थमाकर दृढ़ता से दोनों पहाड़ों को काटकर उनके बीच रास्ता बनाना शुरू कर दिया। यह देखकर कसबे के लोगों ने मजाक उड़ाना शुरू कर दिया—तुम सचमुच महामूर्ख हो। इतने बड़े-बड़े पहाड़ों को काटकर रास्ता बनाना तुम बाप-बेटों के बस से बाहर है।

बूढ़े ने उत्तर दिया—मेरी मृत्यु के बाद मेरे बेटे यह कार्य जारी रखेंगे। बेटों के बाद पोते और पोतों के बाद परपोते। इस तरह पीढ़ी-दर-पीढ़ी पहाड़ काटने का सिलसिला जारी रहेगा। हालाँकि पहाड़ बड़े हैं लेकिन हमारे हौसलों और मनोबल से अधिक बड़े तो नहीं हो सकते। हम निरन्तर खोदते हुए एक न एक दिन रास्ता बना ही लेंगे। आने वाली पीढ़ियाँ आराम से उस रास्ते से पहाड़ के उस पार जा सकेंगी। उस बूढ़े की बात सुनकर लोग दंग रह गए कि जिसे वे महामूर्ख समझते थे उसने सफलता के मूलमंत्र का रहस्य समझा दिया। गाँव वाले भी उत्साहित होकर पहाड़ काटकर रास्ता बनाने के उसके काम में जुट गए। कहना न होगा कि कुछ महीनों के परिश्रम के बाद वहाँ एक सुंदर सड़क बन गई और दूसरे शहर तक जाने का मार्ग सुगम हो गया। इसके लिये बूढ़े को भी दूसरी पीढ़ी की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। दृढ़ संकल्प, लगन और कड़ी मेहनत के साथ-साथ सकारात्मक सोच रहे तो सफलता जल्दी ही प्राप्त हो जाती है।

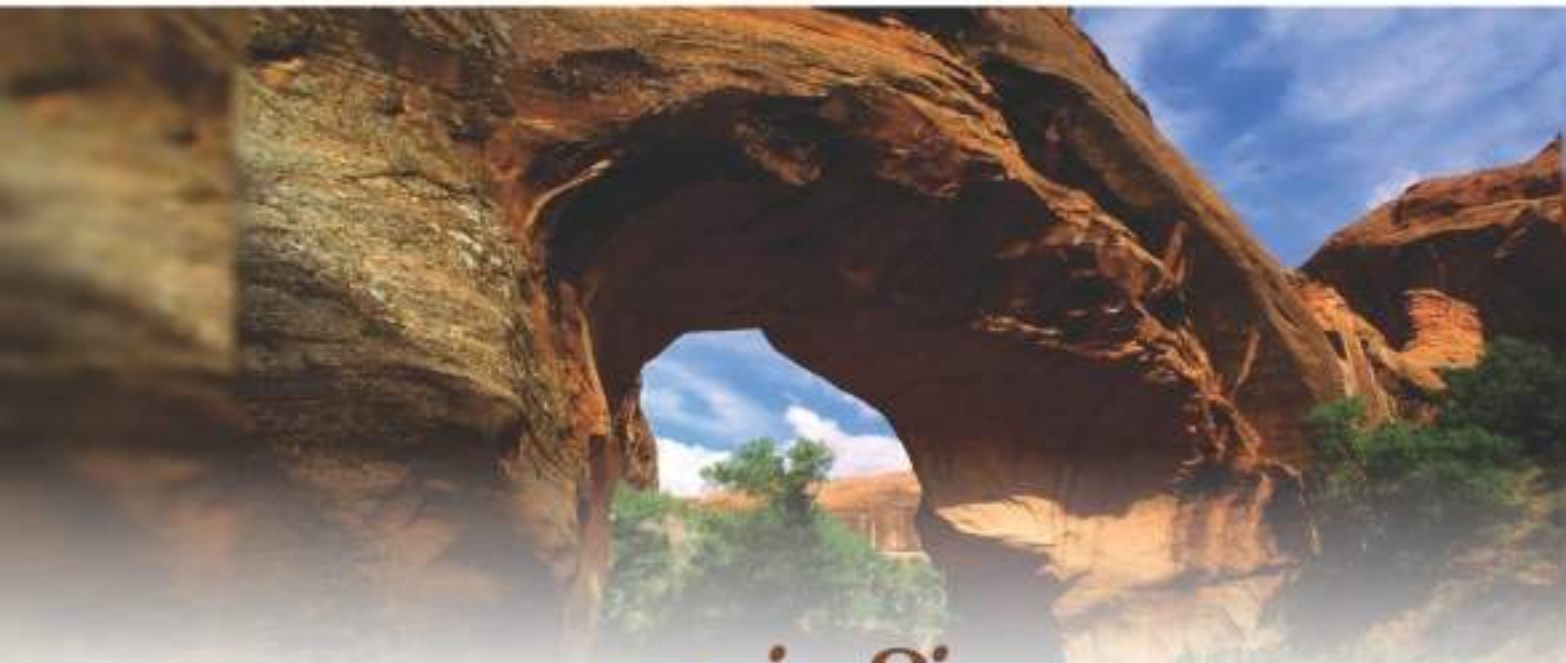

डायमंड रिंग

डॉ. पूनम गुजरानी

मार देने वाली महँगाई के बावजूद यदि किसी महिला से गहनों के बारे में बात करें तो बातों का सिलसिला प्लास्टिक की तरह लंबा होकर घण्टों तक खत्म नहीं होगा। सोने-चाँदी के भावों से लेकर डायमंड तक, बिछुए और रिंग से लेकर नकली कंगन तक, इमीटेशन से लेकर चौबीस कैरेट तक के सबके बारे में वो इतना जानती हैं, जैसे कोई चलता-फिरता इनसाइक्लोपीडिया हो। महँगी-महँगी साड़ियाँ, ब्रान्डेड घड़ियाँ, कपड़े तथा किस मार्केट में कौन-सी चीज किस भाव में मिलेगी इन आधुनिक दिखने वाली, विन्डोशॉपिंग करने वाली महिलाओं की जुबान पर होता है।

किटी पार्टी, होटल, बाजार व बात-बात पर सेलीब्रेशन इनकी जिन्दगी का अहम हिस्सा बनता जा रहा है। किन्तु अपने आस-पास फैले हुये इस काफिले का सुनीति जैसी महिला पर कोई असर नहीं होता।

सुनीति कॉलेज में प्रोफेसर है और सादा जीवन उच्च विचार के भाव को लिये अपनी सादगी, शालीनता, संजीदगी एवं कर्मठता के कारण शहर भर में जानी जाती है। पति बैंक में मैनेजर है तथा एक ही बेटा है अभय। बस, उसी की शादी की तैयारी में लगी है आजकल।

शादी के लिये गहनों की खरीददारी सुनीति के लिये आसान काम नहीं था। वो तो बेटे ने जिद की वरना वो कहाँ इस चमकीले, जगमगाते बाजार की सैर करने वाली थी।

उसका वश चलता तो अपने गहने जो वर्षों पहले शादी के समय उसे मिले थे बहू के हाथ पर खुशी-खुशी धर देती। पर नहीं, बेटे की जिद। सगाई के लिये तो डायमंड की अँगूठी ही चाहिये, मानो अँगूठी न हुई कोई परमवीर चक्र हो गया, जिसके बिना वीरता का प्रमाण नहीं दिया जा सकता।

सुनीति का हाथ धीरे-धीरे अपने सर को सहला रहा था। विचारों का चक्र अनवरत उसके दिमाग को तनाव दे रहा था। हमेशा शांत रहने वाली सुनीति को आज तेज गुस्से में देखा जा सकता था। प्रश्नचिन्हों के भँवर में फँसी सुनीति ने स्वयं से पूछा ऐसा कैसे हो सकता है? कोई ऐसा क्यूँ करता है? कौन-सी बीमार मानसिकता इसके पीछे कार्य करती है? सुनीति को कोई जवाब न सूझा तो स्वयं पर झल्ला पड़ी, न तो वह अँगूठी लेने जाती, न ही लालसाओं की आग में लिपटी उच्चवर्ग की, गहनों से लदी-फदी रहने वाली मौसी की बहू की असलियत से आमना-सामना होता।

श्वेता, कितना प्यारा नाम, पर याद आते ही मुँह कसैला हो गया। छिः...ऐसा भी क्या कि जिसे अपनी निरर्थक इच्छाओं पर लगाम लगाना नहीं आता? तृष्णा तो एक दुधारी तलवार होती है जो दोनों तरफ से काटती है पर क्या मानव इस तृष्णा के इतना वशीभूत हो जाता है कि सही और गलत का भेद भी भूल जाता है? क्या माता-पिता के सद्संस्कारों को तिलांजलि देने में जरा भी तकलीफ नहीं होती...? क्या ये सब माया का चक्कर है? क्या खुशी सिर्फ गहनों और कपड़ों की मोहताज होती है? क्या सुख और शांति पैसों से खरीदी जा सकती है? यदि नहीं तो फिर उसके पीछे भागने का क्या औचित्य? जाने कितने और प्रश्न सुनीति के दिमाग में चक्कर लगाते कि तभी बेटा अभय आ गया। आते ही गले में बाँहें डालकर बोला, 'मेरी प्यारी मम्मी, चलो दिखाओ ना वो डायमंड रिंग जो आपने प्रिया के लिये खरीदी है।'

अपनी तमाम भावनाओं पर काबू पाते हुये बिना कुछ कहे-सुने सुनीति भीतर चली गई। जब लौटी तो हाथ में डायमंड रिंग थी।

वा...ऊ... बड़ी प्यारी रिंग है माँ, किसकी पसंद है...?

तेरी श्वेता भाभी की, कहते-कहते मन फिर कड़वाहट से भर गया।

वही तो.....! मैंने कहा था ना, श्वेता भाभी दिल्ली का कोना-कोना जानती हैं। उससे बढ़िया खरीददारी कोई नहीं करवा सकता। शादी की सारी शॉपिंग उन्हीं के साथ करेंगे।

नहीं... हरगिज नहीं... सुनीति इस तरह तमक कर बोली, कि अभय देखता ही रह गया। हमेशा शांत रहने वाली माँ आज भला किस बात पर गुस्सा है, वो समझ नहीं पाया। डायमंड रिंग को सेन्टर

टेबल पर रख माँ की ओर प्रश्नवाचक नजरों से देखते हुये उसने मीठे स्वर में पूछा, क्या बात है माँ, किस बात पर खफा हो?

नहीं..., कुछ नहीं, अपने आप को सँभालते हुये सुनीति ने कहा।

ऐसा हो ही नहीं सकता..., कोई न कोई बात जरूर है, क्या आपको रिंग पसंद नहीं आई या फिर पैसे ज्यादा लगे...? जो भी बात हो माँ, साफ-साफ कहो। आप, पापा और मैं तीनों कमाते हैं फिर शादी जैसे अवसर पर खर्च न करें तो कब करें? मैं आपको जानता हूँ, आपको सादगी पसंद है पर कभी तो युग के साथ चलना सीखो माँ...। आजकल डायमंड के गहनों का प्रचलन है। हम अपने बजट से थोड़ा ज्यादा खर्च कर भी लेंगे तो क्या फर्क पड़ेगा? शादी-ब्याह जैसे मौके पर ही तो अपना रुतबा कायम किया जाता है। तुम बहुत भोली हो माँ, इस दुनिया को नहीं जानतीं। पैसों की ही तो तूती बजती है चारों ओर, बिना पैसों के तो कोई घास भी नहीं डालता किसी को। अभय लगातार किसी बड़े बुजुर्ग की तरह अपनी माँ को समझाता जा रहा था पर सुनीति उसकी बातों को बड़े अनमयस्क भाव से सुन रही थी।

क्या कह रहा है ये लड़का...? क्या पैसा ही सबकुछ है...? दिखावे के दल-दल में फँसती इस दुनिया पर उसे तरस आ रहा था। वो बिना बोले चुपचाप अभय को देख रही थी।

अभय कुछ और कहता तभी देखा पापा आ गये। वो कहते-कहते चुप हो गया, बस डायमंड रिंग पिता की ओर बढ़ा दी।

मैं देख चुका बेटा, अच्छी लगी। सँभालकर अपनी मम्मी की आलमारी में रख दो।

आप देख चुके, मतलब...? अभय ने पूछा। आप मम्मी के साथ खरीददारी करने गये थे, अभय ने आश्चर्य से कहा।

गया तो नहीं था, पर जाना पड़ा...।

यानी.....मैं समझा नहीं पापा...?

क्या तुम्हारी मम्मी ने तुम्हें कुछ नहीं बताया अभय...? कैसी अजीब दुनिया है। संस्कारों को ताक पर रखकर लोग बस दिखावे में जी रहे हैं। कुछ भी करेंगे बस, अपना घर भरेंगे। ईमानदारी, विश्वास, नैतिकता जैसे गुजरे जमाने की बातें हो गईं। किस पर विश्वास करें, किस पर नहीं, कुछ समझ नहीं आ रहा। जितना ज्यादा पैसा, उतनी ही ज्यादा इच्छाएँ और इन इच्छाओं की पूर्ति बस अन्धेपन के अलावा कुछ नहीं दे सकती। जब कोई मनुष्य अपने मन पर काबू नहीं रख सकता तो पशु से भी गया-गुजरा हो जाता है। विनीत धीरे-धीरे बुदबुदा रहे थे, मानो स्वयं अपनी आत्मा से बातें कर रहे हों।

क्या पापा...! किससे बातें कर रहे हो... मम्मी भी पहले ऐसी ही बातें कर रही थी। और अब आप भी... आखिर हुआ क्या, बताइये तो... अभय ने जिज्ञासा भरे स्वर में लगभग हाथ जोड़कर मन्नत करने के अन्दाज में कहा।

विनीत कुछ कहता उससे पहले ही सुनीति ने धीरे-धीरे बोलना शुरू किया, तुम सुनना चाहते हो तो सुनो बेटा—मैं और तुम्हारी श्वेता भाभी आज अँगूठी खरीदने गये तो भाभी ने पहले तो जाने कौन-कौन से जेवर देखे। मैंने कहा—क्या करती हो श्वेता, मुझे तो सिर्फ अँगूठी चाहिये। वो बोली देखने में क्या हर्ज है। देखते हैं, बाद में कभी मैं लेने आऊँगी तो आइडिया रहेगा। एक नहीं, चार बड़े-बड़े शोरूम खंगाले गये तब जाकर उसने ये अँगूठी पसंद की। खैर! अँगूठी मुझे भी पसंद थी, सो हम पेमेंट करके जैसे ही बाहर निकल रहे थे कि शोरूम से किसी सायरन की आवाज सुनाई दी। वाचमैन ने हमें रोका, श्वेता जल्दी-जल्दी वो अँगूठी और बिल वाचमैन को दिखाकर निकलने की कोशिश करने लगी पर कामयाब नहीं हो पाई। मैं कुछ समझती तब तक दुकान का मालिक आ गया, और कहने लगा, ''भीतर चलिये आपकी तलाशी लेनी है।''

जानते हो, मैं तो गुस्से में बिफर ही पड़ी उस पर। लेकिन वो कुछ सुनने को तैयार ही नहीं था। मैंने तुम्हारे पापा को फोन करके बुलाया। हमारी तलाशी ली गई, श्वेता के पर्स से एक इयररिंग बरामद हुई। वो बहाने बनाने लगी, मुझे नहीं पता ये कहाँ से आया। लगता है किसी ने मेरे पर्स में डाल दिया। आखिर जब दुकान में लगे कैमरे के वीडियो देखे गये तो सारी सच्चाई सामने आ गई। हमें समझ में नहीं आ रहा था कि हम क्या कहें, किससे कहें, क्या करें, क्या ना करें। सच मानो तो माथा पीटने का मन कर रहा था।

इज्जत का फालूदा बनाकर रख दिया उस श्वेता की बच्ची ने! बोलते-बोलते विनीत की मुट्ठियाँ भिंच गईं। कैसे पुलिस की धमकियाँ दे रहा था वो दुकानदार...।

अरे..., इसमें दुकानदार की क्या गलती है। जब अपना ही सिक्का खोटा हो तो किसी को क्या कहा जाये। क्या कमी है मौसी के घर में, बड़ा खानदान, गाड़ियाँ, नौकर-चाकर, जी भर खाओ, जी भर पहनो, सुनीति स्वर को संयत करते हुये बोली।

सही कह रही हो सुनीति...। दिखावा, आडम्बर और होड़ की दौड़ ने व्यक्ति को भ्रमित कर दिया है। सुख की परिभाषा बस अर्थ के इर्द-गिर्द घूम रही है। आज जो हुआ, ऐसे किस्से रोज अखबारों में छाये रहते हैं। समझ में नहीं आता कहाँ जाकर रुकेंगे।

कोई रुके न रुके, हमें इतना ख्याल रखना है कि हम कहीं न भटकें और हमारे बच्चों पर दुनिया के मायावी रूप का असर न होने दें। कम हो तो कम खाकर खुश रहना जरूरी है वर्ना... सुनीति की गहरी निःश्वास बहुत कुछ कह रही थी।

अच्छा प्रोफेसर साहिबा अगर आपका लेक्चर खत्म हो गया हो तो गर्मा-गर्म कॉफी तो पिला दें प्लीज....। इन उल्टे-सीधे चक्करों में मैंने दोपहर का खाना भी नहीं खाया।

जैसे मैंने खाया है..., सुनीति ने आँखें तरेरते हुये कहा।

एक काम करता हूँ आज आप दोनों के लिये कॉफी मैं बनाता हूँ। खाना बाहर कहीं अच्छे लेकिन किफायती रेस्टोरेन्ट में जाकर खाएँगे, क्यों मम्मी ठीक है ना... अभय ने उठते हुये कहा।

बिल्कुल ठीक...। सच मैं बहुत थक गई हूँ कहते-कहते सुनीति ने वहीं सोफे पर पसरकर आँखें मूँद लीं। एक बार फिर उसके दिमाग की शिराओं में सुख, संस्कार, दिखावा आडम्बर, दुनिया, तृष्णा और माया को लेकर कई प्रश्न घूमने लगे, पर जबाव किससे माँगे उसे समझ नहीं आ रहा था।

रिश्तों की पूँजी

स्वपनिल सोनल

एक सेठ का बहुत बड़ा व्यापार था। उसके यहाँ बहुत सारा काम था, इसलिए कई नौकर काम करते थे। उनमें विजय नामक एक रसोइया भी था। वह अकेला ही सबके लिए खाना बनाता था। एक दिन सेठजी खाने बैठे तो उन्हें सब्जी मीठी लगी। उन्हें लगा कि विजय ने गलती से नमक की जगह चीनी डाल दी है, लेकिन वे कुछ नहीं बोले और खाना खा लिया। खाना खाकर सेठजी ने विजय से पूछा, 'क्या तुम परेशान हो?' विजय ने कहा, 'पत्नी कई दिन से बीमार है। यहाँ से जाने के बाद सारी रात उसकी देखभाल में बीत जाती है।' सेठ ने उसे कुछ पैसे देते हुए कहा कि जब तुम्हारी पत्नी ठीक हो जाए, तभी लौटना। उसके जाने के बाद सेठानी ने सेठ से कहा, 'आपने उसे जाने क्यों दिया? सारा काम पड़ा है।' सेठजी बोले, 'उसके मन में अपने से ज्यादा हमारी चिंता है, तभी उसने एक भी छुट्टी नहीं ली। आज उसने सब्जी में चीनी डाल दी। जब बाकी लोग इसे खाएँगे तो उसका मजाक उड़ाएँगे। इसलिए तुम सबके लिए दूसरी सब्जी बना दो।' सेठानी ने कहा कि इतना अमीर होने के बावजूद एक नौकर की चिंता? सेठ ने कहा, 'आज हमारे पास जो भी धन है इन्हीं की मेहनत का फल है। ये रिश्ते जो मैंने कमाए हैं, इन्हें मैं खोना नहीं चाहता। इसलिए मैंने उसे कुछ दिनों के लिए छुट्टी पर भेज दिया।'

उचित शुल्क

आर्यन शर्मा

मथुरा के पास किसी गाँव में एक वैद्य थे। उनके पास दूर-दूर से मरीज आते थे, इसलिए आश्रम हमेशा भरा रहता। एक बार उनके पास एक ही रोग से पीड़ित दो रोगी लाए गए। उनमें से एक धनी व्यापारी का बेटा था तो दूसरा गरीब किसान का बेटा। वैद्य ने दोनों रोगियों को गंभीरता से देखा फिर व्यापारी से कहा, 'आपके बेटे के इलाज में सौ अशर्फियाँ लगेंगी।' यह सुनकर किसान घबरा गया। किसान को परेशान देखकर वैद्य ने कहा, 'तुम्हें यह नहीं देना। जब तक तुम्हारा बेटा ठीक नहीं हो जाता, तब तक तुम यहाँ रहकर दूसरे मरीजों की सेवा करोगे। यही तुम्हारे बेटे के उपचार का शुल्क होगा।' इससे किसान को तो राहत मिल गई लेकिन व्यापारी ने सोचा कि वैद्य उसे ठग रहे हैं। उसने आशंका जताई तो वैद्य बोले, 'मेरे लिए दोनों रोगी बराबर हैं लेकिन तुम लोगों की क्षमताएँ अलग-अलग हैं। मैंने तुम्हारी क्षमताओं के हिसाब से ही शुल्क माँगा है। इस आश्रम को धन व सेवा दोनों की जरूरत है। तुम्हारे पास धन है, जो दवा मँगाने के काम आएगा और इस गरीब किसान के पास सेवा के अलावा कुछ भी नहीं। इसकी सेवा से मरीजों को लाभ होगा। यही सोचकर मैंने अलग-अलग शुल्क माँगे हैं।'

खानखाना की विनम्रता

नमन

अब्दुर्रहीम खानखाना हिंदी काव्य जगत के दैदीप्यमान नक्षत्र हैं। उनके दोहे आज भी लोगों के कंठ में जीवित हैं। ऐसा कौन हिंदी-प्रेमी होगा जिसे उनके दस-पाँच दोहे याद न हों। उनके कितने ही दोहे तो लोकोक्तियों की तरह प्रयोग में लाए जाते हैं।

खानखाना अकबर के दरबार के सबसे बड़े दरबारी थे और तत्कालीन कोई भी अमीर या उभरा पद-मर्यादा या वैभव में उनसे टक्कर न ले सकता था। किंतु वे बड़े उदार हृदय व्यक्ति थे। स्वयं अच्छे कवि थे और कवियों का सम्मान ही नहीं, उनकी मुक्तहस्त से सहायता करते थे। इतने वैभवशाली, शक्तिमान और विद्वान तथा सुकवि होते हुए भी उनमें सज्जन सुलभ विनम्रता भी थी।

उनकी दानशीलता और विनम्रता से प्रभावित होकर गंग कवि ने एक बार उनसे यह दोहा कहा—

'सीखे कहाँ नवाब जू, ऐसी दैनी दैन। ज्यों-ज्यों कर ऊँचौ कियौ, त्यों-त्यों नीचे नैन।।'

खानखाना ने बड़ी सरलता से दोहे में ही उत्तर दिया—

'देनहार कोउ और है, देत रहत दिन-रैन। लोग भरम हम पै करें, तासों नीचे नैन।।'

रहीम के समान ऊँचे व्यक्ति ही यह उत्तर दे सकते हैं।

विवेक से लें निर्णय

स्वपनिल सोनल

एक बार हनुमान जी की भेंट अर्जुन से हुई। हनुमान राम के भक्त थे और अर्जुन श्रीकृष्ण के। दोनों में विवाद हो गया। हनुमान जी राम को और अर्जुन श्रीकृष्ण को बलवान बताने लगे। विवाद का निर्णय न होते देख परीक्षा करने का निश्चय हुआ और शर्त तय हुई कि जो हारे वह आत्महत्या कर ले। अर्जुन ने श्रीकृष्ण का ध्यान किया और समुद्र पर एक विशाल पुल बाँध दिया और हनुमान जी से बोले—''अब यदि तुम्हारे राम बली हैं तो इस पुल को तोड़ दो। यदि न तोड़ सके तो राम का पराक्रम तुच्छ माना जाएगा।'' हनुमान जी पुल पर कूद पड़े।

भगवान को इस बात का पता लगा तो बहुत चिंतित हुए। उन्होंने सोचा कि दोनों को किस प्रकार बचाया जाए। कुछ सोच-विचार कर, वे स्वयं ही पुल के नीचे लेट गए। हनुमान जी ज्यों ही पुल पर कूदे कि उनके भार से भगवान का शरीर चोटिल हो गया, रक्त बहने लगा। हनुमान जी ने श्रीराम को पहचाना और रोने लगे। अर्जुन को भगवान ने श्रीकृष्ण के रूप में दर्शन दिए तो वे भी निकट आकर विलाप करने लगे। भगवान बोले—''मैं एक हूँ, मेरे अनेक रूप हैं। इसलिए झगड़ा नहीं करना चाहिए। कोई विवाद हो तो उसे विवेकपूर्वक हल कर लेना चाहिए।''

कुशल कलाकार

प्रकाश जैन

फिल्म जगत के जाने-माने कलाकार बलराज साहनी अपनी विख्यात फिल्म ''दो बीघा जमीन'' तैयार कर रहे थे। उसमें उनकी भूमिका एक रिक्शा चालक की थी। वह ठहरे पढ़े-लिखे शहरी, रिक्शा-चालक होता है बेपढ़ा देहाती। वह सोचने लगे कि उनकी भूमिका कहीं दर्शकों को बनावटी न लगे। अतः उन्होंने उसकी परीक्षा करने का एक अनोखा ढंग निकाला।

उन्होंने रिक्शा-चालक के कपड़े पहने और इधर-उधर घूमते हुए एक पान वाले की दुकान पर पहुँचे। थोड़ी देर तक एक ओर को चुपचाप खड़े रहने के बाद उन्होंने पनवाड़ी से देहाती भाव-भंगिमा में कहा, ''भैया, सिगरेट का एक पैकेट देना।''

पनवाड़ी ने निगाह उठाकर देखा, सामने एक आदमी खड़ा है, जिसके सिर पर एक अँगोछा लिपटा है और बदन पर देहाती आदमी के कपड़े। उसने उसे दुतकारते हुए कहा, ''जा-जा, बड़ा आया है सिगरेट लेने वाला।'' बलराज साहनी को उसके व्यवहार से बड़ी खुशी हुई और उन्हें भरोसा हो गया कि वह बड़ी खूबी से रिक्शा-चालक की भूमिका अदा कर सकेंगे। कहने की आवश्यकता नहीं कि वह फिल्म बड़ी सफल हुई और उसका श्रेय मिला रिक्शा-चालक की भूमिका निभाने के लिए बलराज साहनी को।

अच्छी नौकरी

योगेश 'नवीन'

बनवारी ने आठवीं तक की शिक्षा गाँव में रहकर ही प्राप्त की। पढ़ाई में होशियार बनवारी हमेशा परीक्षा में अव्वल आता तो उसके माँ-बापू फूले नहीं समाते। अपने पुत्र की शिक्षा में रुचि देखकर उन्होंने उसे शहर में भेजकर हाई स्कूल और ग्रेजुएशन भी करवाया।

शिक्षा पूरी करने के बाद बनवारी नौकरी तलाश करने लगा। कभी कहीं परीक्षा देता, तो कभी किसी कम्पनी में इंटरव्यू देता। वह कभी लिखित परीक्षा में पास हो जाता, तो इंटरव्यू में रह जाता या अनुभव के अभाव में बाहर कर दिया जाता। कई बार लिखित परीक्षाओं में भी वह फेल हो गया। काफी प्रयासों के बाद भी उसे नौकरी नहीं मिली।

कुछ वर्षों तक वह इसी तरह नौकरी के लिए भटकता रहा। शहर में अपने खर्चे के लिए पिता से पैसे मँगवाने में अब उसे शर्म आने लगी थी। एक दिन वह गाँव लौट आया।

बनवारी को देख माँ बहुत प्रसन्न हुई, 'मिल गई बेटा नौकरी?'

बनवारी चुप रहा। माँ समझ गई। 'कोई बात नहीं, इतना पढ़ा-लिखा है तो अच्छी नौकरी ही मिलेगी तुझे।' बनवारी फिर भी कुछ नहीं बोला। उसने अपने सभी सर्टिफिकेट, मार्कशीट और डिग्री माँ के पास बक्से में रखवा दिए।

अगले दिन पिता के जागने से पहले ही बनवारी फावड़ा लेकर अपने खेतों की ओर चल पड़ा।

सच्चा आनंद

कश्मीर से लेकर पाटलिपुत्र तक सभी उग्रश्रवा के नाम से काँपते थे। वह एक दुर्दांत, आततायी के नाम से कुख्यात था और अनेकों के प्राण हरण कर चुका था।

एक दिन महर्षि व्यास अपने शिष्यों के साथ उसके नगर में पधारे। उग्रश्रवा उन्हें प्रणाम करने पहुँचा और उनसे उनकी सेवा करने का आग्रह करने लगा। महर्षि ने उत्तर दिया—''पुत्र! यदि तुम कुछ देना ही चाहते हो तो अपनी नृशंसता का दान दो और यदि यह करने में असमर्थ हो तो पहले मेरा वध करो।''

महर्षि के वचनों को अस्वीकार करना उग्रश्रवा के लिए संभव न था, सो उसने दस्यु-पथ तुरंत त्याग दिया, किंतु उसके अंदर की हिंसा मात्र इतने से तो शांत न हो सकती थी। उसने शांति पाने का उपाय महर्षि व्यास से पूछा तो वे बोले—''वत्स! अब तक तुमने मात्र दूसरों से छीना है, अब तुम अपने हृदय को इतना विशाल बनाओ कि तुम उनके हृदय में शांति पहुँचा सको।

जीवन का सच्चा आनंद दूसरों से उनका सुख छीनने में नहीं, बल्कि उनका दुःख बँटाने में है।'' इतना सुनते ही उग्रश्रवा का हृदय-परिवर्तन हो गया। उसने धर्म और सत्य का पथ अपना लिया और वही उग्रश्रवा आगे चलकर ऋषि सूत के नाम से विख्यात हुआ। उनके पुराण-प्रवचनों को सुनकर अनेकों ने श्रेष्ठ जीवन का चयन किया।

अहंकार की गति

आर.सी. जैन

एक मूर्तिकार उच्चकोटि की ऐसी सजीव मूर्तियाँ बनाता था, जो सजीव लगती थीं, लेकिन उस मूर्तिकार को अपनी कला पर बड़ा घमंड था। उसे जब लगा कि जल्दी ही उसकी मृत्यु होने वाली है तो वह परेशानी में पड़ गया। यमदूतों को भ्रमित करने के लिये उसने एकदम अपने जैसी दस मूर्तियाँ उसने बना डालीं और योजनानुसार उन बनाई गई मूर्तियों के बीच में वह स्वयं जाकर बैठ गया।

यमदूत जब उसे लेने आए तो एक जैसी ग्यारह आकृतियाँ देखकर स्तम्भित रह गए। इनमें से वास्तविक मनुष्य कौन है—नहीं पहचान पाए। वे सोचने लगे, अब क्या किया जाए। मूर्तिकार के प्राण अगर न ले सके तो सृष्टि का नियम टूट जाएगा और सत्य परखने के लिये मूर्तियाँ तोड़ें तो कला का अपमान होगा।

अचानक एक यमदूत को मानव स्वभाव के सबसे बड़े दुर्गुण अहंकार की स्मृति आई। उसने चाल चलते हुए कहा—''काश इन मूर्तियों को बनाने वाला मिलता तो मैं उसे बताता कि मूर्तियाँ तो अति सुंदर बनाई हैं, लेकिन इनको बनाने में एक त्रुटि रह गई।''

यह सुनकर मूर्तिकार का अहंकार जाग उठा कि मेरी कला में कमी कैसे रह सकती है, फिर इस कार्य में तो मैंने अपना पूरा जीवन समर्पित किया है। वह बोल उठा—''कैसी त्रुटि?'' झट से यमदूत ने उसका हाथ पकड़ लिया और बोला, बस यही त्रुटि कर गए तुम अपने अहंकार में। क्या जानते नहीं कि बेजान मूर्तियाँ बोला नहीं करतीं।

खिचड़ी का मर्म

डॉ कल्याण प्रसाद वर्मा

एक बार स्वामी विवेकानंद खेतड़ी पहुँचे। वहाँ पर वे खेतड़ी नरेश अजीत सिंह के घर भोजन के लिए आमंत्रित हुए। भोजन में दोनों के सामने बड़े-बड़े थालों में गर्मागर्म खिचड़ी परोसी गई और उसमें ढेर सारा घी डाला गया।

गर्म खिचड़ी से घी भी बहुत गर्म हो गया था। स्वामीजी ने राजस्थानी सुस्वाद खिचड़ी के बारे में बहुत सुन रखा था। खिचड़ी की सौंधी-सौंधी खुशबू उनका मन अपनी ओर खींच रही थी। उन्होंने तुरंत थाल के बीच में हाथ डाल दिया। हाथ डालते ही गर्म खिचड़ी व गर्म घी से स्वामीजी की अँगुलियाँ जलने लगीं।

अँगुलियों को जब स्वामीजी सहलाने लगे तो समय की नजाकत को देखकर राजा साहब ने कहा, 'मान्यवर, खिचड़ी को बीच में से न खाकर सदैव किनारे से ही खाना चाहिए।' उनके कहने पर स्वामीजी ने ऐसा ही किया, लेकिन जैसे ही खाना संपूर्ण हो गया तो स्वामीजी ने चलते समय कहा, 'राजन्! इस खिचड़ी की घटना से भी मुझे आज ज्ञान प्राप्त हुआ है कि कोई भी काम बीच से प्रारंभ न करके उसके एक छोर से ही प्रारंभ करना चाहिए ताकि परिणाम सुखद रहे और सफलता में कोई संदेह न रहे।'

चोट सही जाती है, कही नहीं जाती

विष्णु प्रभाकर

केदारनाथ का मार्ग सौंदर्य की दृष्टि से जितना अप्रतिम है, चढ़ाई की दृष्टि से उतना ही बीहड़। सौंदर्य सदा काँटों के बीच ही सुरक्षित रहता है।

मार्ग बीहड़ है तो चोट भी बहुत लगती है। वह स्वयं अपनी चोटें देखकर चकित हुआ है। कैसे पैदा होता है अमिट साहस और विश्वास, यह वह उस दिन जान सका जब उसने एक वृद्धा को देखा। एक चट्टान पर से लुढ़क जाने के कारण काफी चोटें आई थीं। पैदल चलना असंभव था।

उनके साथ कई आदमी थे, सहारा दिया। उनके जख्म साफ किए, दवा लगाई, खाने की दवा दी और उसके बाद उन्हें एक कंडी पर बैठाया। पट्टियाँ बँधी थीं। पीड़ा कभी-कभार कसक उठती थी, पर वह सदा की तरह शांत और हँसमुख बनी रही।

अपने साथियों के साथ वह भी उनके पास गया। शिष्टाचारवश बड़ी विनम्रता से उसने कहा, ''माताजी, आपको तो बहुत चोट लगी है, फिर भी आप...''

बात काटकर वे प्यार से बोलीं, ''बेटे! तीर्थों में चोट सही जाती है, कही नहीं जाती।''

अपना-अपना स्वभाव

सीमा खुराना

एक बार एक भला आदमी नदी किनारे बैठा था। तभी उसने देखा एक बिच्छू पानी में गिर गया है। भले आदमी ने जल्दी से बिच्छू को हाथ में उठा लिया। बिच्छू ने उस भले आदमी को डंक मार दिया। बेचारे भले आदमी का हाथ काँपा और बिच्छू पानी में गिर गया।

भले आदमी ने बिच्छू को डूबने से बचाने के लिए दुबारा उठा लिया। बिच्छू ने दुबारा उस भले आदमी को डंक मार दिया। भले आदमी का हाथ दुबारा काँपा और बिच्छू पानी में गिर गया।

भले आदमी ने बिच्छू को डूबने से बचाने के लिए एक बार फिर उठा लिया। वहाँ एक लड़का उस आदमी का बार-बार बिच्छू को पानी से निकालना और बार-बार बिच्छू का डंक मारना देख रहा था। उसने आदमी से कहा, ''आपको यह बिच्छू बार-बार डंक मार रहा है फिर भी आप उसे डूबने से क्यों बचाना चाहते हैं?''

भले आदमी ने कहा, ''बात यह है की बेटा कि बिच्छू का स्वभाव है डंक मारना और मेरा स्वभाव है बचाना। जब बिच्छू एक कीड़ा होते हुए भी अपना स्वभाव नहीं छोड़ता तो मैं मनुष्य होकर अपना स्वभाव क्यों छोड़ूँ?''

मनुष्य को कभी अपना अच्छा स्वभाव नहीं भूलना चाहिए।

कानून का पालन

अमृत

नागपुर की घटना है। कृष्ण माधव घटाटे गुरु जी मा.स. गोलवरकर को कार में कहीं ले जा रहे थे। कार पटवर्धन मैदान के निकट चौराहे के पास पहुँची। यह चौराहा काफी छोटा है।

उस समय चौराहे पर यातायात पुलिस नहीं थी। इसलिए कृष्ण माधव घटाटे ने चौराहे का चक्कर न लगाते हुए कार को दायीं ओर मोड़ना चाहा। इस पर गुरु जी एकदम नाराज हो उठे और कृष्ण माधव घटाटे को पुनः चौराहे का चक्कर लगा कर ही कार दायीं ओर घुमाने को विवश किया।

उन्होंने कहा, ''कानून का पालन न करना भीरुता है।'' पुलिस की अनुपस्थिति में कानून तोड़ना कोई साहस की बात नहीं है। हमें कोई देख रहा है अथवा नहीं इसकी चिंता न करते हुए, हमें व्यक्तिगत अथवा सामाजिक कानूनों का पालन करना ही चाहिए, फिर इसमें हमें कितना ही कष्ट क्यों न उठाना पड़े।

फूलों को क्या हो गया?

क्रांति त्रिवेदी

दीदी को अन्दर आते देख मैं चौंक गया। आज तक वह ऐसे बिना खबर दिये नहीं आई थीं। वह बहुत पहले से ही खबर देती थीं, ताकि उनके रहने का हम पूरा प्रबन्ध कर रखें। जिन सुविधाओं की उन्हें आदत थीं, उनका हमें प्रबन्ध करना ही पड़ता था, फिर भी उनका आना हमेशा उल्लासमय वातावरण की सृष्टि करता था। चाय का प्याला लिए हुए मैं उठ खड़ा हुआ।

''एकाएक कैसे दीदी? खबर भी नहीं दी? मेरे स्वर में हर्ष, विस्मय दोनों थे। चारू ने झट से उनके पैर छुए और उनके हमेशा के आशीर्वाद की प्रतीक्षा में खड़ी हो गई। उसका चेहरा खिल उठा था। मैंने नन्ही और नीतू को आवाज दी, ''बच्चो, चलो तुम्हारे खिलौने आ गए।''

''नन्दू रुको, उन्हें यह कह कर मत बुलाओ। इस बार उनके खिलौने लाना भूल गई हूँ और हाँ, तुम्हारे रसगुल्ले भी नहीं लाई हूँ।'' वह कुछ खोई-खोई आवाज में बोलीं।

''दीदी, अब मैं मान गया कि तुम बूढ़ी हो गई हो। इतने सालों में पहली बार मेरे रसगुल्ले लाना भूली हो।'' मैं हँसकर बोला और उनकी ओर से किसी स्नेह भरे मजेदार उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा, लेकिन देखा उनकी आँखें गीली हो गई हैं। गले में कुछ अटक-सा गया हो ऐसी आवाज में वह बोलीं, ''बूढ़ा होना अपराध तो नहीं है नन्दू।''

मुझे लगा कि सिर पर कोई कड़ी चीज ठक्क से टकरा गई है। दीदी के मुँह से ऐसे शब्द! मैं विमूढ़ की तरह उनका मुँह ताकने लगा, तब चारू आगे बढ़ी। वह बोलती कम थी, काम ज्यादा करती रहती थी।''

''दीदी, मैं सामान उतरवाने जा रही हूँ।''

''इस बार टैक्सी से आई हूँ चारू, सामान उतार कर वह चला गया था। बरामदे से उठवा लो।''

दीदी फिर चुप।

वह कुछ बोले, इसलिए मैंने छेड़ा, ''दीदी, आज क्या पहेलियों की पिटारी लेकर आई हो?''

दीदी ने मुझे उत्तर न दिया और न मेरी ओर ही देखा। मैं समझ गया कि वह अपनी आँखें छिपा रही है।

''चारू, एक प्याला चाय लाओ न। चारू को राहत मिली, वह चौके की ओर जल्दी-जल्दी चली गई। दीदी को मेरे प्रति जितनी आत्मीयता थी, चारू के साथ नहीं। उसके जाते ही दीदी ने मेरी ओर चेहरा घुमाया। उनके सुन्दर चेहरे की त्वचा अब भी चिकनी थी, लेकिन पिछली मुलाकात में दीए-सी जलती आँखों में जो ली मचल-मचल कर हँसती थी, वह बुझ-सी गई थी और शायद इसीलिए आँखों के नीचे काली-काली झाइयाँ गहरा आई थीं। एक क्षण में मैंने दिखलाई देने वाला इतना परिवर्तन देख लिया था, लेकिन इस परिवर्तन की जड़ को उनके बगैर बतलाए जीवन भर भी खोजना मेरे बस की बात न थी।''

''क्यों नन्दू, तुम तो अमेरिका हो आए हो। कैसी जगह है?''

''अच्छा, तो यह बात है। अमेरिका जा रही है तो उसमें ऐसे परेशान होने की क्या बात है? राजीव वहाँ है ही, यहाँ से प्लेन पर हम बिठला देंगे।''

''लगता है अब जाना ही पड़ेगा।'' फिर लम्बी साँस लेकर वह बोली तो मुझे चिढ़-सी आने लगी। जरा-सी बात को इतनी चढ़ा-बढ़ाकर मुझे क्यों त्रास दे रही है।

''क्यों, क्या राजीव ने टिकट भेज दिया है?''

''नहीं, वह क्यों भेजेगा? क्या वह जानता नहीं कि मैं अपनी गृहस्थी छोड़कर कहीं चैन नहीं पाती हूँ। फिर इतनी दूर वह क्यों बुलाएगा?''

''तो फिर?''

''तुम टिकट की चिन्ता क्यों करते हो? बताओ न, अमेरिका कैसी जगह है?''

दीदी की इस व्याकुल-सी आवाज ने मेरे अन्तर में तरह-तरह की शंकाओं को जन्म देना शुरू कर दिया। मुझे ऐसा महसूस हो रहा था, मानो उनके अन्दर कोई दुर्बलता है जो उन्हें अपाहित बना रही है और वह सहारा लेने के लिए हाथ बढ़ाती-बढ़ाती रुक रही है, तब भी अमेरिका से इसका क्या सम्बन्ध! राजेश के अमेरिका जाने के पहले भी ऐसे ही पूछा करती थी—अब कौन जा रहा है। अमेरिका के विषय में उत्सुकता छोड़कर, यों भी वह इतनी बदली-सी दीखती है कि भय-सा लगने लगता है। जो अनहोना-सा था, कुछ-कुछ वैसा ही हो रहा था।

करीब-करीब रोज ही आजकल उनके लिए जीजाजी का पत्र आता था। हर रोज हम सोचते, शायद आज वह बेचैन होकर अपनी गृहस्थी की दुहाई देती हुई रिजर्वेशन कराने के लिए कहेगी। तब सिर्फ अधिक से अधिक इतना ही होता कि हर पत्र के आते ही वह उदास हो जाती। धीरे-धीरे दो महीने बीत गए। इतनी लम्बी अवधि तक वह हमारे पास कभी नहीं रही थी। अब चारू भी किसी न किसी तरह दीदी के जाने की तिथि के विषय में पूछने लगी थी। इतने दिनों में मेरे अन्दर भी प्रश्नों के अम्बार लग गए थे। शंकाओं के समाधान के लिए मैं हर समय उपयुक्त अवसर की तलाश में रहने लगा था। दीदी

अपनी सारी शक्ति के साथ कुछ छिपा रही थी। मुझे लगता था, वह दिन अब अधिक दूर नहीं, जब दीदी स्वयं सब कुछ बता देगी। आखिर वह दिन भी आ ही गया। मैं ऑफिस से लौटा तो वह अपने कमरे के सामने बरामदे में बैठी थी। उसकी गोद में वही परिचित नीले कागज का पन्ना था। उसका चेहरा देखकर मेरे पैर वहीं ठिठक गए। चेहरा ऐसा सपाट, वीरान लग रहा था, मानो कोई बाढ़ आकर सब कुछ बहाकर, पोंछ-पोंछकर ले गई हो। मेरे मन में बहुत सारी शंकाएँ उभरने लगीं और हृदय के किसी कोने में दबा प्रश्न होठों पर आ ही गया, ''क्या हुआ दीदी?''

''आओ, बैठो। मैं यही मना रही थी कि चारू के आने के पहले तुम आ जाओ। मैं अपने दुःखों की छाया भी तुम पर पड़ने नहीं देना चाहती थी, लेकिन अब तुम्हें बताए बिना चलेगा नहीं।'' लम्बी-सी साँस उनके अन्तर्मन से निकली।

''बोलो न दीदी। जब से आई हो मुझे तो तभी से कुछ अजीब-सा लग रहा था।''

''क्या बताऊँ...'' उन्होंने शून्य दृष्टि से देखा, ''तुम्हें तो मालूम ही है कि कैसी सुखी गृहस्थी थी मेरी। तेरे जीजा-जैसा पति, राजेश, रुचिका जैसे बच्चे और ऐसी सम्पन्नता पाकर, किसी की और क्या इच्छा हो सकती है। रुचिका की शादी के बाद जब राजीव जिद करके अमेरिका चला गया तभी तो मानो जीवन में नया मोड़ आ गया। तुम्हारे जीजाजी ने राजीव के लिए एक नया काम शुरू किया था, राजीव के जाने के बाद उन्हें स्वयं ही वह सम्भालना पड़ा। उनके हाथ के जादुई स्पर्श से इस नए काम में भी दिन दूनी रात चौगुनी बढ़ोतरी होने लगी। घर में सम्पन्नता बढ़ती जा रही थी। वह बहुत व्यस्त रहने लगे। बाहर के दौरों की भी संख्या बढ़ गई। बात करने तक का समय नहीं मिलता उन्हें। मिलने आने-जाने वालों में ही बहुत-सा समय निकल जाता, उनके सत्कार में मैं व्यस्त रहने लगी, इस तरह मुझे गृहस्थी से समय नहीं मिलता, और उन्हें व्यापार से।''

उस दिन भी वह रोज की तरह सहजरूप से घर आए, चाय अपने कमरे में पी थी, तब मेरे पास आए। मैं अकेली अपनी चाय लिए बैठी खीज रही थी। यों तो हम अब शायद ही कभी साथ बैठते थे, क्योंकि हमेशा कोई न कोई आया ही करता था, लेकिन उनका स्टडी रूम में अकेले बैठकर चाय पीना अखर रहा था। मैं गूँगी-सी बैठी चाय की ओर देख रही थी और सोच रही थी कि स्टडी रूम में जाऊँ, तब तक वह आ गए थे। मैं कुर्सी पर बैठी थी, वह बाग की ओर खुलने वाले दरवाजे पर खड़े होकर देखने लगे। मेरी ओर पीठ किए वह खोये-खोये से बोले—''चन्दा, तुम एक साल के लिए अमेरिका हो आओ।''

मैंने हँसकर पूछा, ''और मेरी गृहस्थी कौन सम्भालेगा?''

उन्होंने प्रश्न का उत्तर न देकर पूछा, ''इस गृहस्थी में अब रहा क्या है? सामान और नौकर। क्या तुम उनका मोह नहीं छोड़ सकतीं?''

मैं पहले जैसी चंचल तरुणी होती तो छिटक कर कुर्सी से उठती और उनके गले में बाँहें डालकर चौंकाती हुई कहती, ''सामान, नौकर से मेरी गृहस्थी नहीं बनी है। मेरे लिए तो तुम ही गृहस्थी हो।''

दीदी को शायद लगा कि वह कुछ ज्यादा ही कह गई है। कुछ देर रुकी वह और कुछ याद करती-सी बैठी रही। फिर धीरे-धीरे बोलने लगी, उन्होंने मेरे चेहरे की ओर देखा, पर लगता था जैसे कहीं और देख रहे हों। सामान और नौकरों से मोह वाली बात इस बार चुभ गई, और साथ ही वह सब कुछ याद आ गया, जिसका कई महीनों से मुझे धीमा-धीमा आभास हो रहा था। मैं उठ खड़ी हुई और उपेक्षा पर क्रोध प्रगट करने के लिए कह बैठी, ''राजीव, रुचिका की शादी के बाद से मुझे किसी से मोह नहीं रह गया है। वह घर-बार, साज-सामान उन्हीं की धरोहर है। वह पल्टे और मेरे बेजान से झूलते हाथों को अपनी गरम हथेलियों से पकड़कर झकझोरते हुए बोले, ''चन्दा, तुमने मुझे जिता दिया।'' मैं उनके चेहरे पर एकाएक फूट पड़ी खुशी को देखकर चकित रह गई। लगा कोई नया ही आदमी सामने खड़ा है। सैंतालीस की उम्र में उनका चेहरा राजीव जैसा तरुण था। सहसा मुझे शीशे में से झाँकता अपना चेहरा याद आ गया।

उत्कृष्टतम आभूषण-शृंगार-प्रसाधन मेरी उम्र कहाँ छिपा पाते। बालों के किनारे में सफेदी झलकती है, चेहरे की त्वचा पर गृहस्थी की उलझनें अपनी आकृतियाँ बनाने लगी थीं। तब मैंने सोचा था—मेरा चेहरा धूनी रमा कर बैठी तपस्विनी का-सा तेजोमय है। मैं हँसी थी। क्या मैं त्याग-तपस्या की भव्यमूर्ति नहीं लगती हूँ? उनके प्रौढ़मुख के तारुण्य के आकर्षण ने अथवा पत्नीत्व के बोध ने उस क्षण मुझ में घनीभूत अधिकार भावना जगा दी।''

मैंने उसी अधिकार से जानना चाहा कि आखिर उन्होंने मुझे अमेरिका क्यों भेजना चाहा है। मेरी माँग ने उन्हें पच्चीस वर्ष के साथ की मर्यादा निभाने नहीं दी। उन्होंने तिक्त होकर आखिर वह सब कह दिया जो शायद वह एक वर्ष बाद कहते या शायद परिस्थितियों के बदलने पर नहीं भी कहते। फिर उन्होंने सुझाव दिया कि मैं तुम्हारे पास आ जाऊँ और वह सब कुछ लिखकर मुझे भेज देंगे। उसी रात वह कलकत्ता चले गए थे। दो-तीन दिन बाद मैं यहाँ आ गई। जब से आई हूँ, हमारा पत्र-व्यवहार चल रहा है।

उन्होंने कुछ भी नहीं छिपाया। साफ-साफ लिख दिया है, कि वह किसी के प्यार में आकण्ठ डूबे हैं, और शेष जीवन उसी के साथ बिताना चाहते हैं। मैंने उन्हें लिखा था कि वह उसे भी घर में रख सकते हैं, मैं आपत्ति नहीं करूँगी, पर मुझे मेरे संसार से विलग न करें—लेकिन शायद वह तैयार नहीं हो रही है। उसका कहना है कि रोज-रोज मेरा शिकायत भरा चेहरा देखकर वह खुश नहीं रह पाएगी। अब मुझे एक साल उनसे अलग रहना है, ताकि तलाक की वह शर्त पूरी हो सके। उन्होंने इसके बदले मेरे सामने पाँच लाख रुपये और कोठी देने का प्रस्ताव रखा है। नन्दू, वह मुझे प्रलोभन दे रहे हैं कि मैं उन्हें मुक्त कर दूँ।''

इसके आगे दीदी का संयम टूट गया और वह फूट-फूट कर रो पड़ी। मुझे कुछ नहीं सूझा तो मैं उनके पैर पकड़ कर रोने लगा, ''दीदी, भगवान के लिए रोना बन्द करो।

हम सब मिलकर कोई न कोई राह निकालेंगे।'' हम दोनों बहुत देर वैसे ही मूक बैठे रहे—अपने-अपने विचारों में डूबे हुए।

मैं देखता रहा—सामने बैठी दीदी क्या वही दीदी थी, जिसकी छलकती खुशी के छींटे मेरे किशोर मन की सीप में गिरकर, बन्द मोती की तरह अभी भी सुरक्षित थे। जिस दिन उनका विवाह तय हुआ था, उसी दिन से जीजाजी को वह पूजती रही। फूल की तरह खिली तो सिर्फ उन्हीं के लिए, और धरती की तरह सहा तो सिर्फ उन्हीं को सहारा देने के लिए।

ससुराल से वह बहुत कम आती थी, आती भी तो जल्दी चली जाती। मैं जब उनके यहाँ आता तब उनका जीवन देख, उस उम्र में भी महसूस करता था कि जीजाजी मानो एक सागर हैं, और दीदी उनकी लहरों में तिरती एक नन्ही-सी नौका।

उनका सूरजमुखी जीवन कितनी ही बार माँ, पिताजी को झुँझलाहट में डाल देता था। आखिर और भी तो पति-पत्नी हैं। ऐसा समर्पित जीवन मुझे तो आसपास कहीं दीखता न था। जाने उनके मन के उस प्रेम का मूल कहाँ था कि निरन्तर देने के बाद भी चुकता नहीं था। शायद इसी आप्लावन ने पाने वाले को उबा दिया था। वह अपने हरसिंगार के पेड़ की जड़ नम रखने में तन्मय रही, और फूल कोई अन्य चुनने लगा।

चारू के आने की आहट पाकर दीदी ने आँसू पोंछ लिए और प्रकृतिस्थ होने का प्रयत्न करने लगी। स्थिति का सामना करने को अभी वह तैयार न थी।

चारू को देखकर दीदी सम्भलने की कोशिश करने लगी, पर बाद में न जाने क्या सोचकर स्वयं ही चारू को सब बता दिया। चारू सुनकर स्तब्ध रह गई।

उस दिन से हम तीनों ऊपर से स्वाभाविक बने रहने का अभिनय करते रहे, पर हमारे मन की सारी आँधी अन्दर सिमट कर भयानक उत्पीड़न किए रहती। रोज सैर का कार्यक्रम बनता, तरह-तरह का खाना मेज पर लगाया जाता, बैठकें जमतीं, लेकिन हमारे मन की ऊपरी सतह तक ही इनका प्रभाव पहुँच पाता, बच्चे जरूर कुछ खुश नजर आने लगे थे। चारू के मुँह से सब मौके-बेमौके निकल आता—पुरुषों का क्या ठिकाना।

लाख छिपाने पर भी बच्चे अपनी चहेती बुआ के परिवर्तन को महसूस कर रहे थे, कि घर में कुछ उथल-पुथल है। पहले ही बुआ का बिना खिलौने लिए आना उन्हें अखरा था और अब यह एक गुमसुम-सी उदास बुआ उन्हें पहेली-सी लगती। फूलों वाली राजकुमारी की कहानी में फूल कभी नहीं सूखते थे, एक दिन कहानी कहते-कहते उन्हें भी सूखा कह गई। दीदी बेचारी करतीं भी क्या? जिस पौधे की जड़ें सूख गईं, उसमें फूल कैसे खिलातीं!

एक दिन दीदी बोली, ''मैं अलग ही रहूँगी। उनके पाँच लाख रुपए भी न लूँगी सिर्फ ऋषिकेश के आश्रम में रहने का खर्च लगेगा, वह अपने जेवर बेचकर ही चला लूँगी। मेरा जेवर तो मेरा ही है न।''

''दीदी, तुम्हें ऋषिकेश जाने की क्या जरूरत है, मैं जो हूँ।''

मेरे इस कथन पर वह उदास-सी हँसी हँसी थी। उसकी हँसी कह रही थी—जिस घर में पच्चीस साल रही, वह छूट गया तो अब घरों में रहना ही क्या? मैंने भी उनकी दुर्बलता को छूते हुए कहा, ''यह रुपया और घर न लेकर तुम रुचिका, राजीव का भी तो नुकसान करोगी। वे बेघर-बार न हो जाएँगे?'' इससे पहले मैं जीजाजी के पास हो आया था, उन्हें दीदी का संदेश दे दिया था कि वह अभी भी बुरा नहीं मान रही हैं, सब कुछ पहले जैसा ही रहने दें, और उसे भी जो चाहें दें, वह आपत्ति नहीं उठाएगी। लेकिन उन्होंने हर तर्क के अन्त में यही कहा कि वह विवश हैं। क्या विवशता है, यह मैं पूछ न सका, न उन्होंने बताया ही। लेकिन मैं जानता था अब उनके जीवन में दीदी का कोई स्थान नहीं रहा।

धीरे-धीरे एक वर्ष बीत गया, और अब दीदी ने हथियार डाल दिए थे। पूरे वर्ष मैं उन्हें तरह-तरह से समझाता रहा कि अस्तित्वहीन की आशा में रहकर उनका स्वयं को भटकाना व्यर्थ है, वह समझाने में मुझे बहुत मेहनत करनी पड़ती थी, एक बार तो खीज कर कह भी गया था, ''दीदी, समझ क्यों नहीं लेतीं कि जीजाजी का अस्तित्व नहीं रहा—वह नहीं रहे—तुम विधवा हो।''

सालभर रोते-रोते उनके आँसू सूख गए थे, इतनी कठोर बात सुनकर वह जड़वत बैठी रह गई थीं।

दीदी की ओर से तलाक का आवेदन-पत्र भेजा जाना था। जीजाजी ने स्वयं प्रस्ताव रखा कि उन पर चरित्रहीनता का आरोप लगा दिया जाए। प्रौढ़ावस्था के अंधे प्रेम में वेग में वह बौरा-से गए थे। आवेदन-पत्र जाने के एक दिन पहले वह पाँच लाख रुपये का ड्राफ्ट और मकान के कागज लेकर मेरे यहाँ आए। समझौते के अनुसार दोनों ओर के परिवारों के सदस्य एकत्र थे। सबके सामने वह पाँच लाख रुपए और महलनुमा कोठी दीदी को देकर भारमुक्त होना चाहते थे।

जाने क्यों जीजाजी अपने हाथों से उन्हें यह सब देना चाहते थे। दीदी ने सामने आने से मनाकर दिया, फिर ऐड़ी-चोटी का जोर लगाकर मैं किसी तरह उसे बैठक में ले आने में सफल हो सका। दीदी की कृश-काया देखकर शायद उनकी अन्तरात्मा पसीज उठी होगी, उन्होंने कुछ झेंप कर आँखें झुका लीं और उसी तरह आँखें झुकाए-झुकाए ड्राफ्ट आगे बढ़ाया। दीदी एकटक जीजाजी को देखती जा रही थीं।

उस कमरे में वह अन्य लोगों की उपस्थिति को भी भूल चुकी थीं। उनकी पगलाई-सी आँखें मानो जीजाजी के उस चित्र को हमेशा-हमेशा के लिए अपने में अंकित कर लेना चाहती थीं। बेसुध-सी वह खड़ी रहीं।

जीजाजी का आगे बढ़ा हाथ नीचे गिर गया। पाणिग्रहण बेला जैसा ही अर्थभरा यह विच्छेद का क्षण हो रहा था। हम सब ठगे-ठगे से खड़े जीवन-प्रांगण में घटित वह नाटक—अनोखा नाटक देख रहे थे। फिर हमने जीजाजी का स्वर सुना, ''चन्दा, तुमने मेरे लिए इतना किया—अब इस ड्राफ्ट को लेकर आखिरी अहसान भी कर दो!''

जीजाजी की आवाज ने शायद उसके मन के किसी तार को छू लिया था। वह उनकी ओर उसी दृष्टि से देखती अनियंत्रित स्वर में बोली, ''नहीं, नहीं मैं यह ड्राफ्ट नहीं, ले सकती। दे सको तो तुम मेरे पिछले पच्चीस वर्ष लौटा दो...।''

और वह मेरे हाथों में अचेत होकर लुढ़क गई।

अबला-पतंग

नेमीचन्द पटोदिया

एक थी सुन्दर पतंग। एक लाड़ले पुत्र ने उसे देखा और उचित मूल्य देकर अपनी हवेली में आनन्द से ले आया। धनी पुत्र ने उस सुन्दर पतंग को बड़े सुरुचिपूर्ण ढंग से अपनी रंगशाला में रखा और उसके लिए रंगीन रेशमी डोर का भी प्रबन्ध किया। उस सुन्दर पतंग और आकर्षक रेशमी डोर की लाड़ले के संगी-साथियों ने बहुत प्रशंसा की। पतंग भी यह सब देखकर अपने भाग्य को सराहती थी। वह लाड़ला अपनी सुन्दर पतंग को हवेली की छत पर ले गया और उसे उड़ाया। पतंग भी ऊपर उठी व लाड़ले की डोरी के अनुकूल यहाँ-वहाँ, ऊपर-नीचे घूमी और उड़ी। उसने ऊपर से अपनी हवेली, मोहल्ला, गली, कूचे, बाजार व राजमार्ग देखे। देखकर उसे बहुत आनन्द आया।

एक दिन रंगशाला में टँगी पतंग ने सोचा कि मैंने नगर का एक अंश ही देखा है। और उसे बारबार देखकर अब ऊब गयी हूँ। मैंने वन, शैल, नदियाँ, सरोवर, झील आदि के नाम सुने हैं पर देखे नहीं हैं। मेरा मन तो इन चीजों को देखने को मचल रहा है पर मेरी बेबसी है। मैं परतंत्र हूँ। मैं डोर से बँधी लाड़ले की कठपुतली हूँ। मुझे जिस ओर मेरा मालिक चाहता है उस ओर जाना पड़ता है। न मैं ऊँची उड़ सकती हूँ और न अपनी चाह भरी दिशा में जा सकती हूँ। मैं मात्र बन्दी हूँ, परतंत्र हूँ। दूसरे के इशारे पर मुझे नाचना पड़ता है। गुलामी में जीना भी कोई जीना है। यह तो अभिशाप है, ऐसा सोचकर वह उदास व विषण्णमुखी हो गयी। वह उदासमुखी हो एक दिन उड़ रही थी तो उसकी सखी बयार ने उसकी पीठ थपथपाकर पूछा कि वह आज क्यों उदास व अनमनी है? पतंग ने अपनी तंग जीवन की कथा सुनाई और अपने हृदय में संचित साधों का वर्णन किया। फिर वेदना-भरे शब्दों में कहा कि मुझ परतंत्र पतंग के तंग जीवन का रंग तो बदरंग ही रहता है, पर स्वतंत्रता के रंग में अपने अंग-अंग को सराबोर करने की साधना अपने हृदय में संग-संग लिये जी रही हूँ। आशंका है इस अधूरी साधना को लिये उसकी अन्तिम बेला न आ धमके। सखी के दुःखी हृदय की बात सुनकर बयार ने भी उसे उकसाया। बोली—मेरा जीवन स्वतंत्र है। मैं जहाँ चाहूँ जाऊँ, कोई रोक-टोक नहीं, कोई बन्धन नहीं, पराधीन जीवन भी कोई जीवन है? तेरे स्वतंत्र होने का एक उपाय मुझे सूझा है, वह उपाय है कि जब तेरे स्वामी तुझे ऊपर उड़ाये उस समय मैं जोर से बहकर तुझे दूसरी पतंग से उलझा दूँगी फिर तेरे बन्धन मेरे प्रवाह से टूट जायेंगे। तू मुक्त हो जायेगी। फिर हम दोनों दूर-दूर तक खूब ऊँचे उड़ेंगे। योजना सफल हुई। पतंग स्वतंत्र हो बयार के साथ उड़ी। पतंग भी हरित वन, सुन्दर शैल, उमड़ती नदियाँ और स्वच्छ सरोवर को देखकर आनन्द विभोर हुई। अपनी बयार सखी को निहारने लगी। नव स्वतंत्र जीवन को पाकर वह आनन्द से नाचने लगी और अपने जीवन को धन्य मानने लगी। इतने में उसे एक बादल का टुकड़ा अपनी ओर आता दिखाई दिया। वह बयार से बोली—''मित्र इस दुष्ट से बचाओ।'' बयार ने कहा कि वह तो मेरा घनिष्ठ मित्र है। वह मुझे शीतलता देता है। हम दोनों अठखेलियाँ करते साथ-साथ घूमा करते हैं। मैं स्वयं उसके पास जा रही हूँ। वह बादल का टुकड़ा नजदीक आया। कुछ बूँदों से ही पतंग घबरा गई। वह उड़ना भूल गयी, नीचे की ओर जाने लगी। उसने सहायता के लिए पुकार की। पर बयार तो बादल की हमजोली बन गयी थी पतंग निःसहाय हो नीचे गिरने लगी और अन्त में एक कीचड़ भरे स्थान में गिरकर उसके स्वतंत्र जीवन का अन्त हुआ। मरने से पहिले उसने कहा—जो अपने मालिक की प्रेम-डोर में बँधी रहती है वह सौभाग्यवती है। जो इस डोर को तोड़कर स्वतंत्र या उच्छृंखल होती है उसकी दशा मेरी तरह दुर्भाग्यपूर्ण होती है और मृत्यु दुःखद होती है।

एक अमर गाथा

किशनगढ़ राजस्थान में छोटी रियासत थी। उसके शासक थे महाराज मदनसिंहजी। उनको गद्दी पर बैठे पूरा एक वर्ष भी न हुआ था कि किशनगढ़ रियासत में भीषण अकाल पड़ा। वैसे राजस्थान के अन्य भाग भी अकाल की चपेट में आ गये थे। उनके सिंहासनारूढ़ होने को प्रजा अमांगलिक न समझे इससे महाराज मदनसिंहजी ने प्रजा के लिए अन्न जुटाने के बहुत प्रयत्न किये। आस-पास की रियासतों में भी यही समस्या होने से उनको इसमें विशेष सफलता नहीं मिली। तब उन्होंने सेना के लिए सुरक्षित अनाज का आधा भाग प्रजा को सस्ते दामों में देने के लिए निकाल लिया। कुछ राहत हुई, फिर भी अधिकांश प्रजा त्राहि-त्राहि करने लगी। उन्होंने निजी अन्न भण्डार भी बहुत कुछ खाली कर दिये, किन्तु समस्या न सुलझी। महाराज चिन्तित से महल में बैठे थे कि उनके पास एक संदेशा आया कि सेठ बलवन्तराव मेहता 500 ऊँटों पर अनाज भर आगरा से अजमेर के व्यापारियों को बेचने के लिए आ रहे हैं। महाराज ने अपने खास मुसाहिब को सेठ बलवन्तराव मेहता को लाने के लिए तुरन्त भेजा। सेठ बलवन्तराव मेहता आये। महाराज ने सेठ के सामने राज्य की अन्न-समस्या रखी और मेहताजी से कहा—वे अनाज-भरे ऊँट उन्हें बेच दें। वे दुगने दाम देने को तैयार हैं। सेठ उत्तर सोच ही रहे थे कि महाराज बेचैनी से बोल उठे—''अच्छा तिगुने दाम, चौगुने दाम ले लो, सेठ! पर अनाज हमें ही बेचो।'' मेहताजी नम्रता से बोले—''महाराज! मैंने यहाँ आकर जो देखा है और समझा है उससे इसी नतीजे पर पहुँचा हूँ कि मैं यहाँ अनाज नहीं बेच सकूँगा।'' यह सुनकर महाराजा का हृदय निराशा से भर गया। उन्हें लगा कि डूबते को जो सहारा दिखाई दिया था वह भी पास आकर छूट गया। गहरा विषाद उनके मुख पर छा गया और उनकी आँखें छलछला आयीं। यह देख सेठ बोले—''महाराजा साहब! मैंने प्रजा की हालत देखी है। मेरा हृदय दयार्द्र हो उठा है, मैं दया-धर्म, अहिंसा का अनुयायी हूँ, अतः मेरा निवेदन है कि दुःखी प्रजा भाइयों की सेवा करने का अवसर मुझे दें। मैं अपने अनाज भरे 500 ऊँट प्रजाहितार्थ आपको निर्मूल्य भेंट करता हूँ और दो माह बाद पुनः 500 ऊँट अनाज आगरा से ला दूँगा जिससे वर्षा आने तक राज्य में अनाज की कमी नहीं रहेगी।'' इस अप्रत्याशित सुसंदेश को सुनकर महाराज ने दौड़कर मेहताजी को गले लगा लिया और कहने की इच्छा होने पर भी उनका रुँधा गला कुछ कह न सका, पर भीगी-भीगी आँखें सब कुछ कह गयीं। मेहताजी का हृदय भी महाराजा के स्नेहालिंगन से भर आया और आँखों तक उभर आया। उन्होंने झुककर महाराज को प्रणाम किया और कहा—''मैं उपकृत हूँ कि श्रीमान् ने मेरी तुच्छ भेंट स्वीकार कर ली है।'' महाराजा ने मेहताजी का बहुत सत्कार किया और जागीर के साथ श्रेष्ठ पदवी भी उन्हें देना चाही, किन्तु उन्होंने सविनय इनकार कर दिया कि यह दया-धर्म के साथ सौदा हो जायेगा। वे पुण्य नहीं बेचना चाहेंगे। किशनगढ़ राज्य में यह गाथा अमर बन गयी।

तरक्की की चाहत में

भीष्म साहनी

आज मिस्टर शामनाथ के घर चीफ की दावत थी। शामनाथ और उनकी धर्मपत्नी को पसीना पोंछने की फुर्सत न थी। पत्नी ड्रेसिंग गाउन पहने, उलझे हुए बालों का जूड़ा बनाए, मुँह पर फैली हुई सुर्खी और पाउडर को मले और मिस्टर शामनाथ चीजों की फेहरिस्त हाथ में थामे, एक कमरे से दूसरे कमरे में आ-जा रहे थे। आखिर पाँच बजते-बजते तैयारी मुकम्मल होने लगी। कुर्सियाँ, मेज, तिपाइयाँ, नैपकिन, फूल, सब बरामदे में पहुँच गए। खाने का इन्तजाम बैठक में कर दिया गया। अब घर का फालतू सामान अलमारियों के पीछे और पलंगों के नीचे छिपाया जाने लगा। तभी शामनाथ के सामने सहसा एक अड़चन खड़ी हो गई, माँ का क्या होगा?

इस बात की ओर न उनका और न उनकी कुशल गृहिणी का ध्यान गया था। मिस्टर शामनाथ ने श्रीमती की ओर घूमकर अंग्रेजी में बोले—''माँ का क्या होगा?'' श्रीमती काम करते-करते ठहर गई, और थोड़ी देर तक सोचने के बाद बोलीं—''इन्हें पिछवाड़े इनकी सहेली के घर भेज दो रात-भर बेशक वहीं रहें। कल आ जाएँ। शामनाथ सिकुड़ी आँखों से श्रीमती के चेहरे की ओर देखते हुए पलभर सोचते रहे, फिर सिर हिलाकर बोले—''नहीं, मैं नहीं चाहता कि उस बुढ़िया का आना-जाना यहाँ फिर से शुरू हो। पहले ही बड़ी मुश्किल से बन्द किया था। माँ से कहें कि जल्दी ही खाना खाकर के शाम को ही अपनी कोठरी में चली जाएँ। मेहमान करीब आठ बजे आएँगे इससे पहले ही अपने काम से निबट लें।''

सुझाव ठीक था। दोनों को पसन्द आया। मगर फिर सहसा श्रीमती बोल उठीं—''जो वह सो गयीं और नींद में खर्राटे लेने लगीं तो? साथ ही तो बरामदा है, जहाँ लोग खाना खाएँगे।'' ''तो इन्हें कह देंगे कि अन्दर से दरवाजा बन्द कर लें। मैं बाहर से ताला लगा दूँगा। या माँ को कह देता हूँ कि अन्दर जाकर सोयें नहीं, बैठी रहें, और क्या?'' ''और जो सो गईं, तो? डिनर का क्या मालूम कब तक चले।

शामनाथ कुछ खीज उठे, हाथ झटकते हुए बोले—''अच्छी-भली यह भाई के पास जा रही थीं। तुमने यों ही खुद अच्छा बनने के लिए बीच में टाँग अड़ा दी।'' ''वाह! तुम माँ और बेटे की बातों में मैं क्यों बुरी बनूँ? तुम जानो और वह जानें।''

मिस्टर शामनाथ चुप रहे। यह मौका बहस का न था, समस्या का हल ढूँढ़ने का था। उन्होंने घूमकर माँ की कोठरी की ओर देखा। कोठरी का दरवाजा बरामदे में खुलता था। बरामदे की ओर देखते हुए झट से बोले—''मैंने सोच लिया है'', और उन्हीं कदमों माँ की कोठरी के बाहर जा खड़े हुए। माँ दीवार के साथ एक चौकी पर बैठी, दुपट्टे में मुँह-सिर लपेटे, माला जप रही थीं। सुबह से तैयारी होती देखते हुए माँ का भी दिल धड़क रहा था। बेटे के दफ्तर का बड़ा साहब घर पर आ रहा है, सारा काम सुभीते से चल जाये।

''माँ, आज तुम खाना जल्दी खा लेना। मेहमान लोग साढ़े सात बजे आ जायेंगे।'' माँ ने धीरे से मुँह पर से दुपट्टा हटाया और बेटे को देखते हुए कहा, ''आज मुझे खाना नहीं खाना है, बेटा, तुम जो जानते हो, ज्यादा मिर्च मसाला तो मैं कुछ नहीं खाती।''

''जैसे भी हो, अपने काम से जल्दी निबट लेना।'' ''अच्छा, बेटा।'' ''और माँ, हम लोग पहले बैठक में बैठेंगे। उतनी देर तुम यहाँ बरामदे में बैठना। फिर जब हम यहाँ आ जाएँ, तो तुम गुसलखाने के रास्ते बैठक में चली जाना।'' माँ अवाक् बेटे का चेहरा देखने लगीं। फिर धीरे से बोलीं—''अच्छा बेटा।'' ''और माँ आज जल्दी सो नहीं जाना। तुम्हारे खर्राटों की आवाज दूर तक जाती है।''

माँ लज्जित-सी आवाज में बोलीं—''क्या करूँ बेटा, मेरे बस की बात नहीं है। जब से बीमारी से उठी हूँ, नाक से साँस नहीं ले सकती।'' मिस्टर शामनाथ ने इन्तजाम तो कर दिया, फिर भी उनकी उधेड़-बुन खत्म नहीं हुई। जो चीफ अचानक उधर आ निकला, तो? आठ-दस मेहमान होंगे, देसी अफसर, उनकी स्त्रियाँ होंगी, कोई भी गुसलखाने की तरफ जा सकता है। क्षोभ और क्रोध में वह झुँझलाने लगे। एक कुर्सी को उठाकर बरामदे में कोठरी के बाहर रखते हुए बोले—''आओ माँ, इस पर जरा बैठो तो।''

माँ माला संभालतीं, पल्ला ठीक करती उठीं, और धीरे से कुर्सी पर आकर बैठ गईं। ''यों नहीं, माँ, टाँगें ऊपर चढ़ाकर नहीं बैठते। यह खाट नहीं है।'' माँ ने टाँगें नीचे उतार लीं। ''और खुदा के वास्ते नंगे पाँव नहीं घूमना। न ही वह खड़ाऊँ पहनकर सामने आना। किसी दिन तुम्हारी यह खड़ाऊ उठाकर मैं बाहर फेंक दूँगा।''

''माँ चुप रहीं।'' ''कपड़े कौनसे पहनोगी, माँ?'' ''जो हैं, वही पहनूँगी, बेटा! जो कहो, पहन लूँ।'' मिस्टर शामनाथ फिर अधखुली आँखों से माँ की ओर देखने लगे, और माँ के कपड़ों की सोचने लगे। शामनाथ हर बात में तरतीब चाहते थे। घर का सब संचालन उनके अपने हाथ में था। खूँटियाँ कमरों में कहाँ लगायी जायें, बिस्तर कहाँ पर बिछे, किस रंग के पर्दे लगाये जाएँ, श्रीमती कौन-सी साड़ी पहनें, मेज किस साईज की हो। शामनाथ को चिन्ता थी कि अगर चीफ का साक्षात माँ से हो गया, तो कहीं लज्जित नहीं होना पड़े। माँ को सिर से पाँव तक देखते हुए बोले—''तुम सफेद कमीज और सफेद सलवार पहन लो, माँ। पहन के आओ तो, जरा देखूँ।''

माँ धीरे से उठीं और अपनी कोठरी में कपड़े पहनने चली गयीं।

''यह माँ का झमेला ही रहेगा, उन्होंने फिर अँग्रेजी में अपनी स्त्री से कहा—''कोई ढंग की बात हो, तो भी कोई कहे। अगर कहीं कोई उल्टी-सीधी बात हो गयी, चीफ को बुरा लगा, तो सारा मजा जाता रहेगा।'' माँ सफेद कमीज और सफेद सलवार पहनकर बाहर निकलीं। छोटा-सा कद, सफेद कपड़ों में लिपटा, छोटा-सा सूखा हुआ शरीर, धुँधली आँखें, केवल सिर के आधे झड़े हुए बाल पल्ले की ओट में छिप पाये थे। पहले से कुछ ही कम कुरूप नजर आ रही

थीं। ''चलो, ठीक है। कोई चूड़ियाँ-वूड़ियाँ हों, तो वह भी पहन लो। कोई हर्ज नहीं।'' ''चूड़ियाँ कहाँ से लाऊँ, बेटा? तुम तो जानते हो, सब जेवर तुम्हारी पढ़ाई में बिक गए।''

यह वाक्य शामनाथ को तीर की तरह लगा। तिनककर बोले—''यह कौन-सा राग छेड़ दिया, माँ! सीधा कह दो, नहीं हैं जेवर, बस! इससे पढ़ाई-वढ़ाई का क्या ताल्लुक है! जो जेवर बिका, तो कुछ बनकर ही आया हूँ, निरा लँडूरा तो नहीं लौट आया। जितना दिया था, उससे दुगना ले लेना।'' ''मेरी जीभ जल जाए, बेटा, तुमसे जेवर लूँगी? मेरे मुँह से यों ही निकल गया। जो होते, तो लाख बार पहनती!''

साढ़े पाँच बज चुके थे। अभी मिस्टर शामनाथ को खुद भी नहा-धोकर तैयार होना था। श्रीमती कब की अपने कमरे में जा चुकी थीं। शामनाथ जाते हुए एक बार फिर माँ को हिदायत करते गए—''माँ, रोज की तरह गुमसुम बन के नहीं बैठी रहना। अगर साहब इधर आ निकलें और कोई बात पूछें, तो ठीक तरह से बात का जवाब देना।'' ''मैं न पढ़ी, न लिखी, बेटा, मैं क्या बात करूँगी। तुम कह देना, माँ अनपढ़ है, कुछ जानती-समझती नहीं। वह नहीं पूछेगा।'' सात बजते-बजते माँ का दिल धक-धक करने लगा। अगर चीफ सामने आ गया और उसने कुछ पूछा, तो वह क्या जवाब देंगी। अंग्रेज को तो दूर से ही देखकर घबरा उठती थीं, यह तो अमरीकी है। न मालूम क्या पूछे। मैं क्या कहूँगी। माँ का जी चाहा कि चुपचाप पिछवाड़े विधवा सहेली के घर चली जाएँ। मगर बेटे के हुक्म को कैसे टाल सकती थीं। चुपचाप कुर्सी पर से टाँगें लटकाये वहीं बैठी रहीं।

शामनाथ की पार्टी सफलता के शिखर चूमने लगी। वार्तालाप उसी रौ में बह रहा था, कहीं कोई रुकावट न थी, कोई अड़चन न थी। साहब को तैयारी पसन्द आई थी। मेमसाहब को पर्दे पसन्द आए थे, सोफा-कवर का डिजाइन पसन्द आया था, कमरे की सजावट पसन्द आई थी। इससे बढ़कर क्या चाहिए। साहब तो दूसरे दौर में ही चुटकुले और कहानियाँ कहने लग गए थे। दफ्तर में जितना रोब रखते थे, यहाँ पर उतने ही दोस्त-परवर हो रहे थे और उनकी स्त्री, काला गाउन पहने, गले में सफेद मोतियों का हार, सेन्ट और पाउडर की महक से ओत-प्रोत, कमरे में बैठी सभी देसी स्त्रियों की आराधना का केन्द्र बनी हुई थीं। बात-बात पर हँसी, बात-बात पर सिर हिलातीं और शामनाथ की स्त्री से तो ऐसे बातें कर रही थीं, जैसे उनकी पुरानी सहेली हों।

और इसी रौ में साढ़े दस बज गए। वक्त गुजरते पता ही न चला। आखिर सब लोग खाना खाने के लिए उठे और बैठक से बाहर निकले। आगे-आगे शामनाथ रास्ता दिखाते हुए, पीछे चीफ और दूसरे मेहमान। बरामदे में पहुँचते ही शामनाथ सहसा ठिठक गए। जो दृश्य उन्होंने देखा, उससे उनकी टाँगें लड़खड़ा गईं, और क्षण-भर में सारा नशा हिरन होने लगा। बरामदे में ऐन कोठरी के बाहर माँ अपनी कुर्सी पर ज्यों-की-त्यों बैठी थीं। मगर दोनों पाँव कुर्सी की सीट पर रखे हुए, और सिर दायें से बायें और बायें से दायें झूल रहा था और मुँह में से लगातार गहरे खर्राटों की आवाजें आ रही थीं। जब सिर कुछ देर के लिए टेढ़ा होकर एक तरफ को थम जाता, तो खर्राटे और भी गहरे हो उठते। और फिर जब झटके-से नींद टूटती, तो सिर फिर दायें से बायें झूलने लगता। पल्ला सिर पर से खिसक आया था, और माँ के झरे हुए बाल, आधे गंजे सिर पर अस्त-व्यस्त बिखर रहे थे। देखते ही शामनाथ क्रुद्ध हो उठे। जी चाहा कि माँ को धक्का देकर उठा दें और उन्हें कोठरी में धकेल दें, मगर ऐसा करना सम्भव न था, चीफ और बाकी मेहमान पास खड़े थे।

माँ को देखते ही देसी अफसरों की कुछ स्त्रियाँ हँस दीं कि इतने में चीफ ने धीरे से कहा—प्युअर डियर! माँ हड़बड़ा के उठ बैठीं। सामने खड़े इतने लोगों को देखकर ऐसी घबराई कि कुछ कहते न बना। झट से पल्ला सिर पर रखती हुई खड़ी हो गयीं और जमीन को देखने लगीं। उनके पाँव लड़खड़ाने लगे और हाथों की उँगलियाँ थर-थर काँपने लगीं। ''माँ, तुम जाके सो जाओ, तुम क्यों इतनी देर तक जाग रही थीं? और खिसियायी हुई नजरों से शामनाथ चीफ के मुँह की ओर देखने लगे।''

चीफ के चेहरे पर मुस्कराहट थी। वह वहीं खड़े-खड़े बोले, ''नमस्ते!'' माँ ने झिझकते हुए, अपने में सिमटते हुए दोनों हाथ जोड़े, मगर एक हाथ दुपट्टे के अन्दर माला को पकड़े हुए था, दूसरा बाहर, ठीक तरह से नमस्ते भी न कर पाईं। शामनाथ इस पर भी खिन्न हो उठे। इतने में चीफ ने अपना दायाँ हाथ, हाथ मिलाने के लिए माँ के आगे किया। माँ और भी घबरा उठीं। ''माँ, हाथ मिलाओ।''

पर हाथ कैसे मिलातीं? दायें हाथ में तो माला थी। घबराहट में माँ ने बायाँ हाथ ही साहब के दायें हाथ में रख दिया। शामनाथ दिल ही दिल में जल उठे। देसी अफसरों की स्त्रियाँ खिलखिलाकर हँस पड़ीं। ''यों नहीं, माँ! तुम तो जानती हो, दायाँ हाथ मिलाया जाता है। दायाँ हाथ मिलाओ।'' मगर तब तक चीफ माँ का बायाँ हाथ ही बार-बार हिलाकर कह रहे थे—''हौ डू यू डू?''

''कहो माँ, मैं ठीक हूँ, खैरियत से हूँ।'' माँ कुछ बड़बड़ाईं। ''माँ कहती हैं, मैं ठीक हूँ। कहो माँ, हौ डू यू डू।'' माँ धीरे से सकुचाते हुए बोलीं—''हौ डू डू''। एक बार फिर कहकहा उठा। वातावरण हल्का होने लगा। साहब ने स्थिति सँभाल ली थी। लोग हँसने-चहकने लगे थे। शामनाथ के मन का क्षोभ भी कुछ-कुछ कम होने लगा था। साहब अपने हाथ में माँ का हाथ अब भी पकड़े हुए थे, और माँ सिकुड़ी जा रही थीं।

शामनाथ अंग्रेजी में बोले—''मेरी माँ गाँव की रहने वाली हैं। उमर भर गाँव में रही हैं। इसलिए आपसे लजाती हैं।'' साहब इस पर खुश नजर आए। बोले—''सच? मुझे गाँव के लोग बहुत पसन्द हैं, तब तो तुम्हारी माँ गाँव के गीत और नाच भी जानती होंगी? चीफ खुशी से सिर हिलाते हुए माँ को टिकटिकी बाँधे देखने लगे।'' ''माँ, साहब कहते हैं, कोई गाना सुनाओ। कोई पुराना गीत तुम्हें तो कितने ही याद होंगे।'' ''माँ, धीरे से बोलीं—''मैं क्या गाऊँगी बेटा। मैंने कब गाया है?'' ''वाह, माँ! मेहमान का कहा भी कोई टालता है?'' ''साहब ने इतना रीझ से कहा है, नहीं गाओगी, तो साहब बुरा मानेंगे।'' ''मैं क्या गाऊँ, बेटा! मुझे क्या आता है?'' ''वाह!

कोई बढ़िया टप्पे सुना दो। दो पत्तर अनारां दे।'' देसी अफसर और उनकी स्त्रियों ने इस सुझाव पर तालियाँ पीटीं। माँ कभी दीन दृष्टि से बेटे के चेहरे को देखतीं, कभी पास खड़ी बहू के चेहरे को।

इतने में बेटे ने गंभीर आदेश-भरे लिहाज में कहा—''माँ!'' इसके बाद हाँ या ना सवाल ही न उठता था। माँ बैठ गयीं और क्षीण, दुर्बल, लरजती आवाज में एक पुराना विवाह का गीत गाने लगीं—हरिया नी माये, हरिया नी भैणे, हरिया ते भागी भरिया है! देसी स्त्रियाँ खिलखिला के हँस उठीं। तीन पंक्तियाँ गा के माँ चुप हो गयीं। बरामदा तालियों से गूँज उठा। साहब तालियाँ पीटना बन्द ही न करते थे। शामनाथ की खीज प्रसन्नता और गर्व में बदल उठी थी। माँ ने पार्टी में नया रंग भर दिया था।

तालियाँ थमने पर साहब बोले—''पंजाब के गाँवों की दस्तकारी क्या है?'' शामनाथ खुशी में झूम रहे थे। बोले—''ओ, बहुत कुछ—साहब! मैं आपको एक सेट उन चीजों का भेंट करूँगा। आप उन्हें देखकर खुश होंगे।'' मगर साहब ने सिर हिलाकर अंग्रेजी में फिर पूछा—''नहीं, मैं दुकानों की चीज नहीं माँगता। पंजाबियों के घरों में क्या बनता है, औरतें खुद क्या बनाती हैं?'' शामनाथ कुछ सोचते हुए बोले—''लड़कियाँ गुड़ियाँ बनाती हैं, और फुलकारियाँ बनाती हैं।''

''फुलकारी क्या?'' शामनाथ फुलकारी का मतलब समझाने की असफल चेष्टा करने के बाद माँ को बोले—''क्यों माँ, कोई पुरानी फुलकारी घर में है?'' माँ चुपचाप अन्दर गयीं और अपनी पुरानी फुलकारी उठा लायीं। साहब बड़ी रुचि से फुलकारी देखने लगे। पुरानी फुलकारी थी, जगह-जगह से उसके तागे टूट रहे थे और कपड़ा फटने लगा था। साहब की रुचि को देखकर शामनाथ बोले—''यह फटी हुई है साहब, मैं आपको नयी बनवा दूँगा। माँ बना देंगी। क्यों, माँ साहब को फुलकारी बहुत पसन्द हैं, इन्हें ऐसी ही एक फुलकारी बना दोगी न?''

माँ चुप रहीं। फिर डरते-डरते धीरे से बोलीं—''अब मेरी नजर कहाँ है, बेटा! बूढ़ी आँखें क्या देखेंगी?'' मगर माँ का वाक्य बीच में ही तोड़ते हुए शामनाथ साहब को बोले—''वह जरूर बना देंगी। आप उसे देखकर खुश होंगे।'' साहब ने सिर हिलाया, धन्यवाद किया और हल्के-हल्के झूमते हुए खाने की मेज की ओर बढ़ गये। बाकी मेहमान भी उनके पीछे-पीछे हो लिये। जब मेहमान बैठ गये और माँ पर से सबकी आँखें हट गयीं, तो माँ धीरे से कुर्सी पर से उठीं, और सबसे नजरें बचाती हुई अपनी कोठरी में चली गयीं।

मगर कोठरी में बैठने की देर थी कि आँखों में छल-छल आँसू बहने लगे। वह दुपट्टे से बार-बार उन्हें पोंछतीं, पर वह बार-बार उमड़ आते, जैसे बरसों का बाँध तोड़कर उमड़ आये हों। माँ ने बहुतेरा दिल को समझाया, हाथ जोड़े, भगवान का नाम लिया, बेटे के चिरायु होने की प्रार्थना की, बार-बार आँखें बन्द कीं, मगर आँसू बरसात के पानी की तरह जैसे थमने में ही न आते थे।

आधी रात का वक्त होगा। मेहमान खाना खाकर एक-एक करके जा चुके थे। माँ दीवार से सटकर बैठी आँखें फाड़े दीवार को देखे जा रही थीं। घर के वातावरण में तनाव ढीला पड़ चुका था। मुहल्ले की निस्तब्धता शामनाथ के घर भी छा चुकी थी, केवल रसोई में प्लेटों के खनकने की आवाज आ रही थी। तभी सहसा माँ की कोठरी का दरवाजा जोर से खटकने लगा।

''माँ, दरवाजा खोलो।'' माँ का दिल बैठ गया। हड़बड़ाकर उठ बैठीं। क्या मुझसे फिर कोई भूल हो गयी? माँ कितनी देर से अपने आपको कोस रही थीं कि क्यों उन्हें नींद आ गयी, क्यों वह ऊँघने लगीं। क्या बेटे ने अभी तक क्षमा नहीं किया? माँ उठीं और काँपते हाथों से दरवाजा खोल दिया। दरवाजा खुलते ही शामनाथ झूमते हुए आगे बढ़ आये और माँ को आलिंगन में भर लिया।

''ओ अम्मी! तुमने तो आज रंग ला दिया! साहब तुमसे इतना खुश हुआ कि क्या कहूँ। ओ अम्मी! अम्मी!'' माँ की छोटी-सी काया सिमटकर बेटे के आलिंगन में छिप गयी। माँ की आँखों में फिर आँसू आ गये। उन्हें पोंछती हुई धीरे से बोली—''बेटा, तुम मुझे हरिद्वार भेज दो। मैं कब से कह रही हूँ।'' शामनाथ का झूमना सहसा बन्द हो गया और उनकी पेशानी पर फिर तनाव के बल पड़ने लगे। उनकी बाँहें माँ के शरीर पर से हट आयीं।

''क्या कहा, माँ? यह कौन-सा राग तुमने फिर छेड़ दिया?'' शामनाथ का क्रोध बढ़ने लगा था, बोलते गये—तुम मुझे बदनाम करना चाहती हो, ताकि दुनिया कहे कि बेटा माँ को अपने पास नहीं रख सकता। ''नहीं बेटा, अब तुम अपनी बहू के साथ जैसा मन चाहे रहो। मैंने अपना खा-पहन लिया।

अब यहाँ क्या करूँगी। जो थोड़े दिन जिन्दगानी के बाकी हैं, भगवान का नाम लूँगी। तुम मुझे हरिद्वार भेज दो।'' ''तुम चली जाओगी, तो फुलकारी कौन बनायेगा? साहब से तुम्हारे सामने ही फुलकारी देने का इकरार किया है।'' ''मेरी आँखें अब नहीं हैं, बेटा, जो फुलकारी बना सकूँ।

तुम कहीं और से बनवा लो। बनी-बनायी ले लो।'' ''माँ, तुम मुझे धोखा देके यों चली जाओगी? मेरा बनता काम बिगाड़ोगी? जानती नहीं, साहब खुश होगा, तो मुझे तरक्की मिलेगी!'' माँ चुप हो गयीं। फिर बेटे के मुँह की ओर देखती हुई बोलीं—''क्या तेरी तरक्की होगी? क्या साहब तेरी तरक्की कर देगा? क्या उसने कुछ कहा है?''

''कहा नहीं, मगर देखती नहीं, कितना खुश गया है। कहता था, जब तेरी माँ फुलकारी बनाना शुरू करेंगी, तो मैं देखने आऊँगा कि कैसे बनाती हैं। जो साहब खुश हो गया, तो मुझे इससे बड़ी नौकरी भी मिल सकती है, मैं बड़ा अफसर बन सकता हूँ।'' माँ के चेहरे का रंग बदलने लगा, धीरे-धीरे उनका झुर्रियों-भरा मुँह खिलने लगा, आँखों में हल्की-हल्की चमक आने लगी। ''तो तेरी तरक्की होगी बेटा?''

''तरक्की यों ही हो जायेगी क्या? साहब को खुश रखूँगा, तो कुछ करेगा, वरना उसकी खिदमत करने वाले और थोड़े हैं?'' ''तो मैं बना दूँगी, बेटा, जैसे बन पड़ेगा, बना दूँगी।'' और माँ दिल ही दिल में फिर बेटे के उज्ज्वल भविष्य की कामनायें करने लगीं और मिस्टर शामनाथ, ''अब सो जाओ, माँ,'' कहते हुए, तनिक लड़खड़ाते हुए अपने कमरे की ओर घूम गये।

चौर्य कर्म को त्यागें

साध्वी जगवत्सला

समाचारपत्रों में आए दिन आती रहती हैं ऐसी खबरें—कि फलाँ बैंक कर्मचारी से 5 लाख रुपए लूटे। बैंक के भीतर आकर मैनेजर को मार दी गोली। खजांची को रिवाल्वर दिखा लूटी तिजोरी। यान-वाहनों में भीड़भाड़ या सूने स्थानों में जेब काटते हुए व्यक्ति को देख कोई कुछ कहने की स्थिति में नहीं क्योंकि सामने बैठा व्यक्ति सोचता है—अपने को क्या? किसी के बीच में बोलकर हम बिना मतलब गले में क्यों फाँसी लें। आज जमाना नहीं है। अगर किसी को कुछ कह देंगे तो उसके मन में खार हो जाएगी। कभी न कभी वह बदला ले लेगा। बोलकर काम बिगाड़ें ही क्यों? क्यों पड़ें झगड़े-पगड़े में? कहीं लेने का देना न पड़ जाए। ग्रामानुग्राम लोगों की स्थितियाँ सुनते हैं, पर न वे बोलना पसंद करते हैं और दूसरों का फिर कहीं प्रश्न ही नहीं। यह चोरी तो दिखती है, प्रत्यक्ष है किंतु चोरी के कई रूप हैं, जो किसी न किसी रूप में उनकी चोरी पकड़ में आ ही जाती है। मात्र चोर ही चोरी नहीं करते, किंतु साहूकार भी पीछे नहीं रहते। जरा जानें—

चोरी के कई प्रकार हैं। एक चोरी है—स्वयं अध्यापकों द्वारा बच्चों को नकल करने की प्रेरणा या समर्थन मिलना। वहाँ परीक्षाएँ होती हैं। सामने हैं नकल करने में बच्चे इतने होशियार, कि अध्यापकों की आँखों में धूल गिराते हुए नहीं डरते। वह भी चोरी है। कहीं-कहीं अध्यापक भी अपने पास ट्यूशन लेने वाले बच्चों को इंगित देकर, सहायक सामग्री भी देकर समस्या हल कर देते हैं। छोटी-छोटी चीजों के उठाने, बिना पूछे चुराने की मनोवृत्ति की शुरूआत, चोरी करने का प्रथम चरण। न तो विद्यार्थियों में प्रामाणिकता और न अध्यापकों में। किसी की चोरी का न कहीं जिक्र और न कोई फिक्र। फिक्र तो सिर्फ इसी बात का कि कहीं कोई इन्स्पेक्टर न आ जाए, कोई देख न ले, मैं पकड़ा न जाऊँ। बस यही आदत आगे जाकर छोटी चोरी बड़ी चोरी के रूप में बदल जाती है। फिर भले ही मास्टर, डॉक्टर, एडवोकेट, इंजीनियर सभी स्तरों में चोरी की आदत बनी रहती है, किसी न किसी रूप में चोरी करते रहते हैं। फर्क है तो इतना ही कि बच्चों की चोरी दिखती चोरी है, बड़ों की दिखती नहीं। डाकू की चोरी नहीं, डकैती प्रत्यक्ष है, पर डॉक्टर की अप्रत्यक्ष।

शिक्ष्-धातु सिखाने के अर्थ में आती है। शिक्षक वह है जो सिखाता है—अपने जीवन से, व्यवहार से, वचन से जो पथदर्शन अभिभावकों, अध्यापकों का मिलेगा, बच्चा करेगा। बच्चे तो कच्चे हैं। कोरे कागज, मिट्टी का बर्तन। जिन्हें जैसा चाहो, बना सकते हो, चित्र उकेर सकते हो। उसे जैसा वातावरण मिलता है, वह उसमें ढल जाता है, वैसा बन जाता है। सिंह का बच्चा बकरी-भेड़ के मध्य रहने से उन जैसा ही बन जाता है। बच्चा कोई हो, अनुकरण करते हैं। सप्तव्यसनों में किसी भी व्यसन को करते हुए अध्यापक या अभिभावक को देखते हैं। बच्चे उनका अनुकरण करते हैं, चाहे फिर वह जीवन को बर्बाद ही करें, किंतु ऐसी स्थिति में बच्चा व्यसन करना भी सीख लेता है। पहले चोरी करता है फिर वह व्यसन चौड़े-चौड़े करता है। इस तरह एक दिन चोरों का सम्राट, अपनी पल्ली का नेता बन जाता है। ऐसा चोर चोरी किए बगैर नहीं रह सकता। क्योंकि अब उसकी यह आदत बन गई। उसे व्यसन हो गया।

चोरी के दो रूप हैं—सभ्य एवं असभ्य। उक्त चोरी तो असभ्य चोरी है, किंतु सभ्य चोरी गुपचुप व्यापार कारोबार में होने वाली चोरी अथवा इनकम टैक्स, सेल टैक्स वालों की चोरी। चोरी के चार प्रकार हैं—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव। द्रव्य से संबंधित चोरी द्रव्य चोरी। क्षेत्र-खेत, बाग, बाड़ी आदि की होने वाली चोरी क्षेत्र चोरी है। काल-ब्याज आदि के लेन-देन में न्यूनाधिक समय का होना काल चोरी और भावों की यानी किसी कवि, लेखक, वक्ता के भावों की चोरी।

चोरी के पाँच प्रकार हैं—तपस्तेन, वचस्तेन, रूपस्तेन, आचार स्तेन, भावस्तेन। गाथा में इसका उल्लेख इस प्रकार है—

तवतेणे वयतेणे खवतेणे य जे नरे।
आयार भावतेणे य, कुव्वइ देवकिव्विसं।।

भेद-प्रभेद के अनुसार जितने चोरी के तरीके हैं—वे सब चोरी के प्रकार हैं जितने चोरी के प्रकार है, उतने चोरों के प्रकार हैं। साहित्य में चोरों के सात प्रकार बताए हैं—

चोरश्चोरापको मंत्री, भेदकः फाणकः कयी।
अन्नदः स्थानदश्चैव चोरः सप्तविधः स्मृतः।।

चोरी करने वाला, कराने वाला, सलाह देने वाला, भेद बताने वाला, मोल लेने वाला, चोरी का चोरों को अन्न देने वाला, चोरों को स्थान देने वाला—इस प्रकार ये चोरों के सात प्रकार मिलते हैं। चोरी के दुष्परिणाम—चोरी के दुष्परिणामों को जानकर चोरी से होने वाले अलाभ से बचने का प्रयास करें। चोरी का धन वैसे ही विनाश को प्राप्त हो जाता है। प्राचीनकाल में कहावत थी—चोरी का धन मोरी में जाता है। चोरी का धन किसी न किसी रूप में निकल ही जाता है। वह कभी भी लाभप्रद नहीं होता।

कितनी ही चोरी करके धन इकट्ठा कर ले, पर उसके तो सदा कमी ही रहती है, गरीबी ही रहती है। वह कभी भी ऊपर नहीं आ पाता। फिर इज्जत और उसकी धूमिल हो जाती है। लोगों की नजरों से गिरता है। यह चोरी दीखती है। पुलिस उसे दंडित करती है। पकड़कर ले जाती है। जेल में बंदी बनाती है। हाथों में हथकड़ी, पैरों में बेड़ी व कोड़ों की असह्य मार भी उसे झेलनी पड़ती है। अखबारों की सुर्खियों में आ जाता है। चर्चा के घेरे में रहता है। चोरी त्याज्य है। कुछ उद्धरणों से जीवन को मोड़ देना चाहिए। चोरी जैसे व्यसन को छोड़ देना चाहिए। अभग्गसेन चोर। पुरिमतालनामक नगर। जनता उससे बहुत दुःखी। अभग्गसेन चोरों की पल्ली का मुखिया। वह विजय चोर का पुत्र था। उसकी नृशंसता और अधर्मिता से लोग

डरते। वह लोगों को लूटता। गाँवों को जलाता। राजा महाबल ने दसदिवसीय महोत्सव की घोषणा की। अभग्गसेन ने भी अपने सभी साथियों को आमंत्रित किया। राजा ने मयमांस खिलाकर उसे बेभान किया। वे सभी उसी बेहोशी में। उन्हें पकड़-पकड़कर शहर में घुमाकर, शूली की सजा सुना दी।

गौतम के पूछने पर प्रभु ने कहा—पूर्वभव में निघ्नव नाम का वणिक अण्डों का व्यापारी था। वह अण्डों को सेंककर, तलकर खुद खाता और दूसरों को खिलाता। क्रूरकर्मी क्रूरकर्मों का उपार्जन करने से नरक में गया। तीसरी नरक से आकर अभग्गसेन नाम का चोर बना। यहाँ से वह प्रथम नरक में जाएगा। इस तरह क्रूर प्रवृत्ति का फल क्रूर ही है। इस कथानक से हमने जाना—क्रूर प्रवृत्ति का परिणाम कष्टकारी है। अतः प्रवृत्ति से पूर्व परिणामों पर ध्यान रखने वाला अपने जीवन में किसी भी प्रकार की क्रूरतापूर्ण प्रवृत्ति कभी भी नहीं करेगा।

इस प्रकार के अनेक उदाहरण हैं, जिससे चोरी की सजा, उसका दुष्परिणाम को समझकर चोरी जैसी दुष्प्रवृत्ति को छोड़ा जा सकता है। कौन नहीं जानता चोरी से मिलने वाले दण्ड को। इतिहास साक्षी है, जिसमें चोरों पर अगड़दत्त ने विजय प्राप्त की। परिव्राजक की जिसने सिटी-पिटी गुम कर दी। पर पत्नी श्यामा की नृशंसता, जिसके लिए अगड़दत्त को भारी संघर्ष करना पड़ा। ऐसा करने के बावजूद भी अगड़दत्त की पत्नी श्यामा बदल गई। चोर अर्जुन के साथ हो गई। इस तरह घटनाएँ चोरों की सहभागिता निभाने वाले भी सटीक चित्रण प्रस्तुत करते हैं।

यह विश्व स्वार्थी दुनिया का है, स्वार्थ के चलते सब है। अल्पांश भी अगर स्वार्थ को चोट पहुँचे तो वह भी पति को मारने पर उतारू हो जाती है। जैसे कि श्यामा पति अगड़दत्त को मारने को उद्यत ही नहीं हुई, बल्कि ऐसा निर्दयतापूर्ण काम अपने हाथों अपने पति की जान ले ही ली।

भगवान ने कहा—नायएज्ज तणामपि-तृणमात्र भी किसी की चीज बिना पूछे न लें। किसी की चीज के हाथ लगाना भी पाप है। अदत्तादान का अर्थ है—चोरी। अठारह पापों में तीसरा पाप है—चोरी। गौतम कुलकम में कहा गया—चोरी पसत्तस्स सरीरनासो—चोरी से शरीर का नाश होता है। चोरी भी एक नशा है। सप्त व्यसनों में एक है—चोरी। चोरी किए बिना भी चोर का मन नहीं लगता। मन बेचैन रहता है।

हालाँकि मात्र सप्त-व्यसनों में पतित इंशान का ही नहीं, किंतु धर्म भी तो एक नशा है, व्यसन है। जो धर्म कतरा है। ध्यान, स्वाध्याय करता है। सामायिक संवर करता है, उसका भी इसके बिना मन नहीं लगता। वह भी कदाचित् न होने पर बेचैन हो जाता है। किंतु चोरी दुर्व्यसन है, नाश का द्वार है। लोगों में अप्रतीति व अप्रीति का कारण है। इज्जत-आबरू को खोने की वृत्ति है। अनादर, अपमान का हेतु है। साम-दाम-दण्ड-भेद की नीति वहाँ प्रयुक्त होती है। मगर धर्म प्रशस्त व्यसन है। विकास का द्वार है। लोगों में प्रतीति व प्रीति का कारण है। इससे इज्जत, आबरू, आदर, सम्मान वृद्धिंगत स्वयमेव होते हैं। धार्मिक तो चतुर्विध नीतियों से सदैव मुक्त है। अतः अचौर्य स्वीकार्य है, चौर्यवृत्ति सदैव त्याज्य है। परिहार्य है। वैसे आज यह वृत्ति बढ़ती जा रही है। सूने घर हो, वहाँ का हाल तो इतना बुरा है कि किसी कारणवश कुछेक घंटों, दिनों के लिए जाए तो आने पर घर की सफाई मिलती है। शहरों में तो चलते यान वाहन से चीजें चली जाती हैं। बंदूक की नोंक पर सब कुछ जबरन लेकर भाग जाते हैं। रिश्तेदार बनकर घरों में घुस जाते हैं। छोटे गाँवों में, कस्बों में भी शांति नहीं। वहाँ भी ऐसी स्थिति। आजकल सभी क्षेत्रों के बुरे हालात, न शांति से चोर जीते हैं और न साहूकार। चोर इसलिए बेचैन है कि एक दिन में हम कैसे अमीर बन सकते हैं। कौन बनेगा करोड़पति की धुन में लगे हैं और साहूकार इसलिए बेचैन है कि कहीं एक दिन के लिए भी जाएँ तो किसी की व्यवस्था करके जाएँ। किसी को वहाँ छोड़कर जाएँ। फिर भी चिंता कि घर सुरक्षित तो मिलेगा? दो-तीन घंटों में भी घर साफ कर जाते हैं। अपना ही रिश्तेदार, जिसे सब कुछ पता होता है कि कहाँ क्या है? यहाँ के पूरे संवाद जानकर, पीछे से सारा माल गायब कर जाते हैं। क्यों होता है ऐसा? अपनी अकल की कमी के कारण, चोरों की संगत के कारण, मेहनत से जी चुराने के कारण, परंपरा से चोरी ही किए जा रहे हैं—इस कारण अथवा कमाने से तो जो कमाई वर्ष भर में नहीं होती, वह कमाई एक दिन में आसानी से हो जाएगी, इस भावना के कारण। कैसे भी हो चोरी सभी कारणों से होती है। कच्चा चोर भयभीत होता हुआ चोरी करता है। वह चोरी जरूर करता है उसकी आदत बन चुकी, किंतु डरता-डरता करता है।

उसका दिल धड़कता है। पाँव काँपते हैं। जबकि पक्का चोर सबकुछ बेधड़क करता है। वह न काँपता है, न धड़कता है। कच्चा चोर अधिकतर छुटपुट चीजों की चोरी करता है। और नहीं तो भले ही वह एक साधारण सी टूटी-फूटी डिब्बी ही ले, किंतु चोर कभी खाली नहीं जाता। जिस घर में घुस जाता है, कुछ लेकर ही जाएगा। खाली जाना अशुभ है, कुत्ते का भौंकना, छींकना, पीछे से आवाज देना—कहा जाता है ये सब चोर के चोरी करने के वक्त अशुभ माने जाते हैं, तो बिल्ली रास्ता काटे, रोए तो भी अशुभ है चोरी कौन करते हैं? विद्यार्थी, अध्यापक, व्यापारी, कर्मचारी में अधिकतर चोरी करते हैं। ये ही नहीं प्रशासनिक, प्रबुद्ध नेता, अभिनेता, अधिनेता, अधिवक्ता किसी न किसी रूप में चोरी करते हैं। चोरी का तरीका भिन्न है। ये घोटाले प्रसंग क्या है? अथवा स्वयं वैर विरोधी में फँसे, पहुँच वाले होने से किसी कारनामे से धनापहरण कर लेते हैं। और मुँह माँगे दाम मिलने पर उन्हें बरी कर देते हैं। कहीं-कहीं बच्चों का, युवकों का बुजुर्गों का भी अपहरण करके मनचाही कीमत मिलने पर उन्हें धमकी के साथ बरी कर देते हैं। और तब डरे-डरे रहते हैं। स्वयं व्यक्ति और उसके सारे परिजन भी। खैर! चोरी चोरी है। हालाँकि चोरी व्यक्ति चोरी छुपके करता है। चोर के मन में यह हौआ सदैव रहता है, कोई मुझे देख न ले। मेरी चोरी पकड़ी न

जाए। मैं चौर्य कर्म करता हुआ भी बचा कैसे रहूँ? इस बात पर उसका ध्यान अटका रहता है। एक-आध दिन अथवा कुछेक घंटों की तो यह स्थिति है पर सूने घरों में चोर कई-कई दिनों तक रह कर सारे घर को टटोल लेते हैं। फिर कीमती सामान को ट्रकों, टैक्सियों के द्वारा पार भी कर देते हैं। ये सामने से नहीं, पीछे सूने रास्तों से आते हैं, दीवारों को फोड़कर या लाँघकर, जाली काटकर जिस किस तरीके से भीतर प्रवेश करके अपना काम बना लेते हैं। देखने वालों को किसी को पता भी नहीं लगता, भले ही वे मकानों में एकाध दिन अथवा उससे अधिक दिन तक रहकर, खाना-पीना भी वहीं करके भी किसी को किसी प्रकार की आहट आवाज रत्ती भी सुनाई नहीं देती। और जब चले जाते हैं कई दिनों के बाद कोई देखने आए तो, सब ताले टूटे, किवाड़, दीवार भी टूटी देखकर चोरी का अंदाज लगा लेते हैं। आजकल चोरों की गिनती नहीं। पर प्रायः चोर ऐसी ट्रेनिंग लेते हैं कि दिन में किधर आज जाना है? इस हिसाब से देख लेते हैं और चोरी करने को रात को आ जाते हैं तो कोई भीड़ में भी चोरी करते हैं।

भगवान् ने चोरी को पाप कहा है। यही वजह है चोर चोरी करते हुए भी जिंदगी भर दुःखी रहते हैं। गरीबी व तंगी का जीवन जीते हैं। वे एक दिन में जहाँ करोड़पति बन जाते हैं, वहाँ अगले दिन रोडपति बने हुए देखे जाते हैं। ऐसे में अपना अस्तित्व, अपनी अस्मिता एक चोर के नाम से बनाते हैं। महान् कर्मों का उपार्जन करते हैं वे यहाँ भी दुःखी और अगले जन्म में भी दुःखी। यहाँ भी मार पड़ती है, अगले जन्म में भी। फिर ऐसे चौर्य-कर्म से क्या फायदा? जिससे इह-लोक, परलोक और उभयलोक दुःखी हो। फिर चोरी से बल, कुल, शरीर सबका नाश ही तो होता है।

पातंजल योग में कहा गया है—अचौर्य व्रत की पूर्ण साधना से व्यक्ति दिव्य दृष्टि हो जाता है। पृथ्वी में रहे हुए गुप्त रत्न भी उसे दीखने लग जाते हैं—'अस्तेयं प्रतिष्ठायां सर्वरत्नोपस्थानम्।'

सिंदूरप्रकर में कहा है—परिहरति विपत्तं यो न गृह्णात्यदत्तं—जो अदत्त को नहीं लेता, वह विपत्तिग्रस्त नहीं होता।

विपत्ति से बचने के लिए चोरी का त्याग जरूरी है।

इतिहास साक्षी है कि प्रभव चोर, चोरों का सम्राट! उसके साथी 499 चोर। जमीं से पाँव जब सबके चिपके। विपत्ति खड़ी हो गई। जम्बू का आठरानियों से वार्तालाप सुन वह भी जम्बू के साथ दीक्षित होने का भाव हो गया। मात्र वही नहीं अनेक व्यक्ति उद्बुद्ध हो गए। उन सबका वैराग्य हुआ। धन के राग से वे जम्बू के घर आए और मन के वैराग से वे जम्बू के साथी बन आए। धन के आकर्षण से वे अदत्त को लेने ललचाए।

संयम रत्न के आकर्षण से वे संयम पथ पर बढ़ पाए। अदत्तादान से जहाँ कर्म लगे, पाँव चिपके। वहीं इसके विरमण से पाँव उठे। कर्म धुले, मुक्ति मिले, सिद्धि मिले, जब संयम श्री का वरण करें। और ऐसा ही हो गया, जब अँधेरा खो गया, घट में उजाला हो गया। इन प्रसंगों से, प्रकरणों से प्रेरणा लें। स्वयं को कष्टों से उबारने के लिए जरूरी है—चौर्य कर्म को त्यागें।

क्या बात है!

पूनम पाण्डे

आज वाइस प्रिंसिपल ने स्कूल आने में बहुत देर कर दी। जया को कुछ झुँझलाहट-सी होने लगी थी। हमेशा ऐसा ही होता है। कोई जरूरी जिम्मेदारी देनी हो, तो ये मैडम बहुत लेट आती है। कुछ कुड़मुड़ाती हुई जया ने गुस्से में पानी का गिलास आधा ही गले के नीचे उतारा था कि वो सामने आकर खड़ी हो गई।

'हुँह। आज फिर लेट, 26 जनवरी की तैयारी की जरूरी मीटिंग लेनी थी।' 'हाँ। वो जरा क्रिसमस के कार्ड लिखने में देर हो गई।' ऐसा कहकर वो अपनी प्रोजेक्ट डायरी और सब्जेक्ट प्लान बुक उठाकर कक्षाओं के निरीक्षण के लिए चल दी।

जया ने मन ही मन कुछ हल्कापन महसूस किया। ऊर्जा की एक तरंग उसके भीतर प्रविष्ट हुई। उसने अब अपना काम भी तेजी से करना शुरू कर दिया। खाने की घंटी बज चुकी थी और जया की टेबल पर चाय-बिस्कुट लाए जा चुके थे। चाय का कप लाते हुए बाई ने एक विनती की। जया को अजीब सा लगा, 'यह बिना बात के पाँच हजार रुपये किस खुशी में माँग रही हो, क्यों भला।'

बाई ने बताया कि वो अपनी बेटी को बीबीए करवाना चाहती थी। कुछ पैसे कम पड़ रहे थे सो, वह जया की मदद माँग रही थी। जया ने अटपटी-सी आवाज में पूछा, 'अच्छा बीबीए करवा दोगी। इतना पढ़ाओगी, फिर इतना पढ़ा-लिखा खानदानी लड़का ढूँढ़ने की मशक्कत करोगी। बहुत आफत उठा रही हो, सीधा-सीधा बीएड क्यों नहीं करवा देती।' जया की बात पूरी होने के बाद कुछ क्षण मौन रखकर बाई ने जवाब दिया—'मैडम आप तो बहुत आगे तक पहुँच गईं। मैंने तो यहाँ तक सोचा नहीं। मैडम आजकल टीवी में बड़े सर्वे आ रहे हैं, रिपोर्ट आ रही है। इसलिए शादी का तो सोचा ही नहीं। शादी तो इतनी जरूरी नहीं मैडम।'

'क्या मतलब।' जया ने भौंहे चढ़ाकर पूछ लिया। 'जी मैडम। आजकल टीवी में एक रिपोर्ट आ रही है न कि आने वाले दस सालों में हिन्दुस्तान के बीस प्रतिशत युवा बगैर शादी के आजाद जीवन जीने में भरोसा करेंगे। अब क्या पता। बिटिया कैसे जीना चाहे मैडम?' बाई ने अपनी बात पूरी की और चाय-नाश्ता खत्म करने का आग्रह करके वो चुपचाप बाहर चली गई।

जया ने चाय का घूँट भरा। बिस्कुट खत्म किए, मगर उसका ध्यान बाई की क्रांतिकारी बातों में उलझा रहा। सचमुच, एक माँ को अपने युवा होते बच्चों के प्रति जागरूक रहना पड़ता है। साथ ही जया यह सोचकर बहुत गौरवान्वित हुई कि उसके स्कूल की कम पढ़ी-लिखी बाई भी कितनी मजबूत और सुलझी हुई है।

खुशियाँ बाँटिए खुशियाँ मिलेंगी।

आशीष जैन

हर इंसान खुशियों की बाट जोह रहा है...सबको लगता है कि सांता आएगा और खुशियाँ लुटाएगा, पर खुशियाँ पाने और लुटाने के लिए क्यों न हम खुद ही सांता बन जाएँ। सांता खुशियों की झोली में हर किसी के लिए कुछ न कुछ लेकर आता है। सबको देता है, किसी से कुछ नहीं लेता। उसका काम ही है—खुशियाँ बाँटना। अगर आप सबको खुशियाँ बाँटना चाहते हैं तो सबसे पहले आपको खुद को खुश करना होगा। अगर आप खुद खुश नहीं हैं तो सांता कभी नहीं बन सकते। सांता के चेहरे पर तो हमेशा मुस्कान रहती है, यह मुस्कान आप भी अपने चेहरे पर लाइए और दूसरों को मुस्कुराहट बाँटिए। भागदौड़ भरी जिंदगी में खुशियाँ ही आपको जीने की राह दिखा सकती हैं तो इस क्रिसमस खुश होने और दूसरों को खुशियाँ लुटाने के लिए हो जाइए तैयार।

खुद को करें खुश

हो सकता है कि आपको अपनी मनचाही मंजिल अभी तक नहीं मिल पाई हो... क्या हुआ अगर मनचाही चीजें नहीं मिल पाईं। आपको जो मिला है, उसे ही एन्जॉय करना सीखें। अच्छे की आस रखें, पर जो आपके पास है, उसे तो सराहें। खुद को अभागा मानने से क्या होगा। प्रभु यीशु के जन्मदिन पर खुद को सौभाग्यशाली मानना शुरू कर दें।

आपको जो भी नियामतें मिली हैं, उनके लिए शुक्रिया कहें। हर किसी पर शक करने की आदत को हमेशा के लिए छोड़ दें। अपने आस-पास निगाह दौड़ाएँ। सुबह की पहली किरण, पीने के लिए साफ पानी, साँस लेने के लिए ताजी हवा... कितना कुछ है आपके पास जिंदगी को भरपूर तरीके से जीने के लिए। हो सकता है कि ये चीजें आपको छोटी लगें, पर इन्हीं छोटी-छोटी चीजों में वास्तविक खुशियाँ छिपी हैं। क्यों नहीं हम इन खुशियों का महत्व समझते, क्यों नहीं हम इन चीजों के लिए कुदरत को धन्यवाद देते? अगर आप आज सुबह पूरी तरह से स्वस्थ उठे हैं, मन पूरी तरह से उल्लासित है और कुछ सपनों को पूरा करना चाहता है तो तय मानिए कि आज का दिन आपके लिए अच्छा गुजरेगा। मन लगाकर कड़ी मेहनत करें और छोटी-छोटी चीजों के लिए ईश्वर को धन्यवाद कहें। जो काम आप करना चाहते हैं, उसे आँखों के सामने साकार होता देखने की कोशिश करें। आप सांता हैं और जो भी आप खुद के लिए माँगेंगे, वह आपको खुद-ब-खुद मिल जाएगा। सबसे जरूरी है माँगना और फिर माँगी हुई चीज को पाने के लिए तैयार रहना। खुशियाँ माँगिए...खुशियाँ मिलेंगी।

बच्चे

बच्चों को खुशियाँ देना चाहते हैं तो उनके अंदर कौतूहल पैदा करें। विश्वास जगाएँ कि दुनिया बेहतर है। उन्हें अच्छे संस्कार दें। हर काम में उनकी मदद करने की कोशिश से बचें। उन्हें काम खुद करने दें और आप उनके पीछे खड़े रहें। उन्हें किसी तरह की दिक्कत आए तो आप सँभालें। बच्चों के लिए सांता बनना है तो उन्हें क्वालिटी टाइम दें। उनकी हर माँग पूरी करने की बजाय अच्छे और बुरे में फर्क करना सिखाएँ।

माता-पिता

माता-पिता ही हमारे जीवन के सांता क्लॉज हैं। जीवनभर हमारे लिए कुछ न कुछ करते हैं। आप अगर उन्हें खुशियाँ देना चाहते हैं तो उन्हें सम्मान दें। उनके अनुभव का लाभ लेते रहें। उनकी बातों को सिरे से खारिज करने से बचें।

उनकी बातों को दकियानूसी ठहराने की आदत बदल डालें। अपनी सफलता के लिए उन्हें क्रेडिट दें। उनके लिए हमेशा उपलब्ध रहें। उनका साथ रहेगा, तो घर में चारों ओर खुशियाँ बिखरी रहेंगी।

कार्यस्थल पर बाँटें खुशियाँ

बॉस

ऑफिस में सांता की सबसे ज्यादा जरूरत होती है। काम का तनाव, टारगेट पूरा करने का तनाव, प्रमोशन का तनाव... ढेर सारे तनावों के बीच में आप सांता बनकर सबके चेहरों पर मुस्कान ला सकते हैं। आपको सोचना चाहिए कि बॉस भी इंसान है, उसके सामने भी परेशानियाँ आती हैं। ऐसे में अगर आप उसे सपोर्ट देंगे तो वह खुश होगा। बिना कहे उसके काम में मदद करेंगे, तो उसके चेहरे की खोई रौनक लौट आएगी।

सहकर्मी

कई सहकर्मी एक-दूसरे पर अविश्वास करते हैं। उनके मन में एक-दूसरे के लिए वैर-भाव रहता है। जबकि सच्चाई तो ये है कि बिना सहकर्मी के आप किसी भी काम को अंजाम तक नहीं पहुँचा सकते। इस क्रिसमस पर आप सारे गिले-शिकवे मिटाकर अपने सहकर्मियों के मन में खुद के लिए विश्वास पैदा करें। उनका दिल जीतने की कोशिश करें। जुबान और दिल दोनों से उनका भला सोचें। सबके साथ एक जैसा व्यवहार करें।

जूनियर

ऑफिस में सबसे ज्यादा जूनियर आपसे आस लगाता है। उसे लगता है कि आप उसके मेंटर बन सकते हैं। उसकी इच्छा पूरी करें, उसे सही राह दिखाएँ। कॅरियर के शुरुआती दौर की दिक्कतों में हमेशा उसके साथ खड़े रहें। अपने अनुभव बाँटें, बताएँ किस तरह से तरक्की मिल सकती है। काम-काज का तरीका सिखाएँ, उसे जिम्मेदारियाँ सौंपें। अगर काम के दौरान उससे गलती हो जाए तो सीधा बरसने की बजाय प्यार से समझाएँ।

समाज में बाँटें खुशियाँ

निशक्तजन

समाज के निशक्तजन को सबसे ज्यादा आपकी जरूरत है। उनके लिए सांता बनेंगे तो आपको ढेरों दुआएँ मिलेंगी। आपको उनके खोए हुए विश्वास को वापिस लौटाना है। उन्हें खुश करने के लिए आपको उन्हें सम्मान देना है। अगर राह में कोई निशक्तजन मिले तो उसे नजरअंदाज न करें। उस पर गौर करें। उसके प्रयासों को सच्चे दिल से सराहें। उसे किसी तरह की दिक्कत हो तो सारे काम छोड़कर उसकी मदद करें।

अजनबी

समाज में संवेदनाएँ तेजी से खत्म होती जा रही हैं। मान लीजिए आप रात में अपनी गाड़ी से घर जा रहे हैं और रास्ते में कोई दुर्घटनाग्रस्त गाड़ी और कोई व्यक्ति पड़ा है तो अक्सर बिना रुके आगे निकल जाते हैं। इंसान होने के नाते आपको वहाँ रुकना चाहिए और अजनबी व्यक्ति की खैर-खबर लेनी चाहिए। राह में कोई मदद की गुहार कर रहा है तो उसकी पूरी बात सुननी चाहिए। आपको असल में सांता बनना है तो ऐसे लोगों की मदद करें।

गरीब

इस क्रिसमस पर आप किसी गरीब के लिए सांता बन सकते हैं। उसे रोजगार का सही साधन सुझा सकते हैं। उसकी परेशानियों को दूर करने का तरीका बता सकते हैं। उसे किसी खास काम में दक्ष होने के लिए प्रेरित कर सकते हैं, ताकि वह अपनी आय बढ़ा सके। सरकारी योजनाओं का सही तरह से इस्तेमाल करने में उनकी मदद कर सकते हैं। आप उन्हें आत्मसम्मान के साथ जीने के लिए प्रेरित कर सकते हैं।

अनोखी तरकीब

पराग ज्ञानदेव चौधरी

बहुत पुरानी बात है। एक अमीर व्यापारी के यहाँ चोरी हो गयी। बहुत तलाश करने के बावजूद न सामान मिला और न ही चोर का पता चला। तब अमीर व्यापारी शहर के काजी के पास पहुँचा और चोरी के बारे में बताया।

सब कुछ सुनने के बाद काजी ने व्यापारी के सारे नौकरों और मित्रों को बुलाया। जब सब सामने पहुँच गए तो काजी ने सबको एक-एक छड़ी दी। सभी छड़ियाँ बराबर थीं। न कोई छोटी न बड़ी।

सबको छड़ी देने के बाद काजी बोला, ''इन छड़ियों को आप सब अपने-अपने घर ले जाएँ और कल सुबह वापस ले आएँ। इन सभी छड़ियों की खासियत यह है कि यह चोर के पास जाकर एक उँगली के बराबर अपने आप बढ़ जाती है।

जो चोर नहीं होता, उस की छड़ी ऐसी की ऐसी रहती है। न बढ़ती है, न घटती है। इस तरह मैं चोर और बेगुनाह की पहचान कर लेता हूँ।''

काजी की बात सुनकर सभी अपनी-अपनी छड़ी लेकर अपने-अपने घर चल दिए। उन्हीं में व्यापारी के यहाँ चोरी करने वाला चोर भी था। जब वह अपने घर पहुँचा तो उसने सोचा, ''अगर कल सुबह काजी के सामने मेरी छड़ी एक उँगली बड़ी निकली तो वह मुझे तुरंत पकड़ लेंगे। फिर न जाने वह सबके सामने कैसी सजा दें। इसलिए क्यों न इस विचित्र छड़ी को एक उँगली काट दिया जाए। ताकि काजी को कुछ भी पता नहीं चले।''

चोर यह सोच बहुत खुश हुआ और फिर उसने तुरंत छड़ी को एक उँगली के बराबर काट दिया। फिर उसे घिसघिस कर ऐसा कर दिया कि पता ही न चले कि वह काटी गई है।

अपनी इस चालाकी पर चोर बहुत खुश था और खुशी-खुशी चादर तानकर सो गया। सुबह चोर अपनी छड़ी लेकर खुशी-खुशी काजी के यहाँ पहुँचा। वहाँ पहले से काफी लोग जमा थे। काजी 1-1 कर छड़ी देखने लगे।

जब चोर की छड़ी देखी तो वह 1 उँगली छोटी पाई गई। उसने तुरंत चोर को पकड़ लिया। और फिर उससे व्यापारी का सारा माल निकलवा लिया। चोर को जेल में डाल दिया गया। सभी काजी की इस अनोखी तरकीब की प्रशंसा कर रहे थे।

सभी चाय स्वास्थवर्धक हैं

फिर **मारवल**®

येलो चाय ही क्यों ?

क्योंकि:-

- स्वाद ऐसा कि एक प्याला पीने के बाद दोबारा पीने को मन चाहे।
- गहरा लाल रंग नहीं बल्कि सोने जैसा सुनहरा रंग जो दिल को भाए।
- गाढ़ापन ऐसा जो चाय की सम्पूर्णता का अहसास कराए।
- एकदम ताजा क्योंकि बागानों से टूटते ही पैक होकर पहुँचती है आपके पास।
- केवल आसाम और दार्जिलिंग के बागानों की चाय।
- हस्तस्पर्श रहित पैक, उत्तम जाँच परख, जो दे आपको बारह महीने एक जैसा स्वाद।
- भारत में ही नहीं बल्कि U.A.E. एवं इटली में भी पसन्द की जाने वाली चाय, ...और भी बहुत कुछ जो इसे बनाए दूसरों से बेहतर।

''पीते ही रह जाओगे''

Khyati

Marvel **MARVEL TEA ESTATE (INDIA) LTD.**

MARVEL ROAD, UKLANA-125113, INDIA Ph. 91-1693-235786, Email : marvel@marvelgroup.in

गूदड़ साईं

बच्चों-सा निश्छल-निष्कपट कोई नहीं।
और यह बात कोई निष्कपट ही तो समझ सकता है। **जयशंकर प्रसाद**

'साईं! ओ साईं!!' एक लड़के ने पुकारा। साईं घूम पड़ा। उसने देखा कि एक आठ वर्ष का बालक उसे पुकार रहा है।

आज कई दिन पर उस मुहल्ले में साईं दिखलाई पड़ा है। साईं वैरागी था—माया नहीं, मोह नहीं। परंतु कुछ दिनों से उसकी आदत पड़ गई थी कि दोपहर को मोहन के घर जाना, अपने दो-तीन गंदे गूदड़ यत्न से रखकर उन्हीं पर बैठ जाता और मोहन से बातें करता। जब कभी मोहन उसे गरीब और भिखमंगा जानकर माँ से अभिमान करके पिता की नजर बचाकर कुछ साग-रोटी लाकर दे देता, तब उस साईं के मुख पर पवित्र मैत्री के भावों का साम्राज्य हो जाता। गूदड़ साईं उस समय दस बरस के बालक के समान अभिमान, सराहना और उलाहना के आदान-प्रदान के बाद उसे बड़े चाव से खा लेता। मोहन की दी हुई एक रोटी उसकी अक्षय तृप्ति का कारण होती। एक दिन मोहन के पिता ने देख लिया। वे बहुत बिगड़े। वे थे कट्टर आर्यसमाजी। ढोंगी मंगतों पर उनकी साधारण और स्वाभाविक चिढ़ थी। मोहन को डाँटा कि वह इन लोगों के साथ बातें न किया करे। साईं हँस पड़ा, चला गया।

उसके बाद आज कई दिन पर साईं आया और वह जान-बूझकर उस बालक के मकान की ओर नहीं गया। परंतु लौटते हुए मोहन ने उसे देखकर पुकारा और वह लौट भी आया।

'मोहन!'

'तुम आजकल आते नहीं?'

'तुम्हारे बाबा बिगड़ते थे।'

'नहीं तुम रोटी ले जाया करो।'

'भूख नहीं लगती।'

'अच्छा, कल जरूर आना। भूलना मत!'

इतने में दूसरा लड़का साईं का गूदड़ खींचकर भागा। गूदड़ लेने के लिए साईं उस लड़के के पीछे दौड़ा। मोहन खड़ा देखता रहा। साईं आँखों से ओझल हो गया।

चौराहे तक दौड़ते-दौड़ते साईं को ठोकर लगी, वह गिर पड़ा। सिर से खून बहने लगा। खिझाने के लिए जो लड़का उसका गूदड़ लेकर भागा था, वह डर से ठिठका रहा। दूसरी ओर से मोहन के पिता ने उसे पकड़ लिया, दूसरे हाथ से साईं को पकड़कर उठाया। नटखट लड़के के सर पर चपत पड़ने लगीं। साईं उठकर खड़ा हो गया।

'मत मारो, मत मारो, चोट आती होगी!' साईं ने कहा—और लड़के को छुड़ाने लगा। मोहन के पिता ने साईं से पूछा, 'तब चीथड़े के लिए दौड़ते क्यों थे?'

सिर फटने पर भी जिसको रुलाई नहीं आई थी, वह साईं लड़के को रोते देखकर रोने लगा। उसने कहा, 'बाबा, मेरे पास दूसरी कौन वस्तु है, जिसे देकर इन भगवान को प्रसन्न करता!'

'तो क्या तुम इसीलिए गूदड़ रखते हो?'

'इस चीथड़े को लेकर भागते हैं भगवान और मैं उनसे लड़कर छीन लेता हूँ। रखता हूँ फिर उन्हीं से छिनवाने के लिए, उनके मनोविनोद के लिए। सोने का खिलौना तो उचक्के भी छीनते हैं, पर चीथड़ों पर भगवान ही दया करते हैं!' इतना कहकर बालक का मुँह पोंछते हुए मित्र के समान गलबाँही डाले हुए साईं चला गया।

मोहन के पिता आश्चर्य से बोले, 'गूदड़ साईं! तुम निरे गूदड़ नहीं, गुदड़ी के लाल हो!!'

उपयोगिता

अमित कुमार

एक राजा था। उसने आज्ञा दी कि संसार में इस बात की खोज की जाए कि कौन से जीव-जंतु निरुपयोगी हैं। बहुत दिनों तक खोज-बीन करने के बाद उसे जानकारी मिली कि संसार में दो जीव जंगली मक्खी और मकड़ी बिल्कुल बेकार हैं। राजा ने सोचा, क्यों न जंगली मक्खियों और मकड़ियों को खत्म कर दिया जाए।

इसी बीच उस राजा पर एक अन्य शक्तिशाली राजा ने आक्रमण कर दिया, जिसमें राजा हार गया और जान बचाने के लिए राजपाट छोड़कर जंगल में चला गया। शत्रु के सैनिक उसका पीछा करने लगे। काफी दौड़-भाग के बाद राजा ने अपनी जान बचाई और थककर एक पेड़ के नीचे सो गया। तभी एक जंगली मक्खी ने उसकी नाक पर डंक मारा जिससे राजा की नींद खुल गई। उसे ख्याल आया कि खुले में ऐसे सोना सुरक्षित नहीं और वह एक गुफा में जा छिपा। राजा के गुफा में जाने के बाद मकड़ियों ने गुफा के द्वार पर जाला बुन दिया।

शत्रु के सैनिक उसे ढूँढ़ ही रहे थे। जब वे गुफा के पास पहुँचे तो द्वार पर घना जाला देखकर आपस में कहने लगे, ''अरे! चलो आगे। इस गुफा में वह आया होता तो द्वार पर बना यह जाला क्या नष्ट न हो जाता।''

गुफा में छिपा बैठा राजा ये बातें सुन रहा था। शत्रु के सैनिक आगे निकल गए। उस समय राजा की समझ में यह बात आई कि संसार में कोई भी प्राणी या चीज बेकार नहीं। अगर जंगली मक्खी और मकड़ी न होतीं तो उसकी जान न बच पाती। हर एक की कहीं न कहीं उपयोगिता है।

॥ जय भिक्षु ॥ ॥ अर्हम ॥ ॥ जय महाश्रमण ॥

श्रद्धांजलि

स्व. दिपेश रमेशचन्द्र गुगलिया

जन्म - 03-11-1987 स्वर्गवास - 10-02-2012

क्यों रुठ गए तुम हम सबसे, दिलों मे हो गया सूनापन ।
कर्मों का ऐसा चक्र चला, छोड़ चले तुम सब बन्धन ॥

aroma®

PLASTICS

MFG. : QUALITY REPROCESSORS L.D., H.D., H.M., P.P.

16-17 Gopal Estate, Opp. Vallabhnagar, Odhav Road, Ahmedabad - 382 415 Guj. India
Tel. : + 91 79 22870270 Tele Fax : 079 - 22891528
Email: aromaplastic@yahoo.co.in

AROMA ENTERPRISE | APEX POLYMERS | Max POLYMERS | AROMAX INDUSTRIES

Bherulal 93777 57142 | Ramesh 98252 57141 | Bhikam 98251 69596 | Viral 99986 08790

पूत के पग पालणे में

सुभाष चन्द्र बोस 8-10 वर्ष के बालक ही थे। एक रात एकाएक माँ की बगल से उठकर भूमि पर जा सोये। माँ ने पूछा—''क्या करता है रे?'' जमीन पर क्यों जाकर सो गया? सुभाष बोले—''आज गुरुजी ने बताया था कि हमारे पूर्वज ऋषि-मुनि तथा कर्मयोगी भूमि पर सोते थे और कठोर जीवन जीते थे। मैं भी कर्मवीर तथा ऋषि बनूँगा।

अभी से कठोर जीवन का अभ्यास कर रहा हूँ।'' माँ-बेटे के वार्तालाप को पिता भी सुन रहे थे इसलिये बीच में ही बोले—''सुभाष! देखो, भूमि पर सोना ही पर्याप्त नहीं है। पढ़ाई करना और आगे चलकर समाज की सेवा करना तुम्हारे जीवन का लक्ष्य होना चाहिये। उठो! बेटा, अभी तो तुम माँ के पास जाकर सो जाओ।'' सुभाष ने पिताजी की बात को गाँठ बाँधकर गले से नीचे तक उतार लिया। आई.सी.एस. की परीक्षा उत्तीर्ण की।

अधिकारी बनने का अवसर आने पर उन्होंने कहा—''बाल्यकाल में ही मैंने जीवन का लक्ष्य निश्चित कर लिया था—मातृभूमि की सेवा करूँगा और महान् बनूँगा। मुझे नहीं चाहिये यह अंग्रेजों की नौकरी।'' कठोर जीवन, उच्च शिक्षा एवं देश सेवा, इन तीनों का संगम कर दिखाया सुभाष चन्द्र बोस ने। बचपन का दृढ़ संकल्प उन्होंने जीवनपर्यन्त निभाया। ऐसे महामानव भारत माता के सपूत को श्रद्धा पूर्वक नमन।

रोशन लाल गोखरू

दया का भाव ही श्रेष्ठता का गुण

सर्द ऋतु की अँधेरी रात में सुनसान सड़क पर एक करोड़पति की कार पेड़ से टकरा गई, सेठ गम्भीर घायल होकर सड़क पर पड़ा और सहायता के लिये चिल्लाया—बचाओ!

बचाओ!! मैं तो मर जाऊँगा। आवाज सुनकर पास ही झोंपड़े से निकलकर गरीब किसान आया, उसे देखकर सेठ गिड़गिड़ाया, मुझे बचाओ भाई, वरना इस सर्द रात में बेमौत मारा जाऊँगा। किसान को दया आई, करोड़पति सेठ को उठा झोंपड़ी में ले गया, सर्द रात में अपनी कम्बल उसको देकर उसको सुलाया।

सुबह सेठ ने अपने परिवार वालों को बुलाया, किसान को धन्यवाद दिया और चल दिया। कुछ समय बाद किसान की सेठ से मुलाकात हुई तो किसान ने अपने बच्चे की फीस के लिये मदद हेतु निवेदन किया।

पहले तो सेठ ने किसान को पहचानने से ही इन्कार कर दिया, फिर बड़बड़ाया—कहाँ-कहाँ से उठकर चले आते हैं? अगर मैं इस तरह मदद करता रहा तो एक दिन कंगाल हो जाऊँगा।

यह सुनकर किसान का दिल बोल उठा—सेठजी कंगाल तो आप उसी दिन हो गये थे, जब सड़क पर पड़े-पड़े अपने जीवन की भीख माँग रहे थे। आपका धन आपको मुबारक, मेरा तो ऊपर वाला है, परन्तु याद रखना समय बलवान है। अच्छों-अच्छों को राजा से रंक एवं रंक से राजा बना देता है। कहता हुआ गरीब किसान वहाँ से चला गया।

शिक्षा—व्यक्ति के मन में दया का भाव है तो वह श्रेष्ठ कहलाने योग्य होता है। अगर दया भाव नहीं है तो कितना भी धनी होने पर भी श्रेष्ठ कहलाने का हकदार नहीं होगा।

किसान के गरीब होते हुये भी मन में दया का भाव था जबकि सेठ धनी होते हुए भी अहंकारी है, मानवता नहीं है, मन में दया का भाव नहीं है तो वह श्रेष्ठ नहीं हो सकता।

जय भिक्षु अर्हम् जय महाश्रमण

SUPER GROUP

Kitply

PLY MANE KITPLY

KITPLY INDUSTRIES LTD.
'White House', 'A' Block, 4th Floor, 119, Park Street, Kolkata-700 016
Ph: 033-22293340/42/43/44 Fax: 033-22495009, CABLE: KITPLY
Email: corporate@kitply.com / mumbai@kitply.com

SUPER PLYWOOD

Distributor :
Plywood, Laminates, Timber & all kind of Interior Products.

An ISO 9001 : 2008 Certified Company

Super Bond®

Aluminium Panel Sheet

Bhupesh Kothari : 9892199920

superbond@superbondindia.co.in
www.superbondindia.co.in

With best compliments from :

Surendra Kothari
Manish Kothari
Bhupesh Kothari

SUPER SAMRAT™
Exterior Claddings

कोई अन्याय नहीं किया

आकुल

भिक्षा लेकर लौटते हुए एक शिक्षार्थी ने मार्ग में मुर्गे और कबूतर की बातचीत सुनी। कबूतर मुर्गे से बोला—''मेरा भी क्या भाग्य है? भोजन न मिले, तो मैं कंकर खाकर भी पेट भर लेता हूँ। कहीं भी सींक, घास आदि से घोंसला बनाकर रह लेता हूँ। माया मोह भी नहीं, बच्चे बड़े होते ही उड़ जाते हैं। पता नहीं ईश्वर ने क्यों हमें इतना कमजोर बनाया है? जिसे देखो वह हमारा शिकार करने पर तुला रहता है। पकड़कर पिंजरे में कैद कर लेता है। आकाश में रहने को जगह होती तो मैं पृथ्वी पर कभी नहीं आता।''

मुर्गे ने भी जवाब दिया—''मेरा भी यही दुर्भाग्य है। गंदगी में से भी दाने चुन-चुनकर खा लेता हूँ। लोगों को जगाने के लिए रोज सवेरे-सवेरे बेनागा बाँग देता हूँ। पता नहीं ईश्वर ने हमें भी क्यों इतना कमजोर बनाया है? जिसे देखो वह हमें, हमारे भाइयों से ही लड़ाता है। कैद कर लेता है। हलाल तक कर देता है। पंख दिये हैं, पर इतनी शक्ति दी होती है कि आकाश में उड़ पाता तो मैं भी कभी पृथ्वी पर नहीं आता।''

शिष्य ने सोचा कि अवश्य ही ईश्वर ने इनके साथ अन्याय किया है। आश्रम में आकर उसने यह घटना अपने गुरु को बताई और पूछा—''गुरुवर, क्या ईश्वर ने इनके साथ अन्याय नहीं किया है?'' ऋषि बोले—''ईश्वर ने पृथ्वी पर मनुष्य को सबसे बुद्धिमान प्राणी बनाया है। उसे गर्व न हो जाये, इसलिये शेष प्राणियों में गुणावगुण देकर, मनुष्य को उनसे, कुछ न कुछ सीखने का स्वभाव दिया है। वह प्रकृति और प्राणियों में संतुलन रखते हुए, सृष्टि के सौंदर्य को बढ़ाए और प्राणियों का कल्याण करे।''

मुर्गे और कबूतर में जो विलक्षणता ईश्वर ने दी है, वह किसी प्राणी में नहीं दी है। मुर्गे जैसे छोटे प्राणी के सिर पर ईश्वर ने जन्मजात राजमुकुट की भाँति कलगी दी है। इसलिए उसे ताम्रचूड़ कहते हैं। अपना संसार बनाने के लिए उसे पंख दिये हैं किन्तु उसने पृथ्वी पर ही रहना पसंद किया। वह आलसी हो गया। इसलिए लम्बी उड़ान भूल गया। वह भी ठीक है, पर भोजन के लिए पूरी पृथ्वी पर उसने गंदगी ही चुनी। गंदगी में व्याप्त जीवाणुओं से वह इतना प्रदूषित हो जाता है कि उसका शीघ्र पतन ही सृष्टि के लिए श्रेयस्कर है। बुराई में से भी अच्छाई को ग्रहण करने की सीख, मनुष्य को मुर्गे से ही मिली है। इसलिए ईश्वर ने उसके साथ कोई अन्याय नहीं किया है। ''किन्तु ऋषिवर, कबूतर तो बहुत ही निरीह प्राणी है। क्या उसके साथ अन्याय हुआ है?'' शिष्य ने पूछा।

शिष्य की शंका का समाधान करते हुए ऋषि बोले—''पक्षियों के लिए ईश्वर ने ऊँचा स्थान खुला आकाश दिया है, फिर भी जो पक्षी के आकर्षण से बँधा, पृथ्वी पर विचरण पसंद करता है, तो उस पर हर समय खतरा तो मँडरायेगा ही। प्रकृति ने भोजन के लिए अन्न बनाया है, फिर कबूतर को कंकर खाने की कहाँ आवश्यकता है। कबूतर ही है, जिसे आकाश में बहुत ऊँचा व दूर तक उड़ने की सामर्थ्य है।

इसीलिये उसे ''कपोत'' कहा जाता है। वह परिश्रम करे, उड़े, दूर तक जाये और भोजन ढूँढ़े। ''भूख में पत्थर भी अच्छे लगते हैं'' कहावत, मनुष्य ने कबूतर से ही सीखी है, किन्तु अकर्मण्य नहीं बने। कंकर खाने की प्रवृत्ति से उसकी बुद्धि कुंद हो जाने से कबूतर डरपोक और अकर्मण्य बन गया। यह सत्य है कि पक्षियों में सबसे सीधा पक्षी कबूतर ही है, किन्तु इतना भी सीधा नहीं होना चाहिए कि अपनी रक्षा के लिए उड़ भी नहीं सके।

बिल्ली का सर्वप्रिय भोजन चूहे और कबूतर हैं। चूहा फिर भी अपने प्राण बचाने के लिए पूरी शक्ति से भागने का प्रयास करता है, किंतु कबूतर तो बिल्ली या खतरा देखकर आँख बंद कर लेता है और काल का ग्रास बन जाता है। जो प्राणी अपनी रक्षा स्वयं न कर सके, उसका कोई रक्षक नहीं। कबूतर के पास पंख हैं, फिर भी वह उड़कर अपनी रक्षा नहीं कर सके, तो यह उसका दोष। ईश्वर ने उसके साथ भी कोई अन्याय नहीं किया है।

In Memory of

Late Sh. Sohan Lal Kataria

Wife Smt. Sunderbai

Son Manubhai, Praveenkumar, Janak, Yogesh,

Vimal, Vikash, Vinay, Vishal, Gouraw, Chirag,

Manav, Yash Kataria

Banglore, Mysore, Bemali (Raj.)

MD : VIMAL KATARIA (JAIN)
MD : MADHU KATARIA (JAIN)

VAISHNODEVI LUSH GREENS PRIVATE LIMITED

No. 13, Muthachari Industrial Estate, Nayandhalli,
Mysore Road, Bangalore - 560 039
e-mail : info@vaishnodeviproperty.com,
Phone : 080-23146429, Mobile : 96207 99999

जलेबी

राहुल देव

सत्येन्द्र की शहर के मार्किट में मिठाइयों की दूकान थी। इसी इलाके में तेजतर्रार दारोगा की एकदम नयी पोस्टिंग थी, वह सुबह-सुबह ही उधर आ निकला। सत्येन्द्र की दूकान पर ताजी छन रही जलेबी देखकर वह अपने को रोक न सका। इधर-उधर की बातें करते हुए उसने ढाई सौ ग्राम जलेबियाँ लीं और अखबार के पन्ने उलटते-पलटते सब चट कर गया। बोनी न होने के बावजूद उसके रोबीले व्यक्तित्व को देखकर सत्येन्द्र कुछ बोल न सका। चलते-चलते दारोगा उसकी दूकान के बोर्ड की ओर देखकर भारी-भरकम आवाज में बोला, 'सत्येन्द्र स्वीट होम एंड आर्डर सप्लायर्स, अच्छा नाम है। हाँ तो सतेन्द्र भाई चलता हूँ कभी काम पड़े तो याद करना।'

सत्येन्द्र ने सिर हिलाया और दारोगा जी खींसे निपोरते हुए चल दिए।

उतने में इलाके का नम्बरी भाई उसकी दूकान पर आ धमका। उसने एक किलो जलेबियाँ तौलायीं और बगैर पैसे दिए जाने को मुड़ा। सत्येन्द्र ने उसे रोका तो वह आँखें तरेरते हुए बोला, 'ज्यादा चूँ-चपड़ नई करने का, शाम को भाईलोग इदर आयेगा तो तेरा पईसा मिल जायेगा। अम अराम की नई खाता, अभी इदर पैसे नई हैं समझा क्या!'

सहसा सत्येन्द्र को पता नहीं क्या हुआ और उसने गला फाड़कर जाते हुए दारोगा साब को आवाज लगायी। साहब जी फौरन लौट के आये। सत्येन्द्र ने जल्दी-जल्दी उन्हें सब स्थिति बता डाली। इस पर दारोगा जी भाई के ऊपर गर्जे, 'क्यों बे! बाप का माल समझ रखा है क्या कि जब मनचाहा मुँह उठाते हुए चले आये। अब बहुत दिन ऐश कर लिए तुम सब, अब अन्दर जाने का टेम आया है।' यों कहकर उन्होंने भाई की बाँह पकड़ी। इस पर भाई कुछ दबा लेकिन निर्भीकता से बोला, 'अरे साब क्यों मजाक करते हो, इदर कल शाम से पुनः भूका है एकदम सच बात, खा लेन दो न! आप भी खाओ, अम आपको कैसे भूल सकता है, वो क्या है न कि इदर मौसमी बेरोजगारी चल रई है सो अपुन का मामला एकदम ठंडा है नई तो अपन आपके सामने तुरंत एकदम फंटास गाँधी जी को भेंट करता साब, अम इतना गिरा नई है।'

दारोगा साब उसे डाँटते हुए बोले, 'चल-चल जलेबी रख! ज्यादा बातें न बना और दफा हो जा यहाँ से, दुबारा नजर आया तो अन्दर कर दूँगा, समझा!'

'ठीक है साब, जैसी आपकी मर्जी, कहीं और चला जाऊँगा। मैं भूल गया था कि यह आपका इलाका है!' यों कहकर वह वहाँ से भागा।

दारोगा साब ने हँसते हुए सत्येन्द्र से कहा, 'अरे मेरे होते हुए तुम्हें चिंता करने की कोई जरूरत नहीं है, ये तो रोज का धंधा है और हाँ आधा किलो जलेबी जरा और पैक कर दो घर के लिए तुम्हारी भाभी जी और बच्चों को यहाँ की जलेबियाँ बहुत पसंद हैं।'

सत्येन्द्र क्या कहता, चुपचाप उसने आधा किलो जलेबियाँ तौलीं और दारोगा साब को ससम्मान विदा किया। सत्येन्द्र उन्हें जाता हुआ देखता रहा फिर उसने हिसाब लगाया कि उसकी ढाई सौ ग्राम जलेबियाँ बच गयी थीं, वह इसके आगे कुछ और भी सोचना चाहता था लेकिन सोच न सका। क्या करना उसे यह सोच वह चुपचाप अपने काम में लग गया।

मैं कुछ होना चाहता हूँ जब तक यह भाव नहीं जागता
पुरुषार्थ का द्वार नहीं खुल सकता।

आचार्य तुलसी

शुभकामनाओं सहित

अमरचन्द धरमचन्द लुंकड़

चेन्नई–राणावास

अब जागो

मदनलाल बैंगानी

आओ बच्चो! बैठो।
सुनाता हूँ एक कहानी।
कहानीकार थी पहले,
घर की दादी, नानी।

अब हो गया है टी.वी.,
बात हो गई है पुरानी।
दादी-नानी बेचारी,
हो गयी आज बेमानी।

कम्प्यूटर का है कमाल,
दुनिया बनी दीवानी।
मोबाइल की न पूछो,
फेर दिया सब पर पानी।

इंटरनेट का नंगा नाच,
शालीनता की कुर्बानी।
अच्छों-अच्छों की अक्ल,
बनती जा रही बेगानी।

टेक्नोलॉजी परोस रही,
काम-वासना की थाली।
शैतानियत पनप रही,
इंसानियत खाली-खाली।

इंटरनेट के जाल में,
जाल के साथ जाली।
बदमाशों की बुद्धिमानी,
रोज घर बैठे दीवाली।

शिल्प का हो सदुपयोग,
हालत रहे न माली।
गुनाहगार गजब के हैं,
सूरत उजली नीयत काली।

जागो बच्चो! अब जागो।
करने देश की रखवाली।
दगाबाजों का कर खात्मा,
लानी है खुशहाली।

कहानी एक अजन्मी की

ममता वर्मा

हँस रही थी, खेल रही थी,
स्वस्थ थी अपने घरौंदे में।
दुनिया देखने के, इस जंजाल से बाहर आने के,
अनगिनत सपने थे इन आँखों में।
लेकिन चमचमाती बिजली, कड़की जब मेरे पास में।
सिकुड़ गई मैं डर के मारे, छिपने लगी किसी कोने में।
बिनती करने लगी, भावी जन्मदात्री से,
माँ! मुझ पर इतना कहर मत ढाओ।
मैं जीना चाहती हूँ, ये दुनिया देखना चाहती हूँ।
मैं तुम पर बोझ नहीं बनूँगी माँ,
पापा का नाम रोशन करूँगी।
माँ मुझमें ही तो देवियाँ हैं।
तुम भी तो रूप उसी का हो।
मुझमें ही कल्पना चावला है,
मुझमें ही इंदिरा गाँधी है,
मुझमें ही लक्ष्मीबाई है।
इतनी नफरत पापा मुझसे क्यों करते हैं माँ?
अंश आपका हूँ फिर भी,
घर-आँगन महकाऊँगी मैं,
संबल बनूँगी आपका मैं।
अचानक आवाज बदल गई चीख में।
जब धारदार हथियार चीर गया नन्हीं को,
चीख निकली—
क्यों मेरा हक छीना जाता है?
क्यों मुझे जग में आने से पहले ही मार दिया जाता है?
क्यों मिटा दी जाती है, हस्ती मेरी संसार से?
क्या यही है मेरा अस्तित्व?
क्या यही है मेरा बचपन, क्या यही है मेरी जवानी?
आखिर क्यों बनी मैं लड़की?
क्या कोई तैयार है, इस सवालों के जवाब को?

24/7
HI-FOCUS MAXIMUM SECURITY
HI-FOCUS
Enhancing your sixth sense
ANALOG | HDCVI | IP | BIO METRIC | VIDEO DOOR PHONE
WE MAKE TECHNOLOGY THINK!
QUALITY
SECURITY
TECHNOLOGY
CREATIVITY
Applications
www.hifocuscctv.com
KWALITY TELECOM
No:4,Periyar Plaza,
Second Floor, Wallers Road,
Mount Road, Chennai -600002.
Tel Ph : 044 - 43227666/999
KWALITY INFOTECH
Door No: 2A, Gf-1, Gf-20,
Wallers Road, Mount Road,
Chennai - 600002.
Ph: 044 - 43864554/ 555
KET SECURED
1/20, Narasingapuram Street,
Anjuman Building,
Mount Road, Chennai-600 002.
PH : +91 8220048947
044 42184215
KWALITY SECURITY SYSTEMS
No: 54, Brijmohan Nagar,
1st Floor, Darsiganj,
New Delhi - 110 002.
PH : 09810990886
011-49753333 / 47534805

कहानी एक कॅरियर मंत्र अनेक

साध्वी डॉ. ललितरेखा

हकीकत में जिन्दगी इक फूल है, खिल गया तो वाह, मुरझा गया तो आह। इस जिन्दगी रूपी सुमनों को खिलाना सब चाहते हैं; लेकिन बिना गुर (कॅरियर-मंत्र) के जीवन-वाटिका निस्तेज बन जाती है। प्राचीन कथा साहित्य में कॅरियर बनाने के महामंत्र भरे पड़े हैं। 18-19वीं सदी में नानी-दादी, कहानियों के माध्यम से हमें अच्छे जीवन-मंत्र देती थीं। उसकी झलक हम इस कथा में देख सकेंगे—एकदा एक खरगोश एवं एक कछुए की दौड़ होती है, खरगोश को अपने पर गर्व था कि मैं तेज धावक हूँ, शीघ्र ही मंजिल प्राप्त कर लूँगा, ऐसा सोचकर प्रमादवश वह रास्ते में ही नींद ले लेता है। इधर कछुआ उत्साही एवं कर्मठ था। उसने सोचा—

'हिम्मते मर्दां तो मदद दे खुदा, बेहिम्मत बंदा तो बेजार खुदा।'

वह निरन्तर धीरे-धीरे चलकर मंजिल पहुँच जाता है। खरगोश हार जाता है अतः कहा गया—

जिन्दगी की दौड़ में वे लोग पीछे रह गए।
जो कभी दौड़े नहीं, दौड़ेंगे कहते रह गए।।

खरगोश हार से अपमानित हुआ, बदला लेने की उसने सोची, कछुए को उसने ललकारा, कछुआ दोबारा दौड़ने के लिए तैयार नहीं हुआ क्योंकि वह अच्छी प्रकार जानता था कि शक्तिशाली शत्रु एक बार हार जाए तो उससे पुनः टक्कर नहीं लेना चाहिए। खरगोश ने अपनी सारी बिरादरी को इकट्ठा कर एक मीटिंग बुलाई। खरगोशों के समूह ने कछुए को पुनः दौड़ने के लिए बाध्य कर दिया। क्योंकि कछुआ अकेला था। खरगोश बहुत थे। अतः कहा गया है—संगठन में शक्ति होती है अर्थात् **Unity is Strength.** कछुए ने सोचा शत्रु बलवान है तो अवसर देखकर ही काम करना चाहिए। साम, दाम, दण्ड, भेद से काम लेना ही पड़ेगा। कछुए ने शर्त रखी कि इस बार दौड़ का मार्ग मैं तय करूँगा, तभी दौड़ करूँगा। सब खरगोशों ने बात मान ली। कछुए ने अपनी खूबियों एवं शत्रु की कमजोरियों को ध्यान में रखकर ऐसे मार्ग का चयन किया जिसके बीच छोटी नदी पड़ती थी। अब दोबारा रेस पुनः शुरू हुई, खरगोश शीघ्र एवं सतत दौड़ा किन्तु आगे नदी देखकर घबराया और नदी किनारे पर बैठ गया। इधर कछुआ वहाँ पहुँचा, खरगोश की हार देखकर वह मुस्कराने लगा। इतने में अचानक शेर आ धमका। उसने कहा दुनिया में तुम दोनों की कथा मशहूर है। अब मैं भी सुर्खियों में आना चाहता हूँ। तुम दोनों मेरे साथ रेस करो, नहीं तो मैं तुम्हें खा जाऊँगा। कछुए ने शेर की प्रशंसा करते हुए मृदु वचनों से कहा—महाराज! आप तो महान हैं, आपके सामने हम तो बहुत छोटे हैं, कृपया दौड़ का पथ हमें चुनने की आज्ञा प्रदान करें। मिष्ट वचनों को सुनकर शेर का दिल बाग-बाग हो गया। शेर ने शर्त मान ली। अवसर का लाभ उठाते हुए खरगोश एवं कछुए ने सोचा—

समय लाभ सम लाभ नहीं, समय चूक सम चूक।
चतुरन चित्त रहिमन लगी, समय चूकी की हूक।।

किसी ने ठीक ही कहा है—'अवसरज्ञ ही सर्वज्ञ' अर्थात् अवसर को जाननेवाला सब कुछ जान सकता है। यह कथन शत-प्रतिशत सही साबित हो रहा है—

जो समय की लीला पहचान ले, वह रास रचाया करता है।
समय किसी का दास नहीं, वह दास बनाया करता है।।

उन दोनों ने समय की नजाकत को देखकर पुनः रेस उसी रास्ते से तय की। विजय का खिताब पाने हेतु खरगोश एवं कछुआ एक-दूसरे के शत्रु होते हुए भी अब दोनों ने मित्रता कर ली। सामंजस्यपूर्वक कार्य करने की योजना को क्रियान्वित करते हुए पुनः रेस में सम्मिलित हुए। पहले खरगोश की पीठ पर कछुआ बैठा और नदी तक पहुँच गए। बाद में नदी के किनारे पर कछुए की पीठ पर खरगोश बैठा और कछुए की मदद से नदी पार कर ली। जैसे ही शेर नदी के किनारे पहुँचा पानी को देखकर अपनी हार पर पश्चाताप के आँसू शीघ्र बहाने लगा। एक-दो दिन रोने के बाद सोचा—

मेरो चिन्त्यो होत नहीं, हरि को चिन्त्यो होत।
हरि को चिन्त्यो हरि करे, मैं रहूँ निश्चिन्त।।

इधर काफी देर इन्तजार करने के बाद कछुए एवं खरगोश ने समझ लिया कि आखिर शेर हार गया और हम मरने से बच गए। कछुए ने खरगोश को सफलता का रहस्य बताते हुए कहा—

आलस्य में जीएँ और अमृत भी पीएँ, तो जहर का पीना होता है।
मेहनत का पसीना जब गिरता है, तो पत्थर भी नगीना होता है।।

इस कहानी से हमें अनेक कॅरियर बनाने के मंत्र मिलते हैं जैसे—कार्य की सफलता हेतु हममें निम्न गुण होने आवश्यक हैं—

- कछुए की तरह निरन्तर श्रम एवं समर्पण जरूरी है।
- घमण्ड नहीं करना।
- शक्तिशाली शत्रु को भी बल से नहीं, बुद्धि से जीता जा सकता है।
- संगठन में शक्ति होती है।
- शक्तिशाली शत्रु से बार-बार टक्कर नहीं लेनी चाहिए।
- रणनीति (योजना) बनाकर कार्य करने से सफलता मिलती है।
- अपनी खूबियों को, शत्रु की कमजोरियों का फायदा उठाओ।
- शत्रु को कमजोर मत समझो।
- मरने से अच्छा है, संघर्षपूर्वक जीना।
- दूसरों की प्रशंसा समय पर करो।
- मृदु वचनों से शत्रु को भी मित्र बनाया जा सकता है।
- शत्रु बलवान हो तो टीम बनाकर कार्य करो।
- अवसर पर शत्रु को भी मित्र बनाओ।
- हार-जीत, भाग्य पर छोड़ दो।
- हानि-लाभ, यश-अपयश, जीवन-मरण को भगवान पर छोड़ दो, निराश मत बनो। इन कॅरियर मंत्रों को जीवन में उतारकर सफलता का प्रयास करें।

GOLD : #134, N.S.C.Bose Road,Sowcarpet,Chennai-600079, Phone: 044 25392854, 25382415. # 144 , Purasaiwakkam High Road Kellys Chennai - 600010, Phone : 044 - 26430168 . DIAMOND & PLATINUM : #144 , Purasaiwakkam High Road Kellys Chennai -600010,Phone:044 -26430168. #334 , Sadhasivam Complex Mint Street, Sowcarpet Chennai-79, Ph :044 42730063.SILVER : #144 , Purasaiwakkam High Road Kellys Chennai-10,Phone : 044 26430168. #169, Diamond Star, Mint street, Chennai-600079, Ph:044 43186143 (Centrex No:8143).

COMING SOON... # 122, Cathedral Road Chennai - 86, (Opp Stella maris College)

Mumbai Bangalore Chennai Cochin Coimbatore Hydrabad Kolkatta Surat Singapore

e-mail: pgpmukesh@yahoo.com, web: www.prakashdiamond.com

बच्चों को सरल तरीके से समझायें

तारा राखेचा

बच्चे सरल व मन के सच्चे होते हैं। बच्चों को सरल तरीके से समझाने के लिये कथा एक माध्यम है। कथाएँ नन्हें-नन्हें दीपकों की भाँति वह कार्य कर लेती हैं जो सूर्य से भी नहीं हो पाता। पहले रात्रि में घर के सब बच्चे इकट्ठे होकर नानी-दादी से कहानियाँ सुनने का इन्तजार करते थे, परन्तु आज उनकी जगह ले ली है मोबाइल, टी.वी. ने। दो महीने के बच्चे की आँखें टी.वी. की तरफ रहेंगी क्योंकि संगीत की मधुर लहरी व रंग-बिरंगे चित्र बच्चों को आकर्षित करते हैं। ज्ञान के मर्म तक पहुँचने के लिये अनेक सीढ़ियाँ हैं तथापि बाल, युवा और वृद्ध सभी के लिये कहानियाँ सरल मार्ग हैं। उदाहरण के द्वारा बात हृदयंगम हो जाती है। प्राचीन समय में एक साम्राज्य की विचित्र प्रथा थी, जो भी सम्राट बनेगा उसके शासन की अवधि पाँच वर्ष की होगी, शासन अवधि की समाप्ति होने पर उसे पास के भयंकर जंगल में छोड़ दिया जाता था जहाँ सिर्फ मौत के अतिरिक्त कुछ भी नहीं होता था। इसी परम्परा की शृंखला में एक सम्राट को जब राजगद्दी पर बिठाया गया तो सम्राट खुशी के बदले उदास हो गया। सम्राट प्रतिदिन महल के कंगूरों पर से उस जंगल को देखता और भीतर से काँप जाता। ऐसी भयभीत अवस्था में उसका मस्तिष्क साम्राज्य की व्यवस्था में लग नहीं पाता।

अनुभवी मंत्री ने एक दिन उससे कहा कि महाराज! पाँच वर्ष की लम्बी अवधि में आप समस्त जंगलों को कटवाकर वहाँ पर एक नया साम्राज्य स्थापित करवा दीजिये। उस जंगल को अभी से शहर के रूप में आबाद कर दीजिये ताकि भविष्य का खतरा स्वयमेव टल जाएगा। सम्राट को यह सुझाव जँच गया, थोड़े समय में कार्य सम्पन्न हो गया। अब सम्राट प्रसन्नचित्त होकर साम्राज्य की व्यवस्था अच्छी तरह से करने लगा क्योंकि उसने चिन्ता का निवारण कर लिया था। यह कहानी हमारे जीवन की कहानी है, यदि भविष्य को उज्ज्वल बनाना है तो वर्तमान को सार्थक एवं सुव्यवस्थित करना होगा। कहते हैं बोध कथाएँ मंत्र की तरह छोटी होती हैं परन्तु कभी-कभी ऐसा समाधान देती हैं कि हम उसके आभारी हो जाते हैं। कहानी के प्रति मानव का सहज व स्वाभाविक आकर्षण है। कहानी कहने व सुनने की जिज्ञासा मानव में आदिकाल से रही है। वेद, उपनिषद्, महाभारत, आगम आदि की हजारों-लाखों कहानियाँ इस बात की साक्षी हैं। नैतिक एवं शिक्षाप्रद संवादों व बालकथाओं के माध्यम से बालकों में अच्छे-अच्छे संस्कार जागृत किये जा सकते हैं। यदि हम बच्चों को कहें कि झूठ नहीं बोलना चाहिए तो उन पर कोई खास असर नहीं होगा परन्तु वही बात हम कहानी के माध्यम से बतायें तो उन पर गहरा असर पड़ेगा। जैसे कि एक बच्चा जंगल में जोर-जोर से चिल्लाया कि भेड़िया आया, भेड़िया आया मुझे बचाओ, मुझे बचाओ। सब गाँव वाले भागकर उसे बचाने आये। उन्होंने देखा कि वह हँस रहा था, उसने कहा कि मैं तो मजाक कर रहा था। इस तरह उसने दो-तीन बार किया। चौथी बार जब सचमुच भेड़िया आया तो उसे कोई बचाने नहीं आया। सबने सोचा कि वह झूठ बोल रहा होगा। इस कहानी से हमें शिक्षा मिलती है कि झूठ नहीं बोलना चाहिये, कोई हम पर विश्वास नहीं करेगा और समय पर कोई मदद नहीं करेगा? इस प्रकार कहने से बच्चों के दिमाग में यह बात बैठ जाती है कि हमें झूठ नहीं बोलना चाहिये। ऐसी कहानियाँ मन की अंतरात्मा को झँकझोर देती हैं। ये हमारी भावनाओं और दैनिक जीवन का इतिहास होती हैं। वही कहानी सर्वोपरि होती है जो हमारे दिल को छू ले। जब हम महारानी लक्ष्मीबाई, महाराणा प्रताप, गाँधीजी आदि के विषय में कहानियाँ पढ़ते हैं तो हमें देश के प्रति भक्ति भावना उपजती है। इस तरह कहानियाँ जीवन को सफल बनाने की सहायक प्रेरणाओं का स्रोत हैं।

an Elite Choice
deserves a Masterpiece

Gangaa KOTECHA GROUP

ROYAL tatvam
2/3 BHK Luxury Apartments

2 & 3 BHK
PREMIUM RESIDENTIAL APARTMENTS

at

PATRAKAR COLONY MANSAROVAR JAIPUR

JDA APPROVED

Ultra-Luxurious 2 & 3 BHK Apartments at
VAISHALI NAGAR, JAIPUR

2 & 3 BHK Semi Furnished Premium Apartments at
PATRAKAR COLONY, MANSAROVAR, JAIPUR

2 & 3 BHK Semi Furnished Residential Apartments at
NARAYAN VIHAR, GOPAL PURA BY PASS, AJMER ROAD, JAIPUR

Gangaa KOTECHA GROUP

Office Address:
81-Gyan Vihar Colony, Nirman Nagar, Jaipur,
Ph.: 0141-4015550 |
Website: www.kotechagroup.org

For More Details Contact :
9001919111, 9001919222

500 वाँ अंक
सफर...
अर्द्धसहस्रांक

अगस्त, सितम्बर, अक्टूबर का संयुक्त अंक

विशेषांक प्राप्ति के लिए निम्न क्षेत्रीय वितरण प्रभारियों से अपने क्षेत्रानुसार सम्पर्क कर अपनी प्रति प्राप्त कर सकते हैं।

उत्तर भारत

दिल्ली	श्री एल.आर. भारती	दिल्ली	011-23210593
हरियाणा	श्री संजीव बैद	फरीदाबाद	98919 97478
	श्री दीपक पुगलिया	सिरसा	90175 19555
	श्री संजय जैन	हिसार	97290 92195
पंजाब	श्री कुलदीप जैन	लुधियाना	94170 35731
	श्री नवीन जैन	जगराओ	94179 62541
उत्तर प्रदेश	श्री अजय सेठिया	कानपुर	94150 44627

दक्षिण भारत

तेलंगाना	श्री नवीन सुराणा	सिकंदराबाद (हैदराबाद)	98491 34321
आन्ध्र प्रदेश	श्री संजय संचेती	विशाखापट्टनम	92912 92912
तमिलनाडु, केरल	श्री रमेश पटावरी	ईरोड़	94426 00853
	श्री रमेश डागा	चैन्नई	98401 36646
	श्री मुकेश मूथा	चैन्नई	97104 28995
	श्री भरत मरलेचा	चैन्नई	98407 63075
कर्नाटक	श्री राजेश चावत	बैंगलोर	98802 08600
	श्री राजेन्द्र छलानी	सिंधनूर	94481 20673

पूर्वोत्तर भारत

पश्चिम बंगाल	श्री पारस बांठिया	कोलकाता	98362 90909
	श्री सुभाष सिंघी	सिलीगुड़ी	99330 19210
उड़ीसा	श्री वीरेन्द्र जैन	तुषरा	94371 54830
	श्री विकास जैन	राउरकेला	94370 45808
बिहार, झारखंड	श्री राजेश बैद	किशनगंज	99552 99999
असम एवं पूर्वोत्तर	श्री संजय चोरड़िया	गुवाहाटी	98640 32611

पश्चिम भारत

राजस्थान	श्री छवि बैंगाणी	जयपुर	77370 80901
	श्री संजय चोरड़िया	गंगाशहर	94136 84270
	श्री धर्मेन्द्र डाकलिया	गंगाशहर	94141 37580
	श्री चमन दुधोड़िया	छापर	98299 98444
	श्री लक्की कोठारी	केलवा	94141 73328
	श्री विनोद मांडोत	उदयपुर	94141 66226
	श्री गजेन्द्र बोथरा	बोरावड़	94141 16841
	श्री संजीव जैन बाँठिया	हनुमानगढ़	94143 18554
	श्री ललित जीरावला	बालोतरा	94141 08309
गुजरात	श्री मुकेश गुगलिया	अहमदाबाद	98254 51442
	श्री किशोर भंसाली	सूरत	93746 14000
	श्री अनिल चिंडालिया	उधना	98251 46863

मध्य भारत

छत्तीसगढ़	श्री राकेश पोरवाल	भिलाई	98261 30290
मध्य प्रदेश	श्री तरीन मेहता	इन्दौर	98932 18000
	श्री पंकज पटवा	पेटलावद	99267 36923
मुम्बई	श्री जगत संचेती	मुम्बई	86526 21213
	श्री संदीप कोठारी	मुम्बई	98204 98881
	श्री तनसुख चोरड़िया	नवी मुम्बई	98202 97411
शेष महाराष्ट्र	श्री मनोज संकलेचा	पुणे	98222 74374
	श्री अनिल सांखला	जलगांव	98230 95738

अन्तर्राष्ट्रीय जोन	श्री सुरेश दुगड़	बिराटनगर (नेपाल)	89800 81111

श्री राजेश जम्मड़
प्रकाशन प्रभारी
मो. : 94350 11392

श्री अमित नाहटा
प्रकाशन पर्यवेक्षक
मो. : 99317 08149

श्री पंकज सिसोदिया
प्रकाशन सह-प्रभारी
मो. : 98211 16647

श्री नरपत कोचर
समिति सदस्य
मो. : 9898122390

श्री राजेश दुधेड़िया
समिति सदस्य
मो. : 93145 05098

श्री संदीप कोठारी
समिति सदस्य
मो. : 98204 98881

श्री सुनील जैन (दुगड़)
समिति सदस्य
मो. : 98310 38394

श्री प्रमोद भंसाली
समिति सदस्य
मो. : 94607 30420

नूतन चिंतन-नया विकास, युवकों में जागे विश्वास।

प्रकाशन सदस्यता फार्म

अखिल भारतीय तेरापंथ युवक परिषद्

प्रकाशन : युवादृष्टि ( )

अखिल भारतीय तेरापंथ टाइम्स ( )

(कृपया उपयुक्त कॉलम में (✓) करें)

नाम : .....

पता : .....

.....

फोन नं. : ..... मोबाइल नं. : .....

ई-मेल : .....

सदस्यता शुल्क : आजीवन (पन्द्रह वर्षीय) 3500 रुपये प्रत्येक ( ) त्रैवार्षिक 900 रुपये प्रत्येक ( )

शुल्क भुगतान विवरण : नगद ( ) चेक/डीडी ( )

चेक/ड्राफ्ट संख्या ..... दिनांक : .....

बैंक ..... शाखा .....

(जमा राशि की रसीद फार्म के साथ संलग्न करें)

कृपया यहाँ से काटें

दिनांक (हस्ताक्षर)

1. सदस्यता फार्म पूर्ण विवरण सहित निम्न पते पर भेजें :

अखिल भारतीय तेरापंथ युवक परिषद्, 'युवालोक', पोस्ट लाडनूं-341306, जिला-नागौर (राजस्थान)

दूरभाष : 01581-226114, ई-मेल : abtyp.ladnun@yahoo.in

2. बैंक विवरण (शुल्क जमा करने हेतु) : ओरिएन्टल बैंक ऑफ कॉमर्स, शाखा - लाडनूं

चालू खाता संख्या : 10272010002800

युवादृष्टि

बदले सबकी सृष्टि..

आज के
वैज्ञानिक युग में
हर जगह
तकनीक का
बोलबाला है
पढ़िये

आगामी अंक

तकनीक का नया ककहरा

आमंत्रण–रचनाएँ

''युवादृष्टि'' पत्रिका के आगामी विशेषांक के लिए सर्व चारित्रात्माओं एवं प्रबुद्ध लेखक/लेखिकाओं की रचनाओं का हम हार्दिक स्वागत करते हैं। रचनाकार अपनी गद्य/पद्य रचना लाइन वाले फुलस्केप पेज पर एक तरफ उचित मार्जिन रखकर ही भेजें। **कोरे पन्ने पर अस्त–व्यस्त लिखी रचनाओं पर ध्यान नहीं दिया जाएगा। सुंदर अक्षरों में लिखी या टाइप की गई रचनाओं को प्राथमिकता दी जाएगी।** आपकी रचनाएँ मौलिक होनी चाहिए। अप्रकाशित रचनाएँ वापस नहीं भेजी जाएँगी, रचनाकार स्वयं के पास एक प्रति अवश्य रखें एवं कार्यालय में भेजी गई रचनाओं के प्रकाशन विषय में पूछताछ ना करें।

आपके लेख एवं प्रोत्साहन प्रतिक्रियाएँ हमें लगातार प्राप्त हो रही हैं। पाठकों के ''युवादृष्टि'' के प्रति अपार स्नेह का हम अत्यंत सम्मान करते हैं।

''विशेष–आकर्षण''

- स्वास्थ्य विशेष
- अब तो जागें
- बच्चों की दुनिया
- कथा–बोध
- हमारी संस्कृति, हमारा इतिहास
- प्रबंधन–सूत्र

आगामी अंक के सम्भावित विषय

विषय	रचना भेजने की अंतिम तिथि
परिवर्तन का पथ	30 दिसम्बर, 2014
मन का मंथन	30 जनवरी, 2015

रचनाएँ भेजने का पता

SUDHIR CHORADIA
2040, Vijayvargia Complex, Ground Floor
Pitalio Ka Chowk, Johari Bazar, Jaipur-302003
Mobile : 098293-20571
e-mail : abtypyd@gmail.com

नोट : किसी भी प्रकार की पूछताछ व शिकायत के लिए :—
फोन करें : 011–23210593 या E-mail : suggestion.abtyp@gmail.com पर ई–मेल करें।
पता : अखिल भारतीय तेरापंथ युवक परिषद्, 210, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली–110002

B. C. JAIN (BHALAWAT), FCA, ACS, ICWA
Director

SUNRISE
HOUSING CONSTRUCTIONS LTD.

Sunbeam Chambers, Ground Floor, New Marine Lines,
Opp. Liberty Cinema, Mumbai 400 020 India
Tel. No.: 022-22096000/ 1/ 4 Fax: 022-22095000
Mobile: 09821117813 Email: cabcjain@gmail.com

D.P. Regd. No. DL (c)-01/1271/2012-14
Regd. No. R.N.I. 25988/73
Publish Dt. 27 Previous Month
Posted at New Delhi PSO Dt. 01-02 Every Month

Stone Studio
By Galaxy

INTRODUCING
THE LARGESTCOLLECTION
OF NATURAL STONES

Welcome to the Galaxy of Indian Natural Stones. Our stones are used in 46 countries, now introducing in India Stone Studio with the display of their applications.

Natural stones can be used for interior, exterior and landscaping. Galaxy International produces wide variety of natural stone such as slate, sandstone, quartzite and limestone in wide range of finishes like hand cut paving, machine cut tiles, mosaic border, tumble, walling stone, sandblasted surface, polished, honed surface, artifacts, six side sawn pavings, wall stone, shoot blasted pavings, vintage finish etc.

Stone Studio By Galaxy
SP 5 Mansarovar Industrial Area, Jaipur 302020
Tel : +91 141 4027819
Mobile: +91 9829052315
Email: Pratapdaga@gmail.com / stonetrack@sanchamet.in
Website: www.stonestudio.in / www.galaxyimpex.co.in

Light Studio
By Galaxy

We bring to you, one of a kind Light showroom with more than 800 designer lights to choose from in your own city.

BIGGEST LIGHT SHOWROOM
IN RAJASTHAN

Light Studio By Galaxy
SP 5 Mansarovar Industrial Area, Jaipur 302020
Tel : +91 141 4027819
Mobile: +91 9829052315 / +91 9828252000
Email: lightstudio.by.galaxy@gmail.com
stonetrack@sanchamet.in

Daulat, Kailash, Pratap, Abhineet Daga (Jaipur - Sri Dungargarh)

अखिल भारतीय तेरापंथ युवक परिषद् की ओर से मुद्रक एवं प्रकाशक – अविनाश नाहर द्वारा जे.के. ऑफसेट, 17, डी.एस.आई.डी.सी. रोहतक रोड, नांगलोई, दिल्ली से मुद्रित तथा 210, दीनदयाल उपाध्याय मार्ग, नई दिल्ली-2 से प्रकाशित। सम्पादक-अविनाश नाहर